हिन्दी प्रयोग

रामचंद्र वर्मा
बदरीनाथ कपूर

हिन्दी प्रयोग

मूल लेखक

रामचंद्र वर्मा

संशोधन एवं परिवर्धन

बदरीनाथ कपूर

साहित्य रत्नमाला कार्यालय, वाराणसी
की ओर से

लोकभारती प्रकाशन

इलाहाबाद नयी दिल्ली पटना

इस पुस्तक के सर्वाधिकार सुरक्षित हैं। प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रॉनिक अथवा मशीनी, किसी भी माध्यम से, अथवा ज्ञान के संग्रहण एवं पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा, किसी भी रूप में, पुनरुत्पादित अथवा संचरित-प्रसारित नहीं किया जा सकता।

मूल्य : 40 रुपये

© डॉ० बदरीनाथ कपूर

नवीन संशोधित संस्करण : 2007

प्रकाशक : साहित्य रत्नमाला कार्यालय, वाराणसी की ओर से
लोकभारती प्रकाशन
दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-1 द्वारा प्रकाशित

शाखाएँ : 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110 002
अशोक राजपथ, साइंस कॉलेज के सामने, पटना-800006

वेबसाइट : www.lokbhartiprakashan.com
ई-मेल : info@lokbhartiprakashan.com

मुद्रक : इण्डियन प्रेस प्रा० लिमिटेड
इलाहाबाद-211001

आवरण : राजकमल स्टूडियो

HINDI PRAYOG
by Ram Chandra Verma

ISBN : 978-81-8031-129-1

हिंदी के उन नवयुवक और होनहार
विद्यार्थियों को
जिनसे मातृभाषा और जन्मभूमि को
बड़ी-बड़ी आशाएँ हैं और
जो
हिंदी का स्वरूप विशुद्ध और निर्मल
कर सकते हैं,
यह पुस्तक बहुत ही आशापूर्वक
समर्पित है ।

विषय-सूची

प्रथम संस्करण की भूमिका

आज-कल सारे भारत में हिंदी का जितना अधिक प्रचार है, उतना और किसी भाषा का नहीं है, और लक्षणों से जान पड़ता है कि बहुत जल्दी ही वह समय आने वाला है, जब हिंदी का प्रचार देश के कोने-कोने में और घर-घर में हो जाएगा। जितने थोड़े समय में हिंदी का जितना अधिक प्रचार हुआ है, उतने थोड़े समय में कदाचित् ही संसार की किसी और भाषा का उतना अधिक प्रचार हुआ हो। यह हमारे लिए परम प्रसन्नता और सौभाग्य की बात है।

पर इसके साथ ही एक बहुत अधिक खेद और दुर्भाग्य की बात भी लगी हुई है। वह यह कि हम हिंदी लिखने वाले अपनी भाषा की शुद्धता का कुछ भी ध्यान नहीं रखते। हिंदी के बहुत अधिक लेखक मनमानी भाषा लिखते हैं और मनमाने प्रयोग करते हैं। ऐसा जान पड़ता है कि लोग समझते हैं कि हम जो कुछ लिख दें, वही हिंदी है। उनका यह समझना इसलिए बहुत-कुछ ठीक भी हो सकता है कि प्रायः उनकी भूलों की ओर कभी कोई ध्यान नहीं देता। ध्यान दे भी कौन ? यहाँ ईश्वर की दया से सभी एक-से हैं, बल्कि एक से एक बढ़कर हैं। यदि कोई दूसरों की दस भूलें दिखलाए, तो दूसरे उसकी सौ भूलें दिखला सकते हैं। इसलिए भाषा की अशुद्धियों के संबंध में सब लोग मौन रहना ही अच्छा समझते हैं।

पर क्या यह मौन कभी हमारे लिए या हमारी भाषा के लिए अच्छा हो सकता है ? मातृभाषा माता के समान होती है। क्या उसका स्वरूप बिगाड़ने वाले कभी सपूत कहला सकते हैं, या कभी उनका कल्याण हो सकता है ? चाहिए तो यह कि हम अपनी भाषा का स्वरूप इतना अधिक विशुद्ध और मनोहर रखें कि वह दूसरों के लिए आदर्श हो। जिस प्रकार हम अपने साहित्य

का भंडार अच्छे-अच्छे ग्रंथ-रत्नों से भरना चाहते हैं, उसी प्रकार हमें अपनी भाषा का स्वरूप भी परम निर्मल और उज्ज्वल बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। रद्‌दी और भद्‌दी भाषा में लिखा हुआ अच्छे-से-अच्छा साहित्य भी कभी आदरणीय और स्थायी नहीं हो सकता।

बात बहुत-कुछ बिगड़ चुकी है और दिन-पर-दिन बिगड़ती ही चली जा रही है। इसलिए अब हम लोगों को सचेत होकर भाषा के सुधार में अपनी पूरी शक्ति लगानी चाहिए। यही सोचकर प्रायः दो वर्ष पहले मैंने 'अच्छी हिंदी' नामक पुस्तक लिखी थी। उस पुस्तक में मैंने हिंदी भाषा में होने वाली सैकड़ों-हजारों प्रकार की भूलों की ओर हिंदी वालों का ध्यान दिलाने का प्रयत्न किया था। हर्ष का विषय है कि उक्त पुस्तक के कारण बहुत-से लोगों का ध्यान भाषा की शुद्धता की ओर हो गया है। सभी प्रकार के लेखक भाषा की शुद्धता की आवश्यकता मानने लगे हैं। शिक्षा के क्षेत्र में तो उक्त पुस्तक का इतना अधिक आदर हुआ कि एक-डेढ़ वर्ष के अंदर ही देश भर के प्रायः सभी विश्वविद्यालयों और हिंदी की बड़ी-बड़ी परीक्षाएँ लेने वाली संस्थाओं ने उसे अपने यहाँ के पाठ्यक्रम में रख लिया। अब इतना तो हो गया है कि जो एक बार वह पुस्तक पढ़ लेंगे, वे बहुत-सी भूलों से अनायास बच जाएँगे।

परंतु मैं समझता हूँ कि भाषा की शुद्धता की ओर विद्यार्थियों का ध्यान और भी पहले दिलाना चाहिए। विश्वविद्यालयों आदि में पहुँचने पर तो विद्यार्थियों की भाषा बहुत-कुछ मँज चुकती है—वे एक विशेष प्रकार की भाषा लिखने के बहुत-कुछ अभ्यस्त हो चुकते हैं। उस समय उनकी भाषा में बहुत अधिक सुधार नहीं किया जा सकता; पर यदि इससे कुछ और पहले ही उन लोगों को बतला दिया जाए कि भाषा लिखने में कितने प्रकार की और कैसी-कैसी भूलें होती हैं, तो वे आरंभ में ही उन भूलों से बचने लगेंगे और आगे चलकर निर्दोष तथा शुद्ध भाषा लिखने लगेंगे। यही सोचकर यह पुस्तक ऐसे विद्यार्थियों के लिए लिखी गई है जिन्हें व्याकरण का साधारण ज्ञान हो चुका हो; अर्थात् आजकल के स्कूलों के नवें-दसवें दरजों के विद्यार्थियों या उनके समान योग्यता रखने वाले अन्य विद्यार्थियों के हित के लिए यह पुस्तक लिखी गई है। पर इसका यह अर्थ नहीं है कि और लोग इससे लाभ नहीं उठा सकते। इसमें भाषा की शुद्धता

से संबंध रखने वाली बहुत-सी ऐसी ऐसी बातें बतलाई गई हैं, जो अच्छे-अच्छे लेखकों के लिए भी बहुत अधिक उपयोगी हो सकती हैं। जब इस प्रकार की बातें विद्यार्थी लोग स्कूल छोड़ने से पहले सीख लेंगे, तब उनका एक ऐसा बहुत बड़ा दल तैयार हो जाएगा, जो हिंदी भाषा के सब दोषों का समूल नाश करके उसका मुख उज्ज्वल कर दिखलाएगा।

अपने आदरणीय मित्र पटना के राय ब्रजराजकृष्ण जी का मैं बहुत अधिक अनुगृहीत हूँ, जिन्होंने प्रायः एक वर्ष पूर्व 'अच्छी हिंदी' देखकर मुझसे कहा था कि यदि इसी प्रकार की एक पुस्तक हाई स्कूलों के विद्यार्थियों के लिए बन जाए तो बहुत अच्छा हो। यदि उनका यह शुभ परामर्श मुझे न मिलता, तो न जाने यह पुस्तक बनती भी या नहीं। इसलिए इस पुस्तक की तैयारी का बहुत-कुछ श्रेय उन्हीं को है। इसके लिए मैं उनका परम कृतज्ञ हूँ। काशी हिंदू विश्वविद्यालय के हिंदी प्राध्यापक अपने प्रिय मित्र पं. विश्वनाथप्रसाद जी मिश्र, एम.ए. साहित्य-रत्न को भी मैं धन्यवाद देना नहीं भूल सकता, जिनसे मुझे इस संबंध में कई बहुत ही उपयोगी परामर्श मिले हैं।

श्री कृष्ण जन्माष्टमी
सं. 2003

– रामचंद्र वर्मा

प्रस्तुत नवीन संस्करण

'हिंदी प्रयोग' के इस नए संस्करण में वर्तनी में एकरूपता लाने के लिए कुछ परिवर्तन किए गए हैं। वाक्य-रचना संबंधी नवीन मान्यताओं का भी ध्यान रखा गया है। अनेक नवीन तथ्यों का भी इसमें उपयोग किया गया है। विद्यार्थियों को शुद्ध हिंदी की शिक्षा देनेवाली वर्मा जी की यह कृति अपने ढंग की निश्चय ही अकेली है।

– बदरीनाथ कपूर

1

शब्दों के प्रकार

हर भाषा में कई प्रकार के शब्द होते हैं। कारण यह है कि हर भाषा और उसके बोलने वालों का कुछ इतिहास होता है। भाषा बहुत दिनों में बनती है और बराबर कुछ-न-कुछ बदलती रहती है। बहुत-से पुराने शब्द अनेक कारणों से छूटते जाते हैं और उनकी जगह नए शब्द बनते रहते तथा बाहर से आकर मिलते रहते हैं। जब हमें कोई नई चीज, नया विचार या नया भाव मिलता है, तब या तो हम उसके लिए कोई नया शब्द गढ़ लेते हैं या किसी दूसरी भाषा से ले लेते हैं। इसके सिवा बराबर बोलचाल में आते रहने के कारण शब्दों के रूप बदलते भी रहते हैं। इन सब बातों का भाषा के रूप पर बहुत प्रभाव पड़ता है और उस प्रभाव का यह फल होता है कि शब्दों और भाषा का रूप सदा कुछ-न-कुछ बदलता रहता है और अनेक प्रकार के शब्द बढ़ते रहते हैं।

किसी समय हमारे देश का सारा साहित्य संस्कृत में लिखा जाता था, पर साहित्य की भाषा सब लोगों के नित्य के व्यवहार की भाषा नहीं हो सकती। कारण यह है कि साहित्य की भाषा अधिक पढ़े-लिखे लोगों की भाषा होती है और बोलचाल की भाषा कम पढ़े-लिखे लोगों की। आजकल भी हमारे नित्य के व्यवहार की भाषा कुछ सहज है, साहित्य की भाषा कुछ कठिन। यही बात पहले भी थी। साधारण बोलचाल की भाषा प्राकृत कहलाती थी। धीरे-धीरे संस्कृत का प्रचार कम होने लगा, प्राकृत का प्रचार बढ़ने लगा और उसी में साहित्य लिखा जाने लगा। हमारा देश बहुत बड़ा है और उसमें अनेक प्रदेश हैं। इसलिए धीरे-धीरे हर एक प्रदेश की प्राकृत भी एक दूसरी से कुछ अलग होती गई। प्राकृतों के बाद अपभ्रंश भाषाओं का विकास और प्रचार हुआ। उन्हीं अपभ्रंश भाषाओं से आज-कल की हिंदी, बाँग्ला, गुजराती, मराठी आदि प्रदेशीय

भाषाएँ निकली हैं।

हिंदी में मुख्य रूप से दो प्रकार के शब्द हैं—एक तो संस्कृत के और दूसरे वे, जो प्राकृत और अपभ्रंश के द्वारा अपना रूप बदलते हुए अब तक हमारी बोलचाल में चले आ रहे हैं। संस्कृत के जो शब्द हम ज्यों-के-त्यों काम में लाते हैं, वे 'तत्सम' कहलाते हैं। तत्सम का अर्थ है—उसके समान या ज्यों-का-त्यों। समय, पुस्तक, पाठशाला, विद्या, माता, पिता, जल, वायु, सूर्य, चंद्रमा, नगर, नदी, निंदा, प्रशंसा, भोजन, निद्रा आदि शब्द संस्कृत के हैं; पर आज भी हम अपनी भाषा में इनका इन्हीं रूपों में व्यवहार करते हैं। ये सब शब्द हमने संस्कृत से ज्यों-के-त्यों ले लिए हैं। ऐसे सभी शब्द 'तत्सम' कहलाते हैं।

पर हमारी भाषा में बहुत-से ऐसे शब्द भी हैं जो निकले तो संस्कृत से ही हैं पर जो हजारों वर्षों से व्यवहार में आने के कारण बहुत-कुछ घिस-पिस गए हैं। अब उन शब्दों के वे रूप नहीं रह गए, जो संस्कृत में थे। हम कहते हैं—'हमें नींद आ रही है।' यह 'नींद' शब्द कहाँ से आया ? संस्कृत के 'निद्रा' शब्द से। हम कहते हैं—'हमें प्यास लगी है।' यह 'प्यास' शब्द संस्कृत 'पिपासा' का बिगड़ा हुआ रूप है। ऐसे शब्द 'तद्भव' कहलाते हैं। 'तद्भव' का अर्थ है—उससे उत्पन्न। हिंदी में ऐसे शब्द बहुत हैं। यहाँ हम संस्कृत और हिंदी के कुछ ऐसे शब्द देते हैं, जिनमें 'तत्सम' और 'तद्भव' का भेद सहज में मालूम हो जाएगा :

तत्सम	तद्भव	तत्सम	तद्भव
आश	आस	कर्ण	कान
कपाट	किवाड़	कर्म	काम
क्षेत्र	खेत	भिक्षा	भीख
गृह	घर	भ्राता	भाई
ग्राम	गाँव	मस्तक	माथा
घृत	घी	मुक्ता	मोती
चंद्र	चाँद	मुक्ख	मुँह
छिद्र	छेद	मृत्यु	मौत

तत्सम	तद्भव	तत्सम	तद्भव
ज्येष्ठ	जेठ	योगी	जोगी
दंत	दाँत	रत्न	रतन
दुग्ध	दूध	लज्जा	लाज
दुर्बल	दुबला	लोक	लोग
धूम्र	धुआँ	वर्ष	बरस
पक्षी	पंछी	वर्षा	बरसात
पत्र	पत्ता	वैर	बैर
पुत्र	पूत	सत्य	सच
पृष्ठ	पीठ	हस्त	हाथ
भक्त	भगत		

हिंदी भाषा इस प्रकार के हजारों तद्भव से भरी पड़ी है। सच पूछिए तो ये तद्भव शब्द ही हमारी अपनी पूँजी हैं। हमारी सब क्रियाएँ, सर्वनाम और बहुत-सी संज्ञाएँ, विशेषण और क्रिया-विशेषण तद्भव हैं। कुछ शब्द तो ऐसे हैं जिन्हें देखते ही सहज में पता चल जाता है कि ये संस्कृत के शब्द से निकले हैं। सपना स्वप्न से, आग अग्नि से और काज कार्य से निकला है। पर कुछ शब्द ऐसे भी हैं जिनके मूल का सहज में पता नहीं चलता। जैसे 'फाटक' बना तो है संस्कृत 'कपाट' से, पर उसके कुछ अक्षर आगे-पीछे हो गए हैं। शब्दों के अक्षरों का इस प्रकार का हेर-फेर **'वर्ण-व्यत्यय'** या **'वर्ण-विपर्यय'** कहलाता है।

हिंदी में कुछ ऐसे शब्द भी हैं, जो वास्तव में तद्भव होने पर भी देखने में प्रायः तत्सम जान पड़ते हैं। इसीलिए बहुत-से लोग उन्हें भूल से तत्सम ही समझते और मानते हैं। 'आशा' और 'नैराश्य' तो शुद्ध संस्कृत के शब्द होने के कारण तत्सम हैं, पर 'निराशा' संस्कृत का शब्द नहीं है। यह संस्कृत 'निराश' (निर्+आशा) में आ 'प्रत्यय' जोड़कर बना लिया गया है और इसीलिए यह तद्भव है। इसी प्रकार संस्कृत 'अभिलाष' से बना हुआ हिंदी 'अभिलाषा', सं. 'अज्ञान' से बना हुआ हिंदी 'अज्ञानी', सं. 'पूत' से बना हुआ हिंदी 'पुनीत' और सं. 'सुविध' से बना हुआ हिंदी 'सुविधा' तद्भव है। ऐसे शब्दों को तत्सम समझना भूल है।

तत्सम और तद्भव के बीच का एक और प्रकार है, जो 'अर्द्ध-तत्सम' कहलाता है। हम पहले बता चुके हैं कि जब संस्कृत के बहुत-से शब्दों के रूप कुछ बदल गए, तब वे प्राकृत के शब्द बने; और प्राकृत शब्दों के रूप जब कुछ और भी बदले, तब वे हिंदी के तद्भव शब्द हुए; पर कुछ शब्द ऐसे भी हैं जिनका रूप प्राकृत में तो बदला हुआ अवश्य था, पर जो प्राकृत से हिंदी में ज्यों-के-त्यों आ गए-उनके रूपों में फिर कोई नया परिवर्तन नहीं हुआ। इस प्रकार के कुछ शब्द पुरानी हिंदी में पाए या कहीं-कहीं गाँव-देहातों में बोले जाते हैं। जैसे संस्कृत 'अग्नि' से प्राकृत रूप 'अगिन' हुआ था; पर हिंदी में वह 'आग' हो गया। 'अगिन' अब भी कहीं-कहीं गाँव-देहात में बोला जाता है। यह 'अगिन' रूप 'अर्द्ध-तत्सम' कहलाता है। पुरानी कविताओं में पाया जाने वाला 'दई' शब्द संस्कृत 'दैव' का अर्द्ध-तत्सम रूप है, आजकल की हिंदी में नहीं चलता। अब हम फिर उसकी जगह तत्सम 'दैव' का ही प्रयोग करने लगे हैं। 'रात' शब्द ऐसा है जो अर्द्ध-तत्सम ही है और हिंदी में अब तक इसी रूप में चलता है। स्पष्ट है कि यह संस्कृत 'रात्रि' से निकला है। आजकल की हिंदी में ऐसे अर्द्ध-तत्सम शब्द बहुत थोड़े हैं। इन्हें हम शब्दों का तीसरा प्रकार मान सकते हैं।

शब्दों का चौथा प्रकार 'देशज' कहलाता है। देशज का अर्थ है-देश में उत्पन्न या देश का बना हुआ। प्रायः ऐसा होता है कि जब कोई नई चीज हमारे सामने आती है और हम उसका पहले से चला आया हुआ नाम नहीं जानते या वैसा कोई नाम हमें नहीं मिलता, तब हम उसके लिए आप ही एक नया नाम गढ़ लेते हैं। 'देशज' इसी प्रकार के गढ़े हुए शब्द हैं। खिड़की, लच्छा, लगभग, गड़बड़ आदि शब्द देशज हैं। पर हम इस प्रकार के सब शब्दों को निश्चित रूप से देशज भी नहीं कह सकते। हो सकता है कि आगे चलकर हमें पता लगे कि अमुक देशज शब्द संस्कृत अथवा और किसी भाषा के अमुक शब्द से निकला या अमुक प्रकार से बना है। साधारणतः होता यही है कि जिन शब्दों के संबंध में हम निश्चित रूप से यह नहीं जानते कि वे कहाँ से आए या किस शब्द से निकले या कैसे बने, उन्हें हम देशज के वर्ग में रख लेते हैं। जैसा कि हम पहले कह चुके हैं, किसी दूसरे शब्द की सहायता के बिना ही कुछ शब्द गढ़ लिए जाते हैं, वही देशज कहलाते हैं। यह बात दूसरी है कि हम भूल या अज्ञान से

कुछ ऐसे शब्दों को भी देशज मान लें, जो वास्तव में देशज नहीं, बल्कि तद्भव हैं।

शब्दों का एक और प्रकार है, जो '**अनुकरणवाचक**' कहलाता है। जब कोई बार-बार खट-खट शब्द करता है, तब हम उस क्रिया को 'खटखटाना' कहते हैं। जब हमें कोई चीज चम-चम करती हुई दिखाई देती है, तब हम उस क्रिया को 'चमचमाना' या फिर 'चमकना' कहते हैं। जिस पक्षी को हम पी-पी रटते हुए देखते हैं, उसे हम 'पपीहा' कहते हैं। कौआ काँ-काँ या काँव-काँव करता है; इसलिए संस्कृतवालों ने उसका नाम 'काक' रख लिया था; और अब हम उसे कौआ कहते हैं। लड़खड़ाना, सड़सड़ाना, दुरदुराना, ललकारना, लपकना आदि क्रियाएँ और पटाका, सिटकिनी आदि संज्ञाएँ अनुकरणवाचक हैं। ये ऐसे शब्द हैं, जो किसी क्रिया के अनुकरण पर बने हुए हैं। कभी-कभी किसी देश या स्थान के नाम पर भी कुछ शब्द गढ़ लिए जाते हैं, जैसे - चीन से चीनी, मिस्र से मिस्री और करौली (राजपूताने का एक नगर) से करौली (एक प्रसिद्ध शस्त्र)।

एक और प्रकार के अनुकरणवाचक शब्द होते हैं, जो किसी प्रचलित शब्द के अनुकरण पर बनते हैं, जैसे - भीड़-भाड़, धूम-धड़क्का, खट-पट आदि। इनमें के भाड़, धड़क्का और पट अपने पहले के शब्दों के अनुकरण मात्र हैं। कभी-कभी आवश्यकता पड़ने पर किसी पुराने शब्द के अनुकरण पर भी उसी प्रकार का कोई नया शब्द गढ़ लिया जाता है, जैसे - 'मँझला' के अनुकरण पर 'सँझला' और 'विधवा' के अनुकरण पर 'सधवा'। 'चोखा' का अर्थ होता है - (क) तेज और (ख) बढ़िया या अच्छा। इसके अनुकरण पर कहीं-कहीं 'ओखा' शब्द चलता है, जिसका अर्थ 'चोखा' का उलटा अर्थात् हलका या घटिया है। कभी-कभी बोलचाल में भी किसी शब्द के अनुकरण पर कोई ऐसा शब्द मुँह से निकल जाता है, जिसका कोई अर्थ नहीं होता, जैसे-यहाँ पैसा-वैसा कुछ नहीं है। यहाँ 'वैसा' कुछ अर्थ नहीं रखता। वह 'पैसा' का अनुकरण मात्र है। यही बात 'कुछ काम-धाम करो' में आए हुए 'धाम' शब्द के संबंध में भी है। यदि वास्तविक दृष्टि से देखा जाए तो अनुकरणवाचक सब शब्द भी देशज ही वर्ग में आते हैं। देशज से अलग उनका कोई और प्रकार नहीं। यदि भेद है तो केवल उनके बनने के प्रकार का। इसी वर्ग में वे शब्द भी रखे जा

सकते हैं, जिन्हें 'तदर्थीय' कहते हैं। 'तदर्थीय' ऐसे शब्द कहलाते हैं, जो किसी अन्य भाषा के शब्द या पद का भाव प्रकट करने के लिए उन्हीं के आधार पर बना लिए जाते हैं। चित्रकारी, छापे आदि में एक प्रकार की बेल होती है, जिसे संस्कृत में 'गोमूत्रिका' और हिंदी में 'बरध-मुतान' कहते हैं। इसमें का 'वरध' शब्द संस्कृत बलिवर्द के अन्तिम अंश 'वर्द' से और 'मुतान' हिं. मूतना (संस्कृत मूत्र) से निकला है; पर 'बरध-मूतान' शब्द देशज और तदर्थीय है। हमारे यहाँ का 'रजटपट' संस्कृत का तत्सम होने पर भी अंग्रेजी शब्द के Silver Screen के अनुकरण पर बना हुआ तदर्थीय शब्द ही है।

उक्त शब्दों के सिवा हमारी भाषा में एक और प्रकार के शब्द मिलते हैं, जिन्हें कुछ लोग विदेशी कहते हैं, पर एक विशेष कारण से जिन्हें 'परकीय' या पराया कहना अधिक अच्छा होगा। हर भाषा में दूसरी भाषाओं के थोड़े-बहुत शब्द होते हैं और हमारी हिंदी में भी हैं। हमारे यहाँ का 'पिल्ला' शब्द दक्षिण भारत की किसी भाषा से और 'लीची' शब्द चीनी भाषा से आया है। होता यह है कि हर देश के लोग दूसरे देशों में आते-जाते रहते हैं और जब दो देशों के लोग आपस में मिलते हैं, तब उनमें काम की चीजों का लेन-देन भी होता है। चीजों के साथ कभी-कभी शब्दों का भी कुछ लेन-देन हो जाता है। यही कारण है कि हमारी भाषा में अरबी, फारसी, तुर्की, फ्रांसीसी, पुर्तगाली आदि बहुत-सी भाषाओं के थोड़े-बहुत शब्द आकर मिल गए हैं। और इधर कुछ दिनों से अंग्रेजी शब्द भी बहुत बड़ी संख्या में हमारी भाषा में आ गए हैं। यदि हम तत्सम और तद्भव का मूल और व्यापक अर्थ लें, तो हम कह सकते हैं कि इस प्रकार के परकीय शब्द हमारे यहाँ तत्सम रूप में भी आए हैं और हमने उनके तद्भव रूप भी बना लिए हैं। सवाल, जवाब, कागज, जरूरत, अंदाज, कैंची, कोट, रेडियो, बल्ब, पेन्सिल, फुट, बूट आदि शब्द परकीय होने पर भी अपने तत्सम रूप में हिंदी में चलते हैं। 'सड़क' अरबी के 'शरक' का तद्भव रूप है। 'मिस्तरी' 'मास्टर' का, 'रद्दी' 'रद्द' का, 'रबड़' 'रबर' का, 'लँगड़ा' 'लंग' का, 'पतलून' 'पैंटलून' का, 'पलटन' 'प्लैटून' का और 'कोचवान' 'कोचमैन' का तद्भव रूप है। इस रूप में संज्ञाएँ ही नहीं, बल्कि कुछ क्रियाएँ और विशेषण भी हमारे यहाँ प्रचलित हैं। 'जोश' से बना हुआ 'जोशीला', 'गुजर' से बना हुआ 'गुजरना' और 'नजर' से बना हुआ 'नजराना' (नजर लगने या लगाने के अर्थ में) आदि

क्रियाएँ इसके उदाहरण हैं। हमारे यहाँ का 'चपरासी' शब्द फारसी के 'चप व रास्त' (दाहिने-बाएँ खड़े रहनेवाले) से बना है और उस 'चपरासी' से हमने एक अलग शब्द 'चपरास' भी बना लिया है। 'चपरास' चौकीदार या चपरासी के बिल्ले को कहते हैं। अंग्रेजी रैस्पबेरी (Raspberry) के ढंग पर हमने मकोय नामक फल के लिए जो 'रसभरी' शब्द बनाया है, वह तो किसी तरह पराया जान ही नहीं पड़ता।

ऊपर परकीय शब्दों के प्रसंग में हमने फारसी का भी नाम लिया है। आजकल फारसी भले ही परकीय भाषा कहलाती हो, पर वास्तव में वह हमारी संस्कृत की ही एक शाखा है या अधिक-से-अधिक एक प्रकार की प्राकृत। उसके सैकड़ों-हजारों शब्द संस्कृत शब्दों से ही निकले या बने हैं, जैसे - शाखा से शाख, अश्व से अस्प, गो से गाव, बंध से बंद आदि। फारसी का 'सर' शब्द भी उसी प्रकार का तद्भव शब्द है, जिस प्रकार हिंदी का 'सिर'। संस्कृत के मातृ, पितृ और भ्रातृ, फारसी के मादर, पिदर और बिरादर तथा अंग्रेजी के मदर, फादर और ब्रदर में इसलिए बहुत कम अंतर है कि इन सबका मूल एक ही है।

इधर कुछ दिनों से हमारे यहाँ बँगला, मराठी आदि के भी कुछ शब्द चलने लगे हैं। नितांत, बाध्य, संभ्रांत आदि शब्द यद्यपि देखने में संस्कृत के जान पड़ते हैं, पर हैं वास्तव में बँगला के देशज शब्द। उपन्यास और प्रतिशब्द हैं तो संस्कृत के शब्द, पर आज-कल वे हिंदी में जिन अर्थों में चलते हैं, वे अर्थ हमने बँगला से लिए हैं। इसी प्रकार लागू, चालू, प्रगति और आभार सरीखे कुछ शब्द मराठी से हमारे यहाँ आए हैं। इन शब्दों को हम इसलिए 'विदेशी' नहीं कह सकते कि ये हमारे ही देश के विभिन्न प्रदेशों के शब्द हैं। इसीलिए ऊपर हमने इस वर्ग के शब्दों को 'परकीय' कहा है।

शब्दों के संबंध में ध्यान रखने की कुछ और बातें भी हैं जिनका उनके अर्थों से संबंध है। पहली बात तो यह है कि सभी भाषाओं में बहुत-से ऐसे शब्द रहते हैं, जिनके कई-कई अर्थ होते हैं। ऐसे शब्द जब तत्सम रूप में लिए जाते हैं, तब यह आवश्यक नहीं होता कि उनके सब अर्थ ले ही लिए जाएँ। कभी तो हम उनके सब अर्थ ले लेते हैं और कभी एक ही दो अर्थ लेते हैं। तत्सम शब्दों में कुछ ऐसे भी होते हैं जिनका अर्थ, लिंग या वचन दूसरी भाषा में जाने पर

बदल जाता है। कभी-कभी ऐसे शब्दों के साथ कुछ नए अर्थ भी जुड़ जाते हैं।

दूसरी बात यह है कि तद्भव शब्दों के लिए यह आवश्यक नहीं है कि उनके वही अर्थ रहें जो उनके मूल शब्दों के हों। हमारे यहाँ का 'कंगाल' शब्द संस्कृत कंकाल से निकला है, जिसका अर्थ है हड्डियों का ढाँचा या ठठरी। 'ठठरी' के लिए तो हम कंकाल शब्द का प्रयोग करते हैं, पर 'कंगाल' का प्रयोग निर्धन के अर्थ में करते हैं। 'आत्मा' संस्कृत में पुलिंग हैं, पर हिंदी में स्त्रीलिंग है। तद्भव शब्दों में हम अपनी आवश्यकता के अनुसार कुछ और अर्थ भी बढ़ा लेते हैं। 'काटना' शब्द संस्कृत कर्तन से निकला है। पर 'काटना' हमारे यहाँ जितने अर्थों में चलता है, वे सब अर्थ 'कर्तन' के नहीं हैं। 'काटना' का पहला अर्थ है–किसी चीज का कोई अंग धारदार उपकरण से अलग करना। जैसे - पेड़ की डाल काटना। पर जब दूसरे अवसरों पर भी हमें इससे मिलता-जुलता भाव प्रकट करना होता है तब भी हम 'काटना' का प्रयोग करते हैं, जैसे - वेतन काटना, समय काटना आदि। हम जल से तो स्नान करते ही हैं, पर वायु, धूप और वाष्प का भी स्नान होता है। चंद्रमा की चाँदनी में पृथ्वी का भी स्नान होता है। मतलब यह कि किसी लिए हुए शब्द में हम अपनी ओर से भी कुछ नए भाव लगा लेते हैं।

तीसरी बात यह है कि जब हम किसी तत्सम शब्द से कोई तद्भव शब्द बनाते हैं, तब वह हमारा हो जाता है और हम अपने व्याकरण के नियमों के अनुसार उसके अनेक प्रकार के रूप बना लेते हैं। उदाहरण के लिए 'बनना' शब्द लीजिए। हम इससे बनाना, बनवाना, बनवाई, बनाव, बनावट, अनबन, बनठन आदि अनेक प्रकार के शब्द बना लेते हैं। हम 'बढ़ना' से 'बढ़िया', 'घटना' से 'घटिया' और 'घाटा' और 'आलू' से 'कचालू' तक बना लेते हैं, और आगे चलकर हम 'कचालू' के अर्थ का भी विस्तार कर लेते हैं। 'आलू' का तो 'कचालू' होता है, अमरूद, बंडे, खीरे और सेब तक का भी 'कचालू' होता है।

इसके सिवा हम कुछ और प्रकार के शब्द भी बनाते हैं। हम फारसी के 'जेब' में हिंदी की 'घड़ी' मिलाकर 'जेबघड़ी' बनाते हैं, अंग्रेजी के 'रेल' शब्द में हिंदी का 'घर' मिलाकर 'रेलघर' बनाते हैं; हिंदी के 'राज' में अरबी का 'महल' जोड़कर 'राजमहल' बनाते हैं; हिंदी की 'चमक' और 'पट्टी' में फारसी का 'दार' प्रत्यय लगाकर 'चमकदार' और 'पट्टीदार' बमाते हैं; अंग्रेजी के 'जेल' में फारसी

का 'खाना' मिलाकर 'जेलखाना' बनाते हैं; और यहाँ तक कि हिंदी के 'पता' में अरबी का 'ला' उपसर्ग जोड़कर 'लापता' भी बना लेते हैं। मतलब यह कि हमारे यहाँ दूसरी भाषाओं से लिए हुए जो शब्द चलते हैं, उन्हें हम आपस में मिलाकर भी और अपने यहाँ के शब्दों के साथ मिलाकर भी नए शब्द बना लेते हैं। इस प्रकार के शब्द '**यौगिक**' कहलाते हैं।

कभी-कभी यौगिक शब्दों में कुछ शब्दों के ऐसे रूप भी मिले रहते हैं, जो पूरे नहीं होते, बल्कि कुछ तोड़-मरोड़कर छोटे कर लिए जाते हैं। ऐसे रूप अपने मूल शब्दों के संक्षिप्त रूप कहलाते हैं। प्रायः स्त्रियाँ किसी को 'कलमुँहा' या 'कलजिब्भा' कहती हैं। इनमें का 'कल' शब्द वास्तव में 'काला' का संक्षिप्त रूप है। इसी प्रकार 'बड़भागी' में का 'बड़' और 'मिठबोला' में का 'मिठ' वास्तव में 'बड़ा' और 'मीठा' के संक्षिप्त रूप हैं। इसी प्रकार 'तिकोना', 'चौपहला', 'पँचलड़ी' और 'सतनजा' में के 'ति', 'चौ', 'पँच' और 'सत' क्रम से 'तीन', 'चार', 'पाँच' और 'सात' के संक्षिप्त रूप हैं। 'लकड़बग्घा' और 'लकड़हारा' में का 'लकड़' भी 'लकड़ी' का संक्षिप्त रूप ही है, और 'अधमरा' या 'अधकचरा' में का 'अध' संक्षिप्त रूप है 'आधा' का।

अब तक हमने शब्दों के जो भेद या प्रकार बतलाए हैं, उनके संबंध में ध्यान रखने की एक बड़ी बात यह है कि वे सब भेद या प्रकार सदा अर्थ के विचार से ही होते हैं। हिंदी में एक बहुत चलता हुआ शब्द 'काम' है। संस्कृत में इसका अर्थ कामना या इच्छा है; और इसी अर्थ के विचार से 'कामधेनु' शब्द बना है, जिसका अर्थ है कामना पूरी करनेवाली गाय। इस अर्थ में 'काम' शब्द तत्सम है। पर संस्कृत के 'कर्म' से निकला हुआ 'काम' भी है, जिससे हम 'काम-धंधा', 'काम-धाम', 'कामचोर', 'कामकाजी' आदि शब्द बनाते हैं। इस अर्थ में यह तद्भव है। यही 'काम' शब्द फारसी में भी चलता है, जिससे उस भाषा में 'कामयाब' और 'नाकाम' शब्द बनते हैं, और इसमें भी वही संस्कृत का इच्छावाला भाव या अर्थ है। हमारा काम संस्कृत 'काम' से ही चल जाता है, इसलिए इस अर्थ में हमें फारसी से केवल 'काम' लेने की आवश्यकता नहीं होती। पर यदि हमें यह शब्द फारसी से इस अर्थ में लेना पड़े, तो यह हमारे लिए परकीय तत्सम होगा।

जब हम 'कल' का प्रयोग 'कलरव' और 'कलनाद' सरीखे शब्दों में करते

हैं, तब वह 'तत्सम' ही रहता है; पर जब हम उसका प्रयोग 'आनेवाला दिन' के अर्थ में करते हैं, तब वह संस्कृत 'कल्य' से निकला हुआ होने के कारण और यंत्र के अर्थ में संस्कृत 'कला' से निकला हुआ होने के कारण तद्भव होता है। पर हमारे यहाँ 'कलमुँहा' और 'कलजिब्भा' शब्द भी प्रचलित हैं। इन शब्दों में 'कल' न तो तत्सम है, न तद्भव। जैसा कि हम अभी बतला चुके हैं, यह हिंदी के तद्भव 'काला' शब्द का संक्षिप्त रूप है। 'रास' शब्द कृष्ण और गोपियों के नृत्य के अर्थ में तत्सम होता है; और 'ढेर' के अर्थ में संस्कृत राशि से निकला हुआ होने के कारण तद्भव। पर जब हम इसका प्रयोग 'लगाम' के अर्थ में करते हैं, तब यह फारसी से ज्यों-का-त्यों लिया हुआ होने के कारण परकीय तत्सम होता है। फिर कभी-कभी हम यह भी कहते हैं-'यह बात हमें रास नहीं आती' अर्थात् हमारे अनुकूल नहीं पड़ती। इस अर्थ में यह फारसी के 'रास्त' शब्द से निकला हुआ होने के कारण परकीय तद्भव होता है। इन सब बातों का यही अभिप्राय है कि किसी शब्द का भेद या प्रकार उसके रूप से नहीं, बल्कि उसके अर्थ के विचार से निश्चित होता है।

2

शब्दों के रूप

बोलने या लिखने के समय शब्दों के ठीक-ठीक रूप का पूरा ध्यान रखना चाहिए। यदि हम मनमाने ढंग से शब्दों के रूप बना-बनाकर बोलने या लिखने लगेंगे तो हमारी बात जल्दी दूसरों की समझ में ही न आएगी। हर चीज का एक ऐसा स्थिर रूप होता है, जिसे सब लोग जानते और मानते हैं। ऐसे रूप को हम 'मानक' कह सकते हैं। 'मानक' वही चीज है, जिसे कुछ लोग मानदण्ड या मापदण्ड कहते हैं। 'मानक' इन्हीं शब्दों का सीधा-सादा, सहज और हलका रूप है। जो चीज अपने मानक से गिरी हुई होती है, उसका कहीं मान नहीं होता।

बहुत-से लोग आये, गये, लिये, दिये, आदि लिखते हैं और बहुत-से लोग आए, गए, लिए, दिए आदि; पर अब शिष्टसम्मत रूप आए, गए आदि ही माने जाते हैं। चाहिये, कीजिये, दीजिये और लीजिये से चाहिए, कीजिए, दीजिए और लीजिए रूप ही अधिक अच्छे समझे जाते हैं। ये रूप लिखाई और छापे में भी सहज होते हैं और उच्चारण से भी बहुत-कुछ मिलते हुए होते हैं।

लिखने से पहले शब्दों के मानक रूप अच्छी तरह समझ लेने चाहिए और तब उन्हें उन्हीं रूपों में लिखना चाहिए। कहीं 'पावे', कहीं 'पाये', कहीं 'पावै' और कहीं 'पाए' नहीं लिखना चाहिए। 'पाए' रूप ही हिंदी में मानक माना जाता है; जैसे-'हमने सौ रुपए पाए थे (या हैं)' और 'वह सौ रुपए पाएगा।' 'लिए गये' या 'लिये गए' आदि भी लिखना ठीक नहीं है, क्योंकि इनमें से एक क्रिया 'ए' से और दूसरी 'ये' से लिखी गई है। 'लिए गए' लिखना ही ठीक है। 'होवें', 'लेवें', 'देवें' आदि से 'हों', 'लें', 'दें' आदि रूप सहज भी हैं और सुंदर भी। जायगा, जावेगा, जाएगा आदि रूपों में से 'जाएगा' ही अधिक प्रचलित और

अच्छा है। 'देवेगा', 'लेवेगा' आदि न लिखकर सदा 'देगा', 'लेगा' आदि ही लिखना चाहिए। तात्पर्य यह कि शब्दों की अक्षरी सदा ठीक और एक-सी होनी चाहिए। कहीं 'कुँअर' और कहीं 'कुँवर', कहीं 'रिआयत' और कहीं 'रियायत', कहीं 'हलुआ' और कहीं 'हलुवा' नहीं लिखना चाहिए। हर शब्द का रूप सदा एक-सा रखना चाहिए।

साधारणत: हिंदी भाषा के दो रूप माने जाते हैं—एक पश्चिमी, और दूसरा पूर्वी। कुछ कारणों से शब्दों के पश्चिमी रूप ही अधिक माने जाते हैं; और हिंदी में अधिकतर वही चलते हैं। जैसे - चिल्लाना, सोना, सिर आदि पश्चिमी रूप हैं; चिचियाना, सूतना, कपार या मूड़ आदि पूर्वी। यदि हम कहें—'हम चिल्लाते रहे' और 'आप सोते रहे'। ये पश्चिमी रूप होंगे। 'हम चौतरे से नीचे फेंका गए' सुनकर लोग हँसेंगे; इसलिए 'गिर गए' कहना ही ठीक होगा। 'कड़हिया', छँटैया' आदि रूप पूर्वी और 'कड़ाही', 'छँटाई' आदि रूप पश्चिमी हैं; और हिंदी में यही रूप ठीक माने जाते हैं।

पर यह बात नहीं कि सब जगह सदा पश्चिमी रूप ही ठीक माने जाते हों। पश्चिम के कुछ प्रयोग ऐसे भी हैं, जो हिंदी में नहीं चलते। पश्चिमी रूप 'खैंचना' और 'घड़ना' हिंदी में नहीं चलते, पूर्वी रूप 'खींचना' और 'गढ़ना' ही चलते हैं। पश्चिम में प्राय: 'दीखना' बोलते हैं, पर मानक हिंदी में उसकी जगह 'दिखाई देना' ही अच्छा माना जाता है। पश्चिमी हिंदी में उर्दू के प्रभाव से 'भूक', 'धोका', 'सर' आदि रूप चलते हैं, पर हिंदी में 'भूख', 'धोखा', 'सिर' आदि ही ठीक माने जाते हैं।

इन सब बातों का आशय यही है कि हिंदी का अपना एक अलग रूप है, जिसमें बहुत-सी बातें पश्चिम से और कुछ बातें पूरब से ली गई हैं। पर हिंदी का प्रचार सारे भारत में है और सभी प्रदेशों के लोग हिंदी लिखते और बोलते हैं। इसलिए प्राय: लोग अपने प्रदेश के या अपने यहाँ के आस-पास बोली जाने वाली भाषाओं के कुछ प्रयोग भी हिंदी में मिला देते हैं। मध्यप्रदेश में 'दिखाना' या 'दिखलाना' की जगह 'बताना' या 'बतलाना' बोलते हैं, जैसे—'जरा अपनी पुस्तक मुझे भी बताओ' (दिखलाओ के अर्थ में)। दिल्ली, मेरठ, आदि की ओर 'चुनना' की जगह 'चिनना' बोलते हैं। कुछ स्थानों में 'चाहिए था' की जगह

'चाहता था' और 'गया है' की जगह 'गया हैगा' तक बोलते हैं, जैसे–'आपको वहाँ नहीं जाना चाहता था', और 'वह यहाँ से चला गया हैगा'। पूरबवाले बोलते हैं–'हम सोचे', 'हम कहे' आदि। इस प्रकार के सब प्रयोग स्थानिक होते हैं और अच्छी हिंदी में नहीं चलते। हिंदी में इनकी जगह 'हमने सोचा', 'हमने कहा', 'हम जाएँगे' और 'आप जाएँगे' ही लिखे और बोले जाते हैं।

आजकल हिंदी में संस्कृत के कुछ शब्द बिगड़े हुए रूपों में चलने लगे हैं। कभी-कभी लोग संस्कृत शब्दों के ठीक रूप न जानने के कारण उन्हें मनमाने रूप में लिखने लगते हैं; और उनकी देखा-देखी और भी बहुत-से लोग वे रूप ग्रहण कर लेते हैं, इससे कई प्रकार से हानि होती हैं। भाषा का रूप बिगड़ता है, लेखक का अज्ञान प्रकट होता है, दूसरों को हँसने का अवसर मिलता है, इत्यादि। इसलिए जो कुछ लिखा जाए, उसका ठीक रूप पहले से समझ लेना बहुत अच्छा है। अच्छी तरह समझे बिना या केवल दूसरों की देखा-देखी बिगड़े हुए या भद्दे शब्दों का प्रयोग करना ठीक नहीं है। यहाँ हम कुछ ऐसे शब्द देते हैं, जो हिंदी में बिगड़े हुए रूपों में चल पड़े हैं; और उनके सामने उनके शुद्ध रूप भी देते हैं। इनमें से बिगड़े हुए रूप छोड़ देने चाहिए और सदा शुद्ध रूपों का ही प्रयोग करना चाहिए :

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
अंतर्ध्यान	अंतर्धान	परिणित	परिणत
आधीन	अधीन	रुग्न	रुग्ण
उपरोक्त	उपर्युक्त	वादाविवाद	वादविवाद
एकत्रित	एकत्र	श्राप	शाप
दुरावस्था	दुरवस्था	सृजन	सर्जन
दृष्टव्य	द्रष्टव्य	सृष्टा	स्रष्टा
नर्क	नरक	सौदामिनी	सौदामनी

कुछ शब्द ऐसे होते हैं, जो भूल से एक-दूसरे के पर्याय माने जाते हैं, पर वास्तव में जिनके अर्थों में पर्याप्त अंतर होता है। प्रायः लोग 'घर' और 'मकान' को एक समझते हैं। 'मकान' से अभिप्राय ईंट-गारे, सीमेंट-लोहे आदि की इमारत भर से होता है जबकि 'घर' से अभिप्राय उस इमारत के अतिरिक्त उसमें

प्राप्त सुविधाओं तथा उसमें रहनेवालों के संबंधों से भी होता है। इस प्रकार 'मकान' के स्थान पर तो हम हर जगह घर का प्रयोग कर सकते हैं परंतु 'घर' के स्थान पर हम हर जगह मकान का प्रयोग नहीं कर सकते। 'उनके घर में दो बहुए हैं', 'मैंने लड़की के लिए कई घर देखे हैं' और 'घर-सा सुख कहाँ मिलेगा ?' - इन तीनों वाक्यों में 'घर' के स्थान पर मकान का प्रयोग उचित अथवा संभव नहीं। इसके विपरीत कुछ शब्द ऐसे भी होते हैं जो अक्षरी के विचार से कुछ भिन्न दिखाई पड़ने पर भी वस्तुतः उनमें अर्थसाम्य होता है, जैसे—ओषधि, औषध। इसी प्रकार के कुछ और शब्द ये हैं :

आलि	आली
कलश	कलस
केश	केस
पृथ्वी	पृथिवी
प्रतिकार	प्रतीकार
मुशल	मुषल, मुसल
रजनि	रजनी
वेश	वेष
सारि	सारिका, सारी
हनु	हनू

कुछ लोग संस्कृत संज्ञाओं से विशेषण मनमाने ढंग से बना लेते हैं। वे न तो संस्कृत शब्दों के शुद्ध रूप जानते हैं, न विशेषण बनाने के नियम। वे नहीं जानते कि संस्कृत 'क्रुध्' से 'क्रुद्ध', 'कुप्' से 'कुपित', 'क्षुभ्' से 'क्षुब्ध', 'आदृ' से 'आदृत', 'आचर्' से 'आचरित', 'उद्दिश्' से 'उद्दिष्ट' आदि रूप बनते हैं। वे इनकी जगह क्रोधित, कोपित, क्षोभित, आदरित, आचरणित और उद्देशित सरीखे रूप बना लेते और उन्हीं का प्रयोग करते हैं। कुछ लोग हिंदी 'उमंग' से 'उमंगित', 'अचंभा' से 'अचंभित' और 'सुधार' से 'सुधारित' भी बना लेते हैं। ऐसा करना ठीक नहीं है।

बहुत-से लोग हिंदी शब्दों में संस्कृत के प्रत्यय जोड़कर या संस्कृत के दूसरे नियमों के अनुसार अपने मन से नई-नई भाववाचक संज्ञाएँ भी बना लेते

हैं, जैसे–अचानक, उजड्ड, थिर, सुघर, कट्टर आदि शब्द हैं तो तद्भव और हिंदी के; पर कुछ लोग इनमें भी संस्कृत का 'ता' प्रत्यय लगाकर 'अचानकता', 'थिरता', 'सुधरता', 'कट्टरता' और 'अपना' में 'त्व' प्रत्यय लगाकर 'अपनत्व' सरीखे शब्द बना लेते हैं। 'लाल' फारसी का और 'हरा' हिंदी का शब्द है। पर कुछ लोग संस्कृत के 'कालिमा' शब्द के ढंग पर इनसे 'लालिमा' और 'हरीतिमा' शब्द बना लेते हैं, जो ठीक नहीं है।

कुछ लोग शब्द तो शुद्ध ही लिखते हैं, पर व्यर्थ ही उन्हें बढ़ाकर बड़ा कर देते हैं। वे 'समृद्ध' न लिखकर 'समृद्धिशाली' और 'निष्पक्ष' न लिखकर 'पक्षपातरहित' लिखते हैं, जिससे व्यर्थ का विस्तार होता है। कभी–कभी लोग भाववाचक संज्ञाओं में अपनी ओर से एक और प्रत्यय लगाकर उनके रूप बिगाड़ देते हैं। 'एकता' और 'ऐक्य' अर्थ के विचार से एक हैं, पर कुछ लोग लिखते हैं, 'ऐक्यता'। होना चाहिए या तो 'सफलता' या 'साफल्य' कुछ लोग लिखते हैं 'साफल्यता' और 'वैमनस्य' की जगह 'वैमनस्यता' लिख जाते हैं। इस प्रकार के दोषों से विद्यार्थियों को सदा बचना चाहिए।

कुछ लोग कई प्रकार के शब्दों को आपस में मिलाकर नए यौगिक शब्द बना लेते हैं। एक शब्द हिंदी का और एक संस्कृत का या फारसी का अथवा एक शब्द संस्कृत का और दूसरा हिंदी या फारसी का लेकर किसी एक भाषा के नियम के अनुसार उनसे यौगिक शब्द बना लेना ठीक नहीं है। हमारे यहाँ पहले से कुछ ऐसे यौगिक शब्द चले आ रहे हैं, जिनका आधा अंग एक भाषा का है और आधा दूसरी भाषा का। जैसे – हिंदी 'समझ' में फारसी का 'दार' प्रत्यय लगाकर 'समझदार' और फारसी के 'गर्म' शब्द में हिंदी का 'आहट' प्रत्यय लगाकर 'गरमाहट' शब्द बना लिया गया है। फारसी के 'खर्च' शब्द में हिंदी का 'ईला' प्रत्यय लगाकर 'खरचीला' विशेषण और उसमें भी 'पन' प्रत्यय लगाकर भाववाचक संज्ञा 'खरचीलापन' बना लिया गया है। पर एक तो ऐसे शब्द बहुत थोड़े हैं और दूसरे ये कुछ समझ–बूझकर बनाए गए हैं, तिस पर बहुत दिनों से प्रचलित रहने के कारण ये अच्छी तरह मँज भी गए हैं। पर यदि इन शब्दों की देखादेखी हम नित्य इस तरह के नए शब्द गढ़ते रहेंगे तो हमारी भाषा का रूप इतना बिगड़ जाएगा कि वह जल्दी समझ में आने योग्य ही न रह जाएगी और

दूसरे लोग उसे देखकर हँसेंगे। 'बरसगाँठ' हिंदी का शब्द है। अब यदि हम इसमें संस्कृत का 'उत्सव' शब्द मिलाकर 'बरस-गाँठोत्सव' बना लें तो वह भद्दा ही होगा। कुछ लोग 'कुछ' और 'एक' को मिलाकर 'कुछेक' या 'हर' और 'एक' को मिलाकर 'हरेक' लिखते हैं, जो ठीक नहीं है। हिंदी के 'झंडा' और 'अछूत' शब्दों में कुछ लोगों ने संस्कृत 'अभिवादन' और 'उद्धार' शब्द जोड़कर 'झंडाभिवादन' और 'अछूतोद्धार' बना लिए हैं, जो अब खूब चल पड़े हैं। 'मंजूरीपत्र', 'सजाप्राप्त', 'नमूनार्थ' और 'जाँचकर्ता' भी इसी प्रकार के शब्द हैं, जिनमें खटक है। यदि सब लोग इसी प्रकार मनमाने ढंग से नए शब्द बनाने लगेंगे तो भाषा की दुर्दशा हो जाएगी। इसलिए विद्यार्थियों को इस प्रकार के नए शब्द बनाने के फेर में नहीं पड़ना चाहिए; और पहले से बने हुए शब्दों का भी अच्छी तरह सोच-समझकर प्रयोग करना चाहिए।

बहुत-से लोग अरबी-फारसी आदि के शब्द भी मनमाने और अशुद्ध रूप में और प्राय: अशुद्ध अर्थ में लिख जाते हैं, जैसे – 'मुबारक' को 'मुबारिक' और 'सिफरिस' को 'शिफारिस'। कुछ लोग उर्दूवालों की देखा-देखी 'बरात' और 'चलान' की जगह 'बारात' और 'चालान' लिख जाते हैं। अब ये शब्द खूब चल भी रहे हैं। कुछ लोग विदेशी शब्दों को संस्कृत रूप देना चाहते हैं। ऐसे लोग 'कार्रवाई' की जगह 'कार्यवाही' शब्द का प्रयोग करते हैं; और इस बात का विचार करने की आवश्यकता नहीं समझते कि इन दोनों शब्दों के अर्थ एक-दूसरे से कितने दूर जा पड़ते हैं। 'कार्यवाही' का सीधा-सादा अर्थ होगा कार्य (या उसका भार) वहन करनेवाला; और इस अर्थ का 'कार्रवाई' से कुछ भी संबंध नहीं है। कभी-कभी कुछ अशिक्षित या कम शिक्षित लोग 'पसन्द' की जगह और उसके अर्थ में 'प्रसन्न' का प्रयोग कर जाते हैं, ऐसा नहीं करना चाहिए। लिखने से पहले सदा अच्छी तरह शब्दों के रूप, अर्थ और प्रयोग समझ लेने चाहिए और यदि अपनी समझ में न आए तो किसी बड़े से पूछ लेना चाहिए। किसी से पूछ लेना बुरा नहीं है; बुरा है बिना समझे-बूझे अशुद्ध लिखना।

संस्कृत में कुछ शब्दों का अंतिम व्यंजन हलन्त लिखा जाता है, जैसे – महान्, कदाचित्। संस्कृतनिष्ठ हिंदी लिखनेवाले अब भी उक्त शब्द उसी रूप में लिखते हैं परंतु अधिकतर हिंदी लेखक महान और कदाचित ही लिखते हैं।

3

शब्दों के अर्थ

यहाँ हम शब्द और अर्थ के संबंध में पहले एक-दो मुख्य बातें बतला देना चाहते हैं। पहले हमें यह देखना चाहिए कि शब्द में अर्थ कहाँ से आता है। यदि ध्यानपूर्वक देखा जाए तो पता चलेगा कि अर्थ कभी शब्द में से निकलता नहीं है, बल्कि वह शब्द के साथ लगा दिया जाता है; या यों कहना चाहिए कि किसी तरह लग ज़ाता अथवा मान लिया जाता है। एक ही शब्द का हमारी भाषा में कुछ और अर्थ होता है, दूसरी भाषा में कुछ और। हिंदी में 'पास' का जो अर्थ है, वह अंग्रेजी में नहीं है, बल्कि कुछ और अर्थ है। यही बात हिंदी 'बिल' और अंग्रेजी 'बिल' के संबंध में भी है। फिर हम जिसे 'पुस्तक' कहते हैं, उसे उर्दू-फारसी वाले 'किताब' कहते हैं और अंग्रेजी वाले 'बुक' (Book) कहते हैं। हम जिसे 'पाठशाला' कहते हैं, उसे फारसी वाले 'मदरसा' और अंग्रेजी वाले 'स्कूल' कहते हैं। इससे सिद्ध होता है कि पुस्तक, किताब और बुक या पाठशाला, मदरसा और स्कूल शब्दों में कोई ऐसी बात नहीं है जिससे कोई विशेष अर्थ निकलता हो। आप कहेंगे, 'पाठ' का अर्थ है-पढ़ना; और 'शाला' का अर्थ है-घर। दोनों के मेल से 'पाठशाला' शब्द बना है; और इसका अर्थ है-वह जगह, जहाँ पढ़ाई होती हो। पर यदि पूछा जाए कि 'पाठ' का अर्थ पढ़ना या 'शाला' का अर्थ घर कहाँ से आया, तो इसका यही उत्तर होगा कि ये अर्थ मान लिए गए हैं। मतलब यह कि हम कोई शब्द बना लेते हैं और उसका एक अर्थ मान लेते हैं; और तब उस शब्द का अर्थ चल पड़ता है। इससे अधिक और कुछ नहीं।

पर आप पूछ सकते हैं कि एक ही शब्द के कई-कई अर्थ क्यों होते हैं और कहाँ से आ जाते हैं, यह प्रश्न विचार करने योग्य है। होता यह है कि पहले

कोई शब्द बनता है और उसका एक अर्थ मान लिया जाता है। फिर उस शब्द का उससे मिलते-जुलते कुछ और अर्थों में भी प्रयोग होने लगता है। 'मुँह' शब्द लीजिए। इसका पहला अर्थ है-हमारे शरीर का वह अंग जिससे हम खाते-पीते हैं। पहले 'मुँह' शब्द इसी अर्थ में चलता था। धीरे-धीरे उसका अर्थ बढ़कर हो गया-सारा चेहरा, जिसमें आँखें, नाक, गाल, माथा, ठोढ़ी आदि सभी आ गए। हम कहते हैं न-'अपना मुँह तो पहले शीशे में देखो।' फिर जब हमने देखा कि लोटे में भी मुँह की तरह छेद होता है और उसी छेद के द्वारा उसमें चीजें डाली और उसमें से निकाली जाती हैं, तब हम उसे भी 'लोटे का मुँह' कहने लगे। और आगे बढ़ने पर जब हमें कोई फोड़ा या फुन्सी हुई और उसमें भी एक छोटा-सा छेद हो गया, तब वह छेद भी 'फोड़े का मुँह' कहलाने लगा। शब्दों के अर्थ इसी प्रकार धीरे-धीरे बढ़ते हैं। इसीलिए एक ही शब्द अलग-अलग अवसरों पर अलग-अलग अर्थ भी देता है। चलना क्रिया का अर्थ है-पैरों के द्वारा आगे बढ़ना। पहियोंवाले यंत्र भी आगे बढ़ते हैं, इसीलिए उनके संबंध में चलना प्रयुक्त होने लगा। जब नाव या जलयान को बिना पहियों के भी आगे बढ़ते देखा गया तो उनके संबंध में भी चलना का प्रयोग होने लगा। बढ़ते-बढ़ते तीर भी चलने लगे, मशीनें भी चलने लगीं और गोलियाँ, बंदूकें और बम भी चलने लगे। हम कहते हैं-अब हमारा शरीर नहीं चलता। यहाँ 'चलना' का अर्थ है-काम देना। फिर हम यह भी कहते हैं-मरते समय पिता ने पुत्र से कहा कि बेटा, मैं तो अब चलता हूँ। यहाँ 'चलना' का अर्थ है-मरना या संसार छोड़कर परलोक जाना। इसी प्रकार 'चलना' का प्रयोग और भी अनेक अर्थों में होता है।

पर शब्दों के अर्थ बढ़ने का यहीं अंत नहीं होता। जब कई शब्द या कई तरह के शब्द एक साथ चलने लगते हैं; तब उनमें कुछ दूर-दूर के अर्थ आने लगते हैं। हम कहते हैं-यह मूर्ति पत्थर की है। अर्थ यह होता है कि जिस पदार्थ से यह बनी है, वह पत्थर है। पर हम यह भी कहते हैं-उसका कलेजा पत्थर का है। पर इसका अर्थ यह नहीं है कि कलेजा हड्डी और मांस से नहीं, पत्थर से बना है। 'पत्थर का कलेजा' का अर्थ है-पत्थर के समान कठोर कलेजा; अर्थात् जिसपर प्रार्थना आदि का कुछ भी प्रभाव न पड़े; अथवा जिसमें दया, प्रेम, सहानुभूति आदि (कोमलता के सूचक) गुण न हों। हम कोई कपड़ा रँगते हैं और तब देखते हैं कि उसपर अच्छी तरह रंग चढ़ा है या नहीं। उस समय कहते

हैं कि इस पर अच्छा रंग चढ़ा है या इस पर रंग अच्छा नहीं आया। यहाँ तक तो 'रंग चढ़ना' अपने साधारण अर्थ में रहा। न 'रंग' शब्द में कोई नया अर्थ लगा, न 'चढ़ना' में; पर आगे चलकर इस 'रंग चढ़ना' में कुछ और अर्थ या भाव आ मिलते हैं। जब हम देखते हैं कि एक आदमी के विचारों का दूसरे पर बहुत प्रभाव पड़ता है, तब हम कहते हैं–'इन पर भी उनका रंग चढ़ रहा है।' ऐसे अवसर पर न तो कहीं रंग होता है, और न चढ़ने, उतरने आदि की कोई क्रिया होती है। फिर भी 'रंग चढ़ना' बोला और समझा जाता है। ऐसे अवसर पर यह माना जाता है कि इन शब्दों का साधारण अर्थ तो छूट गया और इनमें नया अर्थ आ लगा है। इस तरह के नए अर्थों वाले पदसमूहों की गिनती मुहावरों में होती है।

शब्दों के अर्थ बढ़ते तो हैं ही, कभी–कभी घटते भी हैं; या यों कहना चाहिए कि नए अर्थों के आ जाने पर कुछ पुराने अर्थ छूट भी जाते हैं। उदाहरण के लिए 'स्वर्गवास' और 'गंगालाभ' सरीखे शब्द लीजिए। 'स्वर्गवास' का सीधा–सादा अर्थ है–स्वर्ग में निवास या रहना; और 'गंगालाभ' का अर्थ है–गंगा को किसी प्रकार प्राप्त करना। पर ये दोनों शब्द 'मृत्यु' के सूचक हो गए हैं; और अब अपने मूल अर्थों में कहीं इनका प्रयोग नहीं होता। 'द्विरागमन' का पहला और शाब्दिक अर्थ है दूसरी बार आना; पर एक बार कहीं आने के बाद जब दूसरी बार आदमी फिर वहीं आता है, तब उसे उसका 'द्विरागमन' नहीं कहते; क्योंकि यह शब्द अपना यह अर्थ छोड़कर दूसरे नए अर्थ में चलने लगा है और वह दूसरा नया अर्थ है–बहू का विवाह होने पर पहले–पहल पति के घर आने के बाद दूसरी बार कुछ रस्में होने पर फिर अपने पति के घर आना। 'सौभाग्यवती' का अर्थ है–बहुत अच्छे भाग्यवाली (स्त्री)। पर अब यह शब्द ऐसी स्त्रियों के लिए ही प्रयुक्त होता है, जो विवाहित हों तथा जिनके पति जीते हों अर्थात् जो सधवा हों। स्त्रियों को 'सौभाग्यवती' कहते समय हम उनके संबंध में इस बात का विचार नहीं करते कि वे सचमुच अच्छे भाग्यवाली हैं या किसी दृष्टि से अभागी भी हैं। और विधवा स्त्रियाँ चाहे सब तरह से अच्छे भाग्यवाली क्यों न हों, पर हम उन्हें कभी 'सौभाग्यवती' नहीं कहते। फिर हिंदी में 'कथा' का जो अर्थ है, बँगला में उसका वह अर्थ नहीं बल्कि कुछ और अर्थ होता है।

बाँग्ला में 'बात' को ही 'कथा' कहते हैं। हिंदी 'चेष्टा' का अर्थ है–प्रयत्न और मुख की आकृति; पर मराठी में 'चेष्टा' का अर्थ होता है–हँसी या परिहास। तात्पर्य यह कि कभी-कभी कुछ शब्द अपने पहले और वास्तविक अर्थ को छोड़कर कुछ दूसरे अर्थों में प्रचलित हो जाते हैं। ऐसे नए अर्थ उन शब्दों के 'रूढ़ अर्थ' कहलाते हैं। इसलिए जो शब्द जिस अर्थ में रूढ़ हो चुका हो, अर्थात् चल रहा हो, उसका प्रयोग उसी अर्थ में करना चाहिए; उसके मूल शाब्दिक अर्थ में नहीं करना चाहिए।

शब्दों के अर्थ के संबंध में ध्यान रखने की एक बात और है। प्रायः सब शब्दों के कुछ अलग-अलग अर्थ होते हैं। बहुत-से ऐसे शब्द होते हैं जो ऊपर से देखने में बहुत-कुछ एक-से जान पड़ते हैं, फिर भी जिनके अर्थों में थोड़ा-बहुत अंतर अवश्य होता है। आप यह तो जानते ही हैं कि 'रंग' और चीज है, 'रंगत' और चीज। 'रंग' एक पदार्थ का सूचक है, इसलिए पदार्थवाचक संज्ञा है और 'रंगत' एक प्रकार की अवस्था की सूचक है, इसलिए भाववाचक संज्ञा है। जहाँ हम 'रंग' शब्द का प्रयोग कर सकते हैं, वहाँ 'रंगत' शब्द का प्रयोग नहीं कर सकते। इसी प्रकार हमें यह भी समझ रखना चाहिए कि जहाँ हम 'रंग चढ़ना' का प्रयोग कर सकते हैं, वहाँ 'रंगत चढ़ना' का प्रयोग नहीं कर सकते। 'रंग चढ़ना' कुछ ऊँचे दरजे की और आगे बढ़ी हुई बात है; 'रंगत चढ़ना' उससे कुछ नीचे या हलके दरजे की या उससे कुछ घटकर बात है। जब किसी पर दूसरे का पूरा प्रभाव पड़ता है, तभी हम कहते हैं–इन पर उनका रंग चढ़ा है। पर जब थोड़ा हलका प्रभाव पड़ता है, तब हम कहते हैं–इन पर भी उनकी रंगत चढ़ने लगी है। इसलिए हमें किसी शब्द या मुहावरे का प्रयोग करते समय अच्छी तरह यह जान लेना चाहिए कि उसका ठीक अर्थ या भाव क्या है। यदि अर्थ का पूरा विचार किए बिना शब्दों और मुहावरों का प्रयोग किया जाएगा, तो यह निश्चय है कि उससे ठीक अर्थ के बदले कुछ और या उलटा अर्थ निकलने लगेगा, इसलिए सदा अर्थ का ध्यान रखते हुए लिखना चाहिए।

हम जो कुछ कहते या लिखते हैं, वह इसीलिए कि सुनने या पढ़नेवाले हमारे मन का भाव समझें। यदि हमारी बात का भाव या अर्थ किसी की समझ में न आए, तो हमारा बोलना या लिखना व्यर्थ हो जाएगा। 'व्यर्थ' कहते ही उसे हैं,

जिसका कुछ भी अर्थ न हो। इसलिए हम जो कुछ कहें या लिखें, वह ऐसा होना चाहिए कि उसका ठीक-ठीक अर्थ निकले और वह सबकी समझ में आए। उदाहरण के लिए हम कहते हैं–वे उसके साथ लड़ रहे हैं। आप इसका क्या अर्थ समझेंगे? वे उससे लड़ रहे हैं ? या वे लड़ने में उसका साथ दे रहे हैं? प्रायः लोग 'वे उनसे लड़ रहे हैं' के अर्थ में 'वे उनके साथ लड़ रहे हैं' का प्रयोग करते हैं, जिससे पढ़नेवालों को भ्रम हो सकता है। वास्तव में 'वे उनके साथ लड़ रहे हैं' भी अर्थ के विचार से उसी प्रकार का वाक्य है, जिस प्रकार का–'वे उनके साथ जा रहे हैं।' यदि हम कहें – 'यह रोग अच्छा नहीं होता' तो इसके दो अर्थ हो सकते हैं। एक तो यह कि यह रोग बुरा या खराब होता है; दूसरे यह कि यह रोग जल्दी दूर नहीं होता। यदि हम पहला भाव प्रकट करना चाहें तो हमें कहना चाहिए–'यह रोग अच्छा नहीं है' या 'बुरा या खराब है'। और यदि दूसरा भाव प्रकट करना चाहें तो हमें कहना चाहिए–'यह रोग जल्दी दूर नहीं होता' या 'इससे छुटकारा पाना कठिन होता है'। मतलब यह कि बोलने या लिखने के समय वास्तविक उद्देश्य या अर्थ पर ध्यान रखना बहुत आवश्यक है।

अर्थ के विचार से हमें बहुत-सी बातों का ध्यान रखना पड़ता है। पहली बात यह है कि अर्थ बिलकुल स्पष्ट होना चाहिए। हमारी बात का अर्थ समझने के लिए किसी को कोई विशेष प्रयत्न न करना पड़े। इसके लिए हमारे वाक्य की बनावट बिलकुल सीधी होनी चाहिए। हम जो कुछ कहें या लिखें, वह बिलकुल सीधे ढंग से। उसमें किसी तरह का हेर-फेर, घुमाव-फिराव या बल-पेच नहीं होना चाहिए। यदि हम कहें–'आपके मन में किसी प्रकार का भ्रम उत्पन्न न हो' तो यह कहने का एक सुंदर ढंग अवश्य है, पर इसमें कुछ घुमाव-फिराव या बल-पेच भी है। यह बात बिलकुल सीधी तरह से इस प्रकार कही जा सकती है–आपको किसी प्रकार का भ्रम न हो। 'उसने सामान की तोड़-फोड़ की' कहने से 'उसने सामान तोड़-फोड़ डाला'; 'उसने लाल रंग के पुष्प का विक्रय किया' कहने से 'उसने लाल रंग का फूल बेचा'; 'इसे दंगा कहकर पुकारना ठीक नहीं' की जगह 'इसे दंगा कहना ठीक नहीं' और 'उनकी बातें सुनकर मैं कंपायमान हो गया' कहने से 'उनकी बातें सुनकर मैं काँप गया

(या काँप उठा)' कहना अधिक सीधा और सहज है। ऐसे कुछ और वाक्य लीजिए–

1. इस काम में सरकार किसी प्रकार की हिचक न करेगी।
2. तुम्हारा साहस तो कम नहीं दिखाई देता।
3. बहुत-से लोग इस धारणा के बन गए हैं।
4. आपने दिल्ली जाते समय यहाँ यात्रा भंग की थी।
5. बहुत-से शब्द लेखकों की लेखनी की नोक पर अशुद्ध हो गए हैं।
6. जो चोटें उन्हें सहनी पड़ी थीं, उनके फलस्वरूप वे बुरी तरह से घायल हुए हैं।
7. इससे अर्थमंत्री में घबराहट उत्पन्न हो गई है।
8. उन्होंने इस विषय में अपने अनुराग का परिचय दिया।

ये सब बातें बिना घुमाव-फिराव के सीधी तरह से नीचे लिखे रूपों में कही जा सकती है–

1. इस काम में सरकार को कोई हिचक न होगी।
2. तुममें साहस तो कम नहीं है।
3. बहुत-से लोगों की यह धारणा हो गई है।
4. आप दिल्ली जाते समय यहाँ ठहरे थे।
5. बहुत-से शब्द लेखकों की लिखाई से अशुद्ध हो गए हैं।
6. उन चोटों से वे बुरी तरह से घायल हुए हैं।
7. इससे अर्थमंत्री घबरा गए हैं।
8. उन्होंने इस विषय में अनुराग दिखलाया।

यह ठीक है, कुछ अवसरों पर अधिक प्रभाव डालने के लिए कुछ बातें विशेष ढंग से कहनी पड़ती हैं; पर ऐसे ढंग धीरे-धीरे अभ्यास करने से ही आते हैं। आरंभ में तो विद्यार्थियों को सब बातें बिलकुल सीधी तरह से कहने और लिखने का ही अभ्यास करना चाहिए। कुछ घुमाव-फिराव से कहने या अधिक प्रभाव डालने के ढंग का समय तो बाद में आता है। विद्यार्थियों को उचित है कि पहले सहज शब्दों में और सीधे ढंग से अपने मन का भाव प्रकट करने का

अच्छी तरह अभ्यास कर लें; तब कठिन शब्दों और जटिल प्रयोगों की ओर बढ़ें। इससे सहज में लिखने का अच्छा अभ्यास हो सकेगा।

अर्थ के विचार से ध्यान रखने की दूसरी बात यह है कि हमारे वाक्यों में एक ही अर्थ या भाव प्रकट करनेवाले एकसाथ दो शब्द न आएँ, जैसे–'उन्होंने अपनी कविता स्वयं आप पढ़कर सुनाई थी।' इसमें 'स्वयं' और 'आप' दो शब्द साथ–ही–साथ आए हैं, जिनका अर्थ एक ही है। इसलिए इसमें 'स्वयं' व्यर्थ है। 'वे अपनी शक्ति और बल से सबको वश में रखते हैं' में 'शक्ति' और 'बल' एक चीज हैं, इसलिए दोनों में से किसी एक शब्द का प्रयोग करना चाहिए। 'इधर आज–कल यह देखने में आ रहा है' में या तो केवल 'इधर' होना चाहिए या 'आज–कल'। 'सिवा आपको छोड़कर कोई ऐसी बात कोई नहीं कहता' में 'सिवा' और 'छोड़कर', 'सारे देश भर में यह बात फैल गई' में 'सारे' और 'भर', 'मैं पूरी शक्ति भर वह काम करूँगा' में 'पूरी' और 'भर', 'उसके मन की थाह का पता नहीं चलता था' में 'थाह' और 'पता' अथवा 'किसी और दूसरे आदमी को वहाँ भेजो' में 'और' और 'दूसरे' का एक ही अर्थ हैं; इसलिए ये सब वाक्य अर्थ की दृष्टि से ठीक नहीं। 'इससे मर्यादा की सीमा टूट गई है।' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि 'मर्यादा' में सीमा का ही बहुत–कुछ भाव है। 'आप अपनी ताकत के बल पर यह काम करना चाहते हैं' में 'ताकत' यद्यपि किसी और अर्थ में और 'बल' किसी और अर्थ में आया है, फिर भी दोनों शब्दों के अर्थ बहुत–कुछ एक–से हैं, इसलिए वाक्य कुछ भद्दा जान पड़ता है। 'लेकिन फिर भी मैं आपकी बात मान लूँगा' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि जो अर्थ 'लेकिन' का है, बहुत–कुछ वही अर्थ 'फिर भी' का भी है। 'मैं आज प्रात:काल के समय वहाँ गया था' में 'काल' और 'समय' एक ही बात के सूचक हैं; इसलिए इसमें 'के समय' व्यर्थ है। 'वे लोग परस्पर एक दूसरे को संदेह की दृष्टि से देखते थे' में 'परस्पर' और 'एक दूसरे को' एक ही अर्थ के सूचक हैं; इसलिए या तो केवल 'परस्पर' होना चाहिए, या केवल 'एक दूसरे को'। 'वह इस बात की व्यवस्था का कोई प्रबंध नहीं कर सकता था' में 'व्यवस्था' और 'प्रबंध' एक ही बात के सूचक हैं, इसलिए होना चाहिए–'वह इस बात की कोई व्यवस्था नहीं कर सकता था' या 'वह इस बात का कोई प्रबंध नहीं कर सकता था'। 'हमारे यहाँ

तरुण नवयुवकों की शिक्षा का अच्छा प्रबंध है' में 'तरुण' इसलिए व्यर्थ है कि 'नवयुवक' सदा 'तरुण' ही होते हैं, वृद्ध या बालक नहीं होते। 'कृपया आप ही बताने का अनुग्रह करें' में 'कृपया' का भी वही अर्थ है जो 'अनुग्रह करें' में आया है। इसमें या तो आरंभ में 'कृपया' नहीं होना चाहिए, या वाक्य का रूप होना चाहिए–'कृपया आप ही यह बताएँ।' 'उन्हें अपने अहंकार का गर्व है' में 'अहंकार' और 'गर्व' एक ही अर्थ के सूचक हैं; और 'उन्हें मृत्यु-दंड की सजा मिली है' में 'दंड' और 'सजा' दोनों एक ही बात प्रकट करते हैं। 'यह एक ऐसा कार्य है जो मुझसे संभव नहीं हो सका है' में 'संभव' और 'हो सका' एक ही भाव के सूचक हैं। 'संभव' का अर्थ ही है 'हो सकना' इसलिए जहाँ 'संभव' रखा जाए, वहाँ 'हो सकना' की आवश्यकता नहीं और जहाँ 'हो सकना' का कोई रूप हो, वहाँ 'संभव' का प्रयोग नहीं होना चाहिए। 'यह काम क्योंकर और कैसे हुआ ?' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि 'क्योंकर' का अर्थ भी वही है, जो 'कैसे' का है। 'हाँ, हम यह अवश्य कह सकते हैं–यह काम क्यों और कैसे हुआ ?' 'क्यों' से होने का कारण जानने की इच्छा प्रकट होती है, और 'कैसे' से उस होने का प्रकार। 'उन्हें व्यर्थ रुपए देने से कोई लाभ नहीं' में 'व्यर्थ' और 'कोई लाभ नहीं' दोनों एक भाव के सूचक हैं। इसलिए या तो होना चाहिए 'उन्हें रुपए देने से कोई लाभ नहीं' या 'उन्हें रुपए देना व्यर्थ है'। 'इसके बाद फिर यह हुआ कि...।' में 'फिर' का भी वही अर्थ है, जो 'इसके बाद' का है। इसलिए या तो होना चाहिए–'इसके बाद यह हुआ कि...।' या 'फिर यह हुआ कि...।' 'थोड़ी देर बाद वे वापस लौट आए' में 'वापस' का भी वही अर्थ है जो 'लौट आए' का है। इसलिए होना चाहिए–'इसके बाद वे लौट आए' या 'इसके बाद वे वापस आए'। पर हमारी भाषा में पहले से 'लड़ाई-झगड़ा', 'धन-दौलत', 'मार-पीट' और 'पान-पत्ता' सरीखे जो शब्द बोलचाल में चले आ रहे हैं, उनके संबंध में किसी को आपत्ति नहीं हो सकती।

तीसरे, अर्थ की दृष्टि से इस बात का भी ध्यान रखना पड़ता है कि वाक्य में शब्द एक ही मेल के हों। 'अभी महीनों तक यह कार्य जारी रहेगा' में 'कार्य' और 'जारी' एक मेल के शब्द नहीं हैं। 'कार्य' के साथ 'चलता रहेगा' का ही मेल बैठता है; हाँ, 'काम' के साथ 'जारी रहेगा' का अवश्य मेल बैठता है। '10

मनुष्य मरे और 27 आदमी घायल हुए' में 'मनुष्य' और 'आदमी' एक मेल के शब्द नहीं हैं। या तो दोनों जगह 'मनुष्य' होना चाहिए या दोनों जगह 'आदमी'। यदि दूसरी जगह 'मनुष्य' या 'आदमी' में से कुछ भी न रहे, अर्थात् वाक्य का रूप हो–'10 आदमी मरे और 17 घायल हुए' तो भी अच्छी तरह काम चल सकता है। 'आपकी बुद्धि ठीक राह छोड़कर गलत रास्ते पर चलने लगी है' कहने से तो यही जान पड़ता है – 'राह' कोई और चीज है, 'रास्ता' कोई और चीज। इसलिए दोनों जगह या तो 'राह' होना चाहिए, या 'रास्ता'। यह भी नहीं होना चाहिए कि आरंभ में तो ऐसे शब्द आएँ, जिनका पहले के शब्दों से मेल न बैठे, जैसे–'हिंदी की ऐसी खिचड़ी बन जाएगी जो किसी की समझ में न आएगी'। पर 'खिचड़ी' समझ में आने की चीज नहीं है। हम अधिक-से-अधिक यह कह सकते हैं–'हिंदी की ऐसी खिचड़ी बन जाएगी जिससे हमारा काम न चलेगा'। इसी प्रकार 'इस समस्या की बहुत अच्छी दवा उनके पास है' कहना भी ठीक नहीं है; क्योंकि 'समस्या' का या तो निराकरण होता है, हल होता है या इलाज होता है। 'दवा' तो रोग की होती है। यह तो वैसी बात हुई, जैसी–आजकल बाजार में बूँद भर भी कपड़ा मिलना कठिन है। 'बूँद' का मेल तो पानी, दूध, रस आदि के साथ ही बैठता है, कपड़े, किताब या अनाज आदि के साथ नहीं। 'कोलकाता' में जाली नोटों की टकसाल पकड़ी गई' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि नोट प्रेसों में छपते हैं, टकसालों में छपते, ढलते या बनते नहीं। टकसालों में तो सिक्के ढलते हैं। 'अंग्रेजों ने वहाँ हत्या और धोखेबाजी का खूब प्रयोग किया' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि 'धोखेबाजी' के साथ तो 'प्रयोग' शब्द जैसे-तैसे चल भी सकता है, पर 'हत्या का प्रयोग किया' का कुछ भी अर्थ नहीं होता।

चौथे, अर्थ की दृष्टि से वाक्य कभी अधूरे नहीं होने चाहिए। 'देश की जितनी दुर्दशा हो रही है, उतनी पहले कभी नहीं हुई थी' अधूरा वाक्य है। इस वाक्य के आरम्भ में 'आज-कल' या 'इस समय' होना चाहिए। 'संस्कृत में जो स्थान वाल्मीकि-कृत रामायण का है, वही तुलसी-कृत रामायण का है' भी अधूरा वाक्य है। होना चाहिए–'वही हिंदी में तुलसी-कृत रामायण का है' नहीं तो यह अर्थ निकलेगा कि संस्कृत में तुलसी-कृत रामायण का भी वही स्थान है जो वाल्मीकि-कृत रामायण का है। 'तुम्हारे भाई ने कल घर पर जो किया था,

वही तुम भी कर रहे हो' का अंतिम वाक्यांश होना चाहिए–'वही आज तुम भी यहाँ कर रहे हो'।

अर्थ का बहुत-कुछ संबंध वाक्य की बनावट से होता है। इस संबंध की बहुत-सी बातें आगे 'वाक्यों की बनावट' वाले प्रकरण में बतलाई गई हैं। यहाँ हम यही बतलाना चाहते हैं कि हम एक ही बात कई तरह से कह सकते हैं, पर हर तरह से कही हुई बात का अर्थ भी कुछ अलग तरह का हो सकता है। यदि हम कहें – 'इसमें एक काम और बढ़ जाता है', तो इसका यह मतलब होता है कि वह काम बढ़ने से हमारी परेशानी और बढ़ जाएगी। पर यदि हम कहें–'इसमें एक ही काम तो और बढ़ता है' तो इसका मतलब होगा कि वह बढ़ने-वाला काम हमारी दृष्टि में अधिक परेशानी का कारण नहीं। इस प्रकार हमारे वाक्य की बनावट से ही सुनने या पढ़नेवाले समझ लेते हैं कि वह काम हमारी दृष्टि में किस प्रकार है।

पाँचवें शब्दों का अर्थ सदा प्रसंग से लगाया जाता है। 'इन पेड़ों का दाम चुका दो' का ठीक आशय तब तक नहीं निकल सकता, जब तक यह मालूम न हो कि इसका प्रयोग किस प्रसंग में हुआ है। इसमें का 'पेड़ों' शब्द वृक्षों का भी सूचक हो सकता है और 'पेड़ा' नाम की प्रसिद्ध मिठाई (बहुवचन रूप में) का भी सूचक हो सकता है। इसलिए वाक्यों का अर्थ सदा प्रसंग के अनुसार लगाया जाता है। यह नहीं होना चाहिए कि हम बात तो कहें अपने मन (हृदय) की; पर आप हमारे उस मन को समझ लें, (चालीस सेर वाला वह बटखरा) जिससे गेहूँ, चावल आदि तौले जाते हैं। इस संबंध में ध्यान रखने की एक बात और है। वह यह कि बहुत-से शब्द ऐसे होते हैं, जिनका एक तो मुख्य या प्रधान अर्थ होता है; पर साथ ही कुछ गौण या अप्रधान अर्थ भी होते हैं। शब्द का मुख्य अर्थ ही अधिक प्रचलित होता है; गौण अर्थ कम प्रचलित होते हैं। जब इस प्रकार कोई शब्द किसी ऐसे अकेले वाक्य में आता है, जिसकी विशेष संगति नहीं होती, तब उस शब्द का वही मुख्य और अधिक प्रचलित अर्थ लिखा जाता है, जैसे–यह घोड़ा अच्छा चलता है। इस वाक्य में 'घोड़ा' उस प्रसिद्ध चौपाए का ही सूचक होगा, जिसपर सवारी की जाती है या जो गाड़ियों आदि में जोता जाता है। पर यदि हम कहें–'भूल से घोड़ा दब जाने के कारण गोली नौकर को

जा लगी' तब यहाँ प्रसंग के कारण 'घोड़ा' बंदूक या पिस्तौल के उस खटके या पुरजे का सूचक होगा, जिसे दबाने से वह चलती है और उसमें से गोली निकलती है। 'उन्होंने घोड़े से शह दी' तो यहाँ 'घोड़ा' शतरंज के एक मोहरे का सूचक होगा।

कभी-कभी बहुत ही थोड़े अंतर या एक आध शब्द के बढ़ने-घटने के कारण ही बात के अर्थ में भी बहुत अंतर होता है, जैसे-'मैं समझता हूँ, आप वहाँ जाएँगे'-और 'मैं समझता हूँ कि आप वहाँ जाएँगे'। यद्यपि पहले वाक्य में 'कि' का लोप हुआ है फिर भी इसका अर्थ दूसरे वाक्य से कुछ भिन्न है। पहले वाक्य का अर्थ यह है कि बोलनेवाला जो कुछ कह रहा है, पूरी दृढ़ता से कह रहा है-उसकी सत्यता में उसे कुछ भी संदेह नहीं है। उसके कहने में निश्चय का भाव है। पर दूसरे वाक्य में केवल 'कि' लग जाने के कारण निश्चय या दृढ़ता नहीं रह गई है; वह बिलकुल साधारण कथन हो गया है। इसमें बोलनेवाला अपना एक साधारण विचार बिना किसी निश्चय या जोर के, बिलकुल सामान्य रूप में कह रहा है।

कभी-कभी ऐसा होता है कि शब्दों से जो साधारण अर्थ निकलता है, उसके सिवा उनमें कुछ और छिपा हुआ अर्थ रहता है, जिस पर साधारणत: सब लोगों की दृष्टि नहीं जाती। भाषा के अच्छे पारखी ही वह छिपा हुआ आशय समझ सकते हैं। साहित्य में इस प्रकार का छिपा हुआ आशय 'ध्वनि' कहलाता है। मान लीजिए, हम कहते हैं-'हमारा ही नहीं, और भी अनेक विद्वानों का यही मत है'। अब यह वाक्य हम चाहे जिस भाव से कहें, पर इससे यह छिपा हुआ आशय या ध्वनि निकलती है कि हम भी अपनी गिनती विद्वानों में करते हैं। पर ऐसा कहना मूर्खता का लक्षण है। हाँ, यदि हम कहें - 'हमारा ही नहीं, अनेक विद्वानों का भी यही मत है' तो इससे वह ध्वनि नहीं निकल सकती, जो पहले वाक्य से निकली है। प्राय: लोग असावधानी से ही इस प्रकार के वाक्य लिख या कह जाते हैं, जिनसे निकलने वाले आशय या ध्वनि की ओर ध्यान जाने पर उन्हें दुखी या लज्जित होना पड़ता है। ऐसे ही एक भले आदमी ने एक बार भरी सभा में अपने व्याख्यान में कहा था-'हम सभी सज्जनों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए' अर्थात् उन्होंने अपने ही मुँह से अपने आपको भी 'सज्जन' कह

डाला था ! यदि हम बिना सोचे-समझे कहीं कह बैठें—'भगवान आपको सुबुद्धि दे' तो सुननेवाला यही समझेगा कि ये मुझमें सुबुद्धि का अभाव समझते हैं। इसलिए लिखने या बोलने के समय हमें अपनी बातों के अर्थ का तो ध्यान रखना ही चाहिए, इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि उनसे कोई ऐसा-वैसा आशय या ध्वनि न निकले।

शब्दों के अर्थ के संबंध में ध्यान रखने की दो बातें और हैं। हम पहले बता चुके हैं कि हम कहीं से कोई शब्द लेते हैं और अपनी आवश्यकता के अनुसार उसके अर्थ घटा-बढ़ा लेते हैं। उदाहरण के लिए 'दौड़ना' शब्द है। इसका सीधा-सादा मुख्य अर्थ है—बहुत जल्दी-जल्दी और बड़े-बड़े डग बढ़ाते हुए आगे की ओर चलना। हम स्वयं तो अपने पैरों से दौड़ते ही हैं, पर यह भी कहते हैं—'रेल दौड़ती है', और 'मोटर दौड़ा दो।' रेल या मोटर के पैर तो होते ही नहीं; फिर भी उनके संबंध में हम 'दौड़ना' का प्रयोग करते हैं। यही नहीं, हमारी आँखें भी दौड़ती हैं; मन भी दौड़ता है। ऐसे अवसरों पर 'दौड़ना' का प्रयोग करते समय हम इस बात का विचार नहीं करते कि आँखों या मन के न पैर होते हैं, न पहिए। जब इस प्रकार अर्थ के क्षेत्र में आगे बढ़ते हुए हम कुछ और दूर पहुँचते हैं, तब हम देखते हैं कि कुछ शब्दों के साधारण से भिन्न और बिलकुल नए या स्वतंत्र अर्थ भी बन जाते हैं। बस, यहीं से मुहावरों का क्षेत्र आरंभ होता है। हम कहते हैं—'आज-कल रिश्वत का बाजार गरम है' और 'उनका सारा जोश ठंडा हो गया'। यहाँ 'गरम' होने और 'ठंडा' होने का कुछ और ही अर्थ हो जाता है, जो गरमी या ठंडक से कुछ भी संबंध नहीं रखता। हम कहते हैं—'तुमने हमारे सारे परिश्रम पर पानी फेर दिया' या 'उनकी आशाओं पर पानी फिर गया'। वास्तव में ऐसे अवसरों पर न परिश्रम या आशाओं से पानी का कोई संबंध या संयोग होता है और न साधारण अवस्था में 'पानी फिरना' का कोई अर्थ होता है। 'पानी फिरना' एक विशेष प्रकार का प्रयोग है; और उसमें एक ऐसा विशेष अर्थ है, जो न तो 'पानी' के साधारण अर्थ से संबंध रखता है, न 'फिरना' से ही जिसका कोई लगाव है। चाहे किसी की नानी दस-बीस बरस पहले ही क्यों न मर चुकी हो, पर आज भी बात पड़ने पर कहा जाता है—'यह सुनते ही उसकी नानी मर गई'। हम इस बात का विचार नहीं करते कि उसकी नानी बहुत पहले मर चुकी है या अभी तक जीती है। पर 'नानी मरना' में हमने एक विशेष अर्थ लगा लिया है। जब हमें वह

अर्थ या भाव सूचित करना होता है, तब हम 'नानी मरना' का प्रयोग करते हैं। इसी प्रकार जब हम कहते हैं–'वह सिर पर पैर रखकर भागा' तब हम यह नहीं सोचते कि आदमी अपने सिर पर अपने पैर कैसे रख सकता है। और यदि मान लिया जाए कि वह किसी प्रकार रख भी ले, तो फिर भाग कैसे सकता है! 'सिर पर पैर रखकर भागना' एक मुहावरा है, जिसका अर्थ है–बहुत जल्दी कहीं से भागना। आँखें दिखाना, दाँत पीसना, कान पकड़ना, हाथ उठाना, पेट फूलना (जैसे–कुछ कहने के लिए हमारा पेट फूल रहा है) आदि सैकड़ों-हजारों मुहावरे हैं, जिनका कुछ विशेष अर्थ होता है।

कुछ मुहावरे ऐसे भी होते हैं, जो यों देखने में तो बिलकुल एक-से जान पड़ते हैं, पर जिनके अर्थों या भावों में बहुत अंतर होता है। उदाहरण के लिए हम यहाँ तीन वाक्य देते हैं–(1) बात की बात में सारा मैदान खाली हो गया। (2) वहाँ ढेर के ढेर कपड़े पड़े थे। और (3) तुमने मेरी किताब की किताब रख ली, और उलटे मुझे ही चोर बतलाते हो। इनमें 'बात की बात', 'ढेर के ढेर' और 'किताब की किताब' – ये तीन तरह के मुहावरे हैं, जो शब्दों के क्रम और पद की बनावट के विचार से देखने में बिलकुल एक-से जान पड़ते हैं; पर इन तीनों के अर्थों और भावों में बहुत अंतर है। 'बात की बात में' का अर्थ है–बहुत थोड़े समय में। इसमें बहुत कमी का भाव है। 'ढेर के ढेर' का अर्थ है–बहुत-से ढेर; और इसमें बहुतायत या अधिकता का भाव है। और 'किताब की किताब' का अर्थ है–किताब ही। इसमें न पहलेवाला कमी का भाव है, न दूसरा अधिकता का ही, बल्कि उसी 'किताब' के संबंध में निश्चय का भाव है; और उस पर अधिक जोर दिया गया है। इसलिए मुहावरों में शब्दों के साधारण अर्थ, रूप या क्रम का विचार छोड़कर हमें उनके विशेष अर्थ का भी ध्यान रखना पड़ता है। ऐसे मुहावरों के अर्थ पहले अच्छी तरह समझ लेने चाहिए और तब वहीं उनका प्रयोग करना चाहिए जहाँ वे अपना ठीक अर्थ दें।

कुछ अवस्थाओं में शब्दों के कुछ अर्थ उनके वास्तविक अर्थों से कुछ दूर तो जा ही पड़ते हैं, पर कुछ अवस्थाओं में उनके साधारण से बिलकुल उलटे या बिलकुल अलग प्रकार के भी अर्थ होते हैं। जब हम अपनी दुकान बंद करते हैं, तब कहते हैं–'हम दुकान बढ़ा रहे हैं'। दीया बुझाने को भी कहीं-कहीं 'दीया

बढ़ाना' कहते हैं। चूड़ियाँ स्त्रियों के सौभाग्य का चिह्न मानी जाती हैं इसलिए उनके संबंध में भी टूटना–तोड़ना या उतरना–उतारना आदि क्रियाओं का प्रयोग न करके कहा जाता है–'एक चूड़ी बढ़ (टूट) गई' या 'ये चूड़ियाँ बढ़ाकर (उतारकर) नई पहनो'। वैसे 'बढ़ाना' का अर्थ न बंद करना है, न टूटना या उतारना और न बुझाना। होता यही है कि हम कोई अनिष्ट, अशुभ या अप्रिय जान पड़ने वाली बात ऐसे रूप में कहते हैं, जिसमें वह हमें अनिष्ट, अशुभ या अप्रिय न जान पड़े। इसीलिए कहीं–कहीं लोग होली और चूल्हे के साथ 'जलाना' क्रिया का प्रयोग न करके 'मंगलना' क्रिया का प्रयोग करते हैं, जैसे–'होली मंगल गई', 'चूल्हा मंगल रहा है' आदि। ऐसे प्रयोग इसलिए मंगलभाषित कहलाते हैं कि हम इनके द्वारा अमंगल की जगह मंगल, अशिष्टता की जगह शिष्टता या अशुभ भाव की जगह शुभ भाव सूचित करनेवाले शब्द रखते हैं। इस प्रकार के प्रयोगों में शब्दों के वास्तविक अर्थ एक ओर रह जाते हैं; और उनमें ऐसे नए अर्थ आ लगते हैं, जो बिलकुल अलग प्रकार के या उलटे होते हैं। भाषा–विज्ञान में इस प्रकार होनेवाला परिवर्तन 'अर्थापदेश' कहलाता है। ऐसे अवसरों पर भी प्राथमिक या नित्य के चलते हुए अर्थ नहीं लगाए जाते, बल्कि कुछ विशेष अर्थ ही लगाए जाते हैं।

बहुत कुछ इसी से मिलते–जुलते कुछ और ऐसे अवसर होते हैं, जिनमें शब्दों के वास्तविक अर्थ से कुछ उलटा अर्थ निकलता है। ऊपर हम 'ध्वनि' के बारे में कुछ बातें बतला चुके हैं। अब हम जिस प्रसंग की बात कह रहे हैं, उसमें 'ध्वनि' का भी तत्त्व रहता है और 'मंगल– भाषित' की भी कुछ छाया रहती है। इसे व्यंग्य या ताना कहते हैं। इससे बात तो सदा कुछ या बहुत अच्छे ढंग से कही जाती है, पर अर्थ सदा बुरा या दूषित ही होता है। प्रायः किसी मूर्ख लड़के की मूर्खता–भरी बात सुनकर या मूर्खता का कोई कार्य देखकर लोग कहते हैं–'वाह ! तुम बड़े पंडित हो' या 'यही तो पंडितों के लक्षण हैं'। ऐसी बातों में व्यंग्य होता है; और इसका आशय यही होता है कि जिसके संबंध में ऐसी बातें कही जाती हैं, वह मूर्ख है। यदि हम किसी के विषय में कहें–'उसने अपने पिता के मुँह पर कालिख पोत दी' तो यहाँ 'कालिख पोतना' मुहावरा जिस अर्थ का सूचक है, उसमें व्यंग्य नहीं बल्कि वास्तविकता है। आशय यही है कि उसने ऐसा काम किया, जिससे उसके पिता की भी बदनामी हुई। पर यही बात इस

रूप में भी कही जा सकती है–'उसने अपने पिता के मुँह पर खूब चन्दन पोता'। इसमें के 'चन्दन पोतना' में व्यंग्य है, जो 'कालिख पोतना' में नहीं है। ऐसे अवसरों पर भी शब्दों के वास्तविक या मूल अर्थों की जगह सदा उलटे या बुरे अर्थ ही लगाए जाते हैं।

4

शब्दों का चुनाव

बोलने और लिखने के समय हमें सबसे पहले ठीक-ठीक शब्द चुनने की आवश्यकता होती है। हमें इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि हम अपने वाक्यों में वही शब्द लाएँ, जो हमारे मन के भाव ठीक तरह से प्रकट कर सकें। हमें चाहिए तो कुरता, पर यदि हम दुकानदार से माँगें धोती, तो हमें धोती ही मिलेगी। दुकानदार यह नहीं समझेगा कि हम वास्तव में कुरता चाहते हैं। यदि हम किसी को परिचय कराना चाहें गौ का, पर नाम लें घोड़े का और कहें कि उसके सिर पर दो सींग होते हैं, तो सुननेवाले हमें मूर्ख ही समझेंगे। हम कहते हैं–वह चलता है। अब इस वाक्य में से 'चलता' शब्द निकालकर और उसकी जगह दौड़ता, उछलता, कूदता, रेंगता, फिसलता, खिसकता, उड़ता आदि शब्द अलग-अलग लगाकर देखिए कि उसके अर्थों में कितना अधिक अंतर पड़ जाता है। इसलिए हमें प्रसंग के अनुसार ठीक-ठीक शब्दों का ही व्यवहार करना चाहिए। हमें संज्ञाएँ ही नहीं, विशेषण, क्रियाएँ और परसर्ग भी ऐसे ही चुननी चाहिए, जो सुनने या पढ़नेवाले पर हमारे मन का ठीक-ठीक अभिप्राय प्रकट कर सकें। जो शब्द सामने आ जाए, उसी से काम चलता करने की आदत नहीं डालनी चाहिए। हर शब्द खूब सोच-समझकर लेना चाहिए और उसके अर्थ का पूरी तरह से विचार करके उसे वाक्य में स्थान देना चाहिए।

हम कहते हैं–'एक गाँव में एक भला आदमी रहता था और एक चोर'। इससे सुननेवाले यही समझेंगे कि भला आदमी अलग रहता था और चोर अलग। उन दोनों में कोई संबंध नहीं था। पर यदि किसी के दो लड़के हों और उनमें से एक भला आदमी हो और दूसरा दुष्ट, तो हम कहेंगे–उनका एक लड़का भला आदमी और दूसरा दुष्ट था। इस वाक्य में 'दूसरा' शब्द यह सूचित

करता है कि उन दोनों में किसी प्रकार का संबंध था। यदि हम कहें–'आज पान वालों ने भी हड़ताल की है' तो इससे यही समझा जाएगा कि जिस तरह और बहुत-से दुकानदारों ने हड़ताल की है, उसी तरह पानवालों ने भी की है। पर यदि हम कहें–'आज पानवालों तक ने हड़ताल की है' तो इसका अर्थ यह होगा कि और हड़तालों के दिन पानवाले अपनी दुकानें बंद नहीं करते थे। पर आज उन लोगों ने भी हड़ताल की है। पहले वाक्य में भी 'भी' के कारण जोर तो है, पर उतना नहीं, जितना दूसरे वाक्य में 'तक' के प्रयोग से आया है। ठीक यही बात–'आप हमारी बात भी नहीं सुनते' और 'आप हमारी बात तक नहीं सुनते' के संबंध में भी है। अर्थ या भाव में इस प्रकार का अंतर और जोर शब्दों के ठीक चुनाव से ही आता है।

शब्द चुनते समय इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि वे ठीक अर्थ या भाव प्रकट करनेवाले हों; इस बात का भी ध्यान रखना पड़ता है कि वे सहज हों और सुननेवाले झट उनका अर्थ समझ लें। हमारे शब्द जितने ही कठिन होंगे, उनका अर्थ समझने में सुननेवालों को भी उतनी ही कठिनता होगी। यदि हम कहें–'आज हमारा पेट भरा है' तो हमारी बात समझने में किसी को कुछ भी कठिनता न होगी। पर यदि हम कहें–'आज हमारा उदर परिपूर्ण है' तो हमारी बात कुछ ही लोगों की समझ में आएगी, सब लोगों की समझ में न आएगी। यदि हम कहें–'क्या तुम्हें यह विदित है कि मैं इस कार्य में क्यों रत हुआ' अथवा 'आज मैं आपके सम्मुख (या समक्ष) अपना निवेदन उपस्थित करना चाहता हूँ, तो यह ऊँचे दरजे की हिंदी तो अवश्य होगी, पर सबके समझने योग्य न होगी। अधिक लोग तो तभी समझेंगे, जब हम कहेंगे–'क्या तुम जानते हो कि मैंने यह काम क्यों हाथ में लिया ?' अथवा 'आज मैं आपसे कुछ निवेदन करना चाहता हूँ ! 'वह आज प्रस्थित होनेवाला है' की जगह 'वह आज चलने (या जाने) वाला है' और 'हमारी नौका भ्रमरगत हो गई' की जगह 'हमारी नाव भँवर में पड़ गई' कहना अधिक अच्छा है। 'श्रवणेंद्रिय' की जगह 'कान', 'समीप' की जगह 'पास', 'शिखर' की जगह 'चोटी', 'भ्रमण' की जगह 'घूमना', 'परिचालन' की जगह 'चलाना' और 'अल्प समय पश्चात्' की जगह 'कुछ समय बीतने पर' कहना अच्छा भी है और सहज भी। सदा यह ध्यान रखना चाहिए कि कठिन शब्दों के प्रयोग से बनावट झलकती है; और सहज शब्द स्वाभाविकता

के सूचक होते हैं।

हम पहले बतला चुके हैं कि शब्द कितने प्रकार के होते हैं। उनमें दो मुख्य भेद तत्सम और तद्भव हैं। जब हम लिखने बैठें तब जहाँ तक हो सके, हमें तद्भव शब्द ही काम में लाने चाहिए। तत्सम शब्द व्यर्थ नहीं हैं; पर वे समझ-बूझकर और ठीक-ठिकाने पर ही काम में लाए जाने चाहिए। विद्यार्थियों को पहले ऐसी ही भाषा लिखने का अभ्यास करना चाहिए, जिसमें तद्भव शब्द अधिक हों। आगे चलकर बड़े होने पर और अच्छी विद्या या ज्ञान प्राप्त होने पर कठिन शब्द भी काम में लाए जा सकते हैं, पर बिलकुल आरंभ में ऐसा करना ठीक नहीं है।

एक बात और है। हमें लिखते या बोलते समय सबसे अधिक ध्यान इस बात का रखना चाहिए कि हमारी बातें पढ़ने या सुनने वाले कौन लोग हैं। हम बात तो करें अपने किसी साथी या छोटे से, पर भाषा ऐसी बोलें जो जल्दी बड़ों की भी समझ में न आए, जो लोग हम पर हँसेंगे ही। इसी प्रकार हम बात तो करें किसी बहुत ऊँचे विषय की, पर अपने शब्द रखें बिलकुल साधारण, तो फल यही होगा कि हम अपने सब भाव या विचार ठीक तरह से प्रकट न कर सकेंगे। इसलिए हमें सुनने या पढ़नेवालों का भी ध्यान रखना पड़ता है और विषय का भी; पर विद्यार्थियों को प्रायः सहज शब्दों से ही काम लेना चाहिए। बड़ों के ढंग पर बोलने या लिखने का काम बाद के लिए छोड़ रखना चाहिए।

पर हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि भाषा में सहज शब्द तो होते हैं कम और कठिन शब्द होते हैं अधिक। अच्छी भाषा वही होती है, जिसमें बहुत-से शब्द हों और सब शब्दों के अलग-अलग अर्थ या भाव हों। पर ऐसे शब्द और उनके सब अर्थ सब लोग नहीं जानते। इसलिए उन शब्दों में से भी चुनाव करते समय दो बातों का ध्यान रखना पड़ता है। एक तो यह कि वे शब्द अधिक-से-अधिक लोगों की समझ में आने के योग्य हों, और दूसरे यह कि वे ठीक-ठीक भाव या अर्थ प्रकट कर सकते हों। ये दोनों बातें ऐसी हैं, जिन्हें कभी भूलना नहीं चाहिए।

हर शब्द का अपना एक विशेष अर्थ या भाव होता है। कभी-कभी कुछ शब्द कुछ विशेष अर्थ में भी चल जाते हैं, जैसे - 'प्राणी' और 'जानवर'। यों

देखा जाए तो प्राण और जान दोनों एक चीज है। 'प्राणी' उसे कहते हैं, जिसमें प्राण हों और 'जानवर' उसे कहते हैं, जिसमें जान हो। इस प्रकार अर्थ के विचार से 'प्राणी' और 'जानवर' एक ही चीज हैं या हो सकते हैं। फिर भी हम सब जानवरों को तो 'प्राणी' कह सकते हैं, पर सब प्राणियों को 'जानवर' नहीं कह सकते। यदि कहें तो हम एक लड़ाई मोल लेंगे; क्योंकि 'जानवर' मुख्यत: पशु के अर्थ में ही प्रचलित है; और 'प्राणी' में पशुओं के सिवा मनुष्य भी आ जाते हैं।

'एक दिन किसी ने बादशाह से चुगली खाई कि ये गाना बहुत अच्छा जानते हैं' में चुगली शब्द ठीक नहीं है। कारण यह है कि चुगली या तो ऐसी झूठी बात को कहते हैं, जो किसी को हानि पहुँचाने के लिए किसी दूसरे से कही गई हो; या वह किसी के दोष या बुरी बात के संबंध में कही गई। यदि हम कोई बुरा काम करें और आप हमें हानि पहुँचाने के विचार से वह बात किसी दूसरे से कहें तो वह 'चुगली' कहलाएगी या यदि हम कोई बुरा काम न करते हों और आप व्यर्थ ही लोगों से कहें कि इसने ऐसा बुरा काम किया है, तो वह भी 'चुगली' कहलाएगी; बल्कि 'झूठी चुगली' कहलाएगी। पर 'बहुत अच्छा गाना जानना' न तो कोई बुरी बात है; और न किसी से उसका जिक्र करने से गाना जाननेवाले की कोई हानि हो सकती है। इसीलिए किसी के संबंध में यह कहना कि 'ये गाना बहुत अच्छा जानते हैं' कोई चुगली या शिकायत नहीं है। इसलिए होना चाहिए–'एक दिन किसी ने बादशाह से कह दिया...' 'इस प्रकार उसने अपनी सब कमजोरी पूरी कर ली' में 'पूरी' का प्रयोग ठीक नहीं है। 'पूरी' तो कमी होती है; 'कमजोरी' तो 'दूर' की जाती है। 'आज सिवा पास के वहाँ कोई नहीं जा सकता' में 'सिवा' का प्रयोग अशुद्ध है। इसकी जगह 'बिना' होना चाहिए। 'उनका दावा था कि हम न तो वाइसराय से बात करेंगे, न भारत-मंत्री से' में 'दावा' शब्द का प्रयोग इसलिए ठीक नहीं है कि दावा सदा ऐसी बात का होता है जो हुई हो, की जा चुकी हो या की जाने को हो। जो बात न हुई हो, न की गई हो या न की जाने को हो, उसके संबंध में 'दावा' का प्रयोग अशुद्ध है। हम यह तो कह सकते हैं–'हमारा दावा है कि हम यह काम कर दिखलाएँगे'। पर यह नहीं कह सकते–'हमारा दावा है कि हम यह काम नहीं करेंगे' और इन दोनों वाक्यों में अंतर है 'हाँ' और 'न' का– सकारात्मक और नकारात्मक का।

'पशुओं के झुंड चारों ओर पानी की चाह में घूम रहे थे' में 'चाह' की जगह 'खोज' या 'तलाश' रखना अधिक उत्तम होगा। किसी वस्तु की 'चाह' केवल होती है; 'चाह' में घूमना, फिरना आदि बातें नहीं होतीं; हाँ, 'चाह' के कारण ये सब बातें हो सकती हैं। 'उस पतिव्रता स्त्री को छूने का उत्साह कौन करेगा ?' में 'उत्साह' शब्द का प्रयोग ठीक नहीं है। वास्तव में इसकी जगह 'साहस' होना चाहिए। 'यह दुख उसे और भी पीड़ित करने लगा' में 'पीड़ित' शब्द ठीक नहीं है। दुख सदा मनुष्य को दुखी ही करता है; पीड़ित करना तो 'पीड़ा' या 'अत्याचार' आदि का काम है। 'उसके दल की जो धाक जमी थी, उसके लिए वे ही उत्तरदायी थे' में 'उत्तरदायी' का प्रयोग ठीक नहीं है। आदमी उत्तरदायी तो उसी काम के लिए होता है, जिससे कोई खराबी हो सकती हो, जिसका फल बुरा हो सकता हो या जिसकी गिनती कर्तव्य में हो; पर 'धाक जमना' इस तरह की कोई बात नहीं है। 'काश्मीर की समस्याओं की आँखों-देखी कहानी' ऐसा पद-समूह है, जो शब्दों के चुनाव के विचार से बहुत ही भद्दा और निरर्थक है। एक तो 'समस्याओं' की 'कहानी' नहीं होती; दूसरे 'कहानी' कभी 'आँखों-देखी' नहीं होती, वह सदा सुनी, पढ़ी या गढ़ी हुई होती है; 'आँखों-देखी' तो 'घटना' होती है। होना चाहिए–'घटनाओं का आँखों-देखा हाल'।

'राम-राम कहकर दशरथ ने अपनी जान गँवाई' में 'कहकर' और 'गँवाई' दोनों ठीक नहीं है। इन शब्दों के कारण वाक्य का यह अर्थ हो जाता है कि राम का नाम लेना मानो कोई अपराध हो; और उस अपराध का दंड दशरथ को मिला कि उन्हें जान से हाथ धोना पड़ा। फिर गँवाने या खोने में दो भाव मुख्य होते हैं–एक तो व्यर्थता का और दूसरा अनजानपन का; अर्थात् जब कोई चीज अनजाने में और व्यर्थ हमारे अधिकार से निकल जाए, तब हम कहते हैं–'हमने वह चीज गँवा या खो दी'। पर दशरथ ने तो जान-बूझकर प्राण दिए थे; और राम के लिए प्राण दिए थे; इसलिए इसे हम गँवाना या खोना नहीं कह सकते। होना चाहिए था–'राम-राम कहते-कहते दशरथ ने अपनी जान दे दी (या प्राण दे दिए)'। इसी कारण यह कहना भी ठीक नहीं है–'बाढ़ में दस हजार मनुष्यों ने प्राण खोए या गँवाए'। होना चाहिए–'बाढ़ में दस हजार मनुष्यों के प्राण गए'।

लिखने के समय इस बात का भी विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता

होती है कि वाक्यों में व्यर्थ के शब्द न आने पाएँ। जिन वाक्यों में व्यर्थ के या फालतू शब्द होते हैं, वे भद्दे होते ही हैं। कभी-कभी उन व्यर्थ के शब्दों के कारण ही वे अशुद्ध भी हो जाते हैं। वाक्यों में ऐसे व्यर्थ के शब्द या तो अज्ञान के कारण आ जाते हैं या असावधानी के कारण। कभी-कभी शब्दों के अर्थ पर ठीक ध्यान न रखने के कारण भी वाक्य में व्यर्थ के शब्द आ जाते हैं। जरा-सी सावधानी से वाक्य व्यर्थ शब्दों से बचाए जा सकते हैं।

उदाहरण के लिए, यदि हम कहें-'ठंडी बरफ' या 'गरम आग' तो इसमें 'ठंडी' और 'गरम' दोनों व्यर्थ हैं। बरफ सदा ठंडी होती है, कभी गरम नहीं होती और आग गरम होती है, कभी ठंडी नहीं होती। 'वह विलाप करके रोने लगा' में 'विलाप' और 'रोना' एक साथ रखना ठीक नहीं; या तो होना चाहिए-'वह विलाप करने लगा' या 'वह रोने लगा'। यदि हम कहें-'अच्छी तरह पाठ याद करना ही पास होने की सबसे बड़ी कुंजी है' तो इसमें 'सबसे बड़ी' व्यर्थ है। कारण यह है कि हर चीज की कुंजी एक ही होती है - दो, चार या दस नहीं होतीं; और न छोटी, बड़ी, मँझोली आदि प्रकार की होती है। यही बात 'एक बहुत बड़ी सीमा तक' के संबंध में भी है। हर बात की 'सीमा' सदा एक होती है; छोटी-बड़ी या कई प्रकार की सीमाएँ नहीं होतीं।

'आज हम लोग अपने प्रधान अध्यापक के यहाँ गए थे और वहाँ हम लोगों ने उनसे देर तक मुलाकात की' में 'देर तक' व्यर्थ है। कारण यह है कि 'मुलाकात' में वह सारा समय आ जाता है, जिसमें आदमी किसी के पास जाता है, उससे मिलता है, बैठकर उससे बातें करता है, और अंत में उससे विदा होकर लौटता है। 'चुनाव में विरोधी की जमानत बुरी तरह से जब्त हो गई' में 'बुरी तरह से' व्यर्थ है। जमानत जब्त होने के अच्छे और बुरे प्रकार नहीं होते। वह तो कुछ विशेष अवस्थाओं में एक ही तरह से जब्त होती है। 'चार हजार रुपए मूल्य की संपति' में 'मूल्य' व्यर्थ है; और 'उसने उसे ठोकर से ठुकरा दिया' में 'ठोकर से' व्यर्थ है; क्योंकि ठोकर लगाने को ही 'ठुकराना' कहते हैं।

'इस काम के लिए ऐसा आदमी चुना जाना चाहिए जो किसी समय इस पद पर रह चुका हो' में 'किसी समय' व्यर्थ है, क्योंकि 'इस पद पर रह चुका हो' में 'किसी समय' का भाव भी आ जाता है। 'वे अपनी प्रतिज्ञा के शब्दों पर दृढ़

रहे' में 'के शब्दों' व्यर्थ है, क्योंकि 'प्रतिज्ञा' में ही उसके शब्द भी आ जाते हैं। 'यदि युद्ध न छिड़ने के पूर्व यह कार्य आरंभ हुआ होता' में 'न' व्यर्थ आया है, क्योंकि इस प्रसंग में युद्ध छिड़ने का 'पूर्व' भी वही होगा, जो 'न छिड़ने के पूर्व' का है। 'आज से कई बरस पहले की बात है' में 'आज से' व्यर्थ है; क्योंकि बिना उसके अच्छी तरह काम चल जाता है। 'वे आगे बढ़ सकने का प्रयत्न कर सकते हैं' में 'बढ़ सकने' की जगह केवल 'बढ़ने' होना चाहिए। इस वाक्य में पहले 'सकने' और तब 'सकते' का प्रयोग होने के कारण भद्दापन तो आ ही गया है, दो जगह 'सकने' का प्रयोग ठीक नहीं।

'आप ऐसी बात कर रहे हैं, जिसका कि मुझे स्वप्न में भी ध्यान न था' और 'यह ऐसा सिद्धांत है, जिसकी कि सत्यता निश्चित है' में 'कि' बिलकुल व्यर्थ है और उसके प्रयोग से वाक्य भद्दे हो गए हैं। 'वह दो दिन बनारस में रहकर कलकत्ता जाएगा' में 'में' व्यर्थ है; 'तुम कभी तीज-त्योहार पर भी नहीं आते हो' में 'हो' निरर्थक है; और 'मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता हूँ' में 'हूँ' फालतू है।

और भी कई प्रकार से लोग फालतू या व्यर्थ के शब्दों का प्रयोग करते हैं, जैसे–'हमारे यहाँ सब चीजें किफायत से साथ मिलती हैं'। इसमें 'के साथ' का क्या अर्थ है ? अधिक से अधिक यही अर्थ हो सकता है कि हमारे यहाँ सब चीजें मिलती हैं, और उनके साथ 'किफायत' भी मिलती है। होना चाहिए–'किफायत से मिलती हैं'। 'सिप्रा उज्जयिनी के साथ बहनेवाली नदी है' का तो यही अर्थ होगा कि उज्जयिनी भी कोई बहनेवाली नदी (या नगरी ही सही) है और सिप्रा उसके साथ-साथ बहती है। होना चाहिए–'सिप्रा नदी उज्जयिनी के पास से होकर बहती है'। 'हमने उसके साथ परामर्श किया' और 'हमारी सहानुभूति आपके साथ है' में भी इसी 'के साथ' के कारण बहुत-कुछ वही बात आ गई है। होना चाहिए–'हमने उनसे परामर्श किया' और 'आपसे हमारी सहानुभूति है'। इसी प्रकार–'हमें उनके द्वारा विदित हुआ' से 'हमें उनसे विदित हुआ' कहना कहीं अच्छा और हलका है।

'आप चाहे यहाँ रहें और चाहे वहाँ जाएँ' में 'और' बिलकुल व्यर्थ तथा अशुद्ध है। 'और' तो दो बातों को जोड़ने के लिए आता है; बल्कि यह कहना

चाहिए कि ऐसी जगह आता है, जहाँ दो या अधिक बातें या चीजें एक साथ हों। यहाँ तो दो में से एक ही बात पूरी करने का अभिप्राय है, दोनों बातें पूरी करने का नहीं। इसलिए होना चाहिए–'आप चाहे यहाँ रहें चाहे वहाँ जाएँ'। यही बात 'या तो आप बैठे रहें और या चले जाएँ' के संबंध में भी है। इसमें भी 'और' व्यर्थ ही नहीं, अशुद्ध भी है। होना चाहिए–'या तो आप बैठे रहें या चले जाएँ'। इसके सिवा एक और तरह से लोग 'और' का व्यर्थ प्रयोग करते हैं, जैसे–'मेरे कपड़े, पुस्तकें और चिट्ठियाँ आदि सब यहाँ भेज दीजिए'। इस वाक्य में 'और' इसलिए व्यर्थ है कि इसमें 'चिट्ठियाँ' के बाद 'आदि' आया है। साधारण नियम यह है कि जब बहुत–सी चीजों (या आदमियों आदि) के नाम गिनाए जाते हैं तब अंतिम चीज (या आदमी) के नाम के पहले 'और' रखा जाता है, जैसे–'धोती, कुरता और टोपी' या 'राम कृष्ण और गोपाल'। पर यदि गिनाए जानेवाले नामों (या शब्दों) के अंत में 'आदि' रहे, तो अंतिम शब्द (या नाम) के पहले 'और' रखने की आवश्यकता नहीं होती। इसीलिए यह कहना तो ठीक है–'मेरे कपड़े, पुस्तकें और चिट्ठियाँ सब यहाँ भेज दीजिए', पर यह कहना ठीक नहीं है–'कपड़े, पुस्तकें और चिट्ठियाँ आदि सब यहाँ भेज दीजिए'।

5

शब्दों का स्थान

वाक्य में हर शब्द का अपना अलग स्थान होता है। जिस वाक्य में सब शब्द अपने ठीक स्थान पर होते हैं, वही शुद्ध भी होता है और सुंदर भी। 'लड़का जाता अपने घर है' या 'लड़का घर है अपने जाता' या 'है लड़का जाता अपने घर' कविता में भले ही ठीक बैठें, पर गद्य में इस तरह के वाक्य अच्छे नहीं माने जाते। गद्य में तो 'लड़का अपने घर जाता है' कहना ही ठीक माना जाता है। साधारणतः हम यही कहते हैं–'वह कल सवेरे जाएगा' या 'आप परसों मुझसे मिलिएगा'। जल्दी यह नहीं कहते–'जाएगा सवेरे वह कल' या 'मिलिएगा आप मुझसे परसों'। मतलब यह कि गद्य में वाक्य बनाने के जो नियम हैं, उनका सदा ध्यान रखना चाहिए, और उन्हीं नियमों के अनुसार वाक्य बनाने चाहिए। उपन्यासों, कहानियों, नाटकों आदि में कभी-कभी स्वाभाविकता लाने के लिए व्याकरण के कुछ नियमों के विरुद्ध, केवल बोलचाल की-सी जो बातें रखी जाती हैं, वे अलग हैं।

यदि गद्य में वाक्य बनाने के नियमों का ध्यान न रखा जाए जो भाषा में कई तरह के दोष आ जाते हैं। पहली बात तो यह है कि वाक्य व्याकरण के विचार से अशुद्ध हो जाता है। 'पुस्तक अच्छी बहुत है' अशुद्ध है; और 'पुस्तक बहुत अच्छी है' शुद्ध है। 'मोहन याद पाठ कर अपना रहा है' अशुद्ध है और 'मोहन अपना पाठ याद कर रहा है' शुद्ध है। 'आप जहाँ तक हो सके, इस बात का प्रयत्न करें' और 'मैंने जब तक संभव था, उन्हें कष्ट नहीं दिया' के बदले 'जहाँ तक हो सके, आप इस बात का प्रयत्न करें' और 'जब तक सम्भव था, तब तक मैंने उन्हें कष्ट नहीं दिया' कहना ही अधिक उपयुक्त है। 'वह अभी कहीं बैठ पाया नहीं है' से 'वह अभी कहीं बैठ नहीं पाया है' और 'यदि वे जो कुछ

हुआ है उसे ठीक न समझें' से 'जो कुछ हुआ है, उसे यदि वे ठीक न समझें' कहना कहीं अधिक सुंदर है। इस प्रकार के बहुत-से उदाहरण स्वयं सोचे और बनाए जा सकते हैं।

वाक्य में शब्द यदि अपने ठीक स्थान पर न हों तो कुछ अवसरों पर उनका अर्थ भी बदल जाता है। हम जिन अवसरों पर 'जी हाँ' कहते हैं, उन सभी अवसरों पर 'हाँ जी' नहीं कह सकते और जिन अवसरों पर 'हाँ जी' कहते हैं, उन सभी अवसरों पर 'जी हाँ' नहीं कह सकते। दोनों के कुछ अलग-अलग भाव हैं और अलग-अलग अवसरों पर उनका प्रयोग होता है। किसी बड़े के बुलाने पर हम प्रायः 'जी हाँ' कहते हैं; और बराबरवालों से या अपने से छोटों से बातचीत करते समय प्रायः कहते हैं–'हाँ जी, जरा यह तो बतलाओ'। यदि हम कहें–'हमें तो अभी उनके दोष ही दोष ही दिखाई देते हैं' तो इसका आशय यह होगा कि और लोगों को भले ही उनके गुण दिखाई देते हों, पर हमें दोष ही दिखाई देते हैं। पर यदि हम कहें–'हमें अभी तो उनके दोष ही दोष दिखाई देते हैं' तो इसका आशय यह हो जाएगा कि आगे चलकर किसी समय हमें उनके गुण भी दिखाई दे सकते हैं; अर्थात् पहले वाक्य में जो जोर 'हमें' पर था, वह दूसरे वाक्य में उसपर से हटकर 'अभी' पर आ गया। और यदि हम कहें–'हमें अभी उनके दोष ही दोष तो दिखाई देते हैं' तो वही जोर 'दोष ही दोष' पर आ जाएगा; और वाक्य का आशय यह हो जाएगा कि अभी हमें उनमें दोषों के सिवा और कुछ नहीं दिखाई देता।

'यह काम नहीं हो सकता' और 'यह काम हो नहीं सकता' या 'महाराज ही हैं' और 'महाराज हैं ही' अथवा 'सुलगाने के लिए आपको सलाई देता हूँ' और 'आपको सुलगाने के लिए सलाई देता हूँ' में जो अंतर है, वह स्पष्ट है। यही बात 'वह भी मुझे जानते हैं' और 'वह मुझे भी जानते हैं' के संबंध में भी है। 'वे सुख के ही सपने देखा करते हैं' और 'वे सुख के सपने ही देखा करते हैं' में भी बहुत अंतर है। इनमें से पहले वाक्य का भाव यह है कि वे दिन-रात सुख पाने का ही विचार करते रहते हैं–सुख के सिवा और किसी बात का उन्हें ध्यान ही नहीं आता; पर दूसरे वाक्य का भाव यह है कि वे सुखी होने का विचार तो करते रहते हैं, पर कोई ऐसा काम या उपाय नहीं करते, जिससे वे सुखी हो सकें। इसी प्रकार 'हम सत्य पर परदा नहीं डालना चाहते' बिलकुल साधारण

कथन है, पर 'हम सत्य पर सदा परदा डालना नहीं चाहते' का यह आशय हो जाएगा कि हो सकता है कि हम सत्य पर से परदा उठाना चाहते हों। और इसीलिए ऐसे अवसरों पर ही 'डालना नहीं चाहते' का प्रयोग ठीक होगा। 'इस महीने में वर्षा होगी' बिलकुल साधारण कथन है। इस वाक्य के शब्दों में जो अर्थ निकलता है, उसके सिवा और कोई अर्थ या भाव इसमें नहीं है। पर 'वर्षा इस महीने में होगी' में एक विशेष भाव है। ऐसा वाक्य वहीं आएगा, जहाँ हमें यह बतलाना होगा कि इसके पहले या बाद के महीनों में वर्षा नहीं होगी अर्थात् जहाँ हमें किसी महीने को और महीनों से अलग करके दिखलाना होगा। 'केवल अर्थ के बल पर' में 'अर्थ' पर जोर है; और 'अर्थ के बल पर ही' में 'बल' पर। 'एक दिन बूढ़े होने पर वे कुएँ पर बैठे थे' के बदले बूढ़े होने पर एक दिन वे कुएँ पर बैठे थे' या 'बुढ़ापे में एक दिन वे कुएँ पर बैठे थे' कहना ही अधिक ठीक होगा। 'एक दिन बूढ़े होने पर...' का तो अर्थ यही होगा कि मनुष्य एक दिन में बुड्ढा हो सकता है; और इसी तरह के किसी दिन, जब वे (उस दिन) बूढ़े हो गए तब कुएँ पर बैठे थे।

'बेंतों से भागे हुए लड़कों की मृत्यु' का अर्थ यह होगा कि जो लड़के बेंतों के डर या मार से भाग गए थे, उनकी मृत्यु हुई। पर यदि हम यह बतलाना चाहते हों कि जो लड़के भाग गए थे, उनपर बेंतों की ऐसी मार पड़ी कि वे मर गए, तो हमें कहना होगा–'भागे हुए लड़कों की मृत्यु बेतों से हुई'। 'मुंबई में सुभाष–दिवस पर गोलियाँ चलीं' का यह अर्थ लगाया जा सकता है कि सुभाष–दिवस भी आदमियों की भीड़ की तरह की कोई चीज होगी। पर यदि हम कहें–'सुभाष–दिवस पर मुंबई में गोलियाँ चलीं' तो इसका और किसी तरह का अर्थ नहीं लगाया जा सकेगा।

'लाठियों की मार से मोहन के हाथ और सिर टूट गए' कहना इसलिए अच्छा नहीं जान पड़ता कि मोहन के हाथ तो दो अवश्य थे, पर सिर दो नहीं थे–एक ही था। इसलिए 'मोहन का सिर और हाथ टूट गए' कहना अधिक अच्छा है। 'आप इसी काम के लिए विशेषतः मुंबई से आए थे' का सीधा–सादा अर्थ यही होगा कि आप आए तो और भी बहुत–सी जगहों से थे, पर विशेषतः मुंबई से आए थे। शुद्ध रूप होगा–'आप विशेषतः इसी काम के लिए मुंबई से आए थे'। 'फीता न होने के कारण एक मोजा तना हुआ था और दूसरा खिसक

कर जूते पर आ गया था' से तो यही अर्थ निकलेगा कि फीता न होने के कारण ही एक मोजा तना हुआ था, पर बात बिलकुल उलटी है। एक मोजे पर तो फीता बँधा था, जिससे वह तना हुआ था। हाँ, दूसरा मोजा, फीता न होने के कारण खिसककर जूते पर आ गया था।

'आपने एक छात्रों की सभा में भाषण दिया' कहना ठीक नहीं है। ठीक रूप होगा—आपने छात्रों की एक सभा में भाषण दिया। यदि हम इससे कुछ और आगे बढ़कर विचार करें तो हमें पता चलेगा कि 'आपने दस छात्रों की सभा में भाषण किया' कहना एक दूसरी दृष्टि से बिलकुल ठीक होगा। एक ऐसी सभा हुई, जिसमें दस छात्र आए। उस सभा में आपने भाषण दिया। यह तो बिलकुल ठीक है, पर यदि आपने ऐसी दस सभाओं में भाषण किए, जिन सब में छात्र ही छात्र थे, तब हम कहेंगे—आपने छात्रों की दस सभाओं में भाषण किए। उक्त वाक्य के संबंध में ध्यान रखने की दूसरी बात यह है कि 'भाषण देना' प्रयोग हिंदी की प्रवृत्ति के विरुद्ध है। हिंदी प्रयोग 'भाषण करना' ही होगा। 'वे अच्छी कविता करते हैं' और 'वे कविता अच्छी करते हैं' में भी बहुत अंतर है। पहला वाक्य बिलकुल साधारण है। कोई कविता करता है और अच्छी कविता करता है तो हम कहते हैं—वे अच्छी कविता करते हैं; पर 'वे कविता अच्छी करते हैं' का भाव होगा कि उनके और कार्य अच्छे नहीं होते; हाँ, कविता वे अवश्य अच्छी करते हैं। 'कोई समय निश्चित हो' और 'कोई निश्चित समय हो' में भी बहुत अंतर है। हम कोई काम करना चाहते हैं, पर उसके करने का कोई समय निश्चित नहीं करते। ऐसी अवस्था में कहा जा सकता है—इसके लिए कोई समय निश्चित होना चाहिए। इसमें 'निश्चित' का संबंध 'होना' क्रिया से है। पर जब हम कहते हैं—'इस काम के लिए कोई निश्चित समय होना चाहिए' तब हम समय के 'निश्चित' होने पर अधिक जोर देते हैं; अर्थात् हम उसे यों ही संयोग के भरोसे नहीं छोड़ देना चाहते, बल्कि इस बात पर जोर देते हैं कि उसके लिए कोई 'समय' निश्चित हो जाना चाहिए। ऐसी अवस्था में 'निश्चित' का संबंध 'समय' से होता है।

यदि हम कहें—'वे जंगलियों की तरह आपस में लड़ते हैं' तो इसका अर्थ यह होगा कि जिस तरह जंगली लोग आपस में लड़ते हैं, उसी तरह वे भी आपस में लड़ते हैं। पर यदि हम कहें—'वे आपस में जंगलियों की तरह लड़ते

हैं' तो इसका अर्थ यह होगा कि वे आपस में उसी तरह लड़ते हैं, जिस तरह जंगली लोग लड़ते हैं। पहले वाक्य में जंगलियों की लड़ाई के ढंग का भाव मुख्य है, और दूसरे वाक्य में उनके आपस में लड़ने का। फिर इससे यह अभिप्राय भी निकल सकता है कि संभव है, दूसरों के साथ वे सभ्यों की तरह लड़ते हों, जंगलियों की तरह न लड़ते हों।

'वह कभी-कभी उनका रक्त चूसने के लिए आ जाता है' और 'वह उनका रक्त चूसने के लिए कभी-कभी आ जाता है' में कुछ अंतर है। पहले वाक्य में यह भाव है कि वह कभी-कभी तो उनका रक्त चूसने के लिए आ जाता है पर हो सकता है कि कभी-कभी वह और किसी प्रकार से उन्हें कष्ट देने के लिए अथवा और किसी उद्देश्य से भी आता या आ सकता हो। उसके 'रक्त चूसने' का भाव मुख्य भाव नहीं है, बल्कि उसके कभी-कभी आने का भाव मुख्य है। दूसरे वाक्य में 'रक्त चूसने' का भाव मुख्य है। पर यदि हम कहें-'वह उनका रक्त कभी-कभी चूसने के लिए आ जाता है' तो इसका आशय होगा कि वह आ तो जाता है; पर जब तक रहता है, तब तक बराबर उनका रक्त नहीं चूसा करता, केवल कभी-कभी चूसता है।

'अंत में यदि आप आज्ञा दें तो मैं इतना और निवेदन करूँगा कि...' का अर्थ यही होगा कि यदि आप (इस समय नहीं) अंत में आज्ञा दें, तो मैं...। पर वाक्य में आगे चलकर जो 'इतना और' आया है, उससे सूचित होता है कि बोलनेवाला पहले से कुछ कहता आ रहा है; और इसी बीच में वह यह भी कहता है-यदि आप मुझे आज्ञा दें, तो...। इस दृष्टि से यह वाक्य ठीक नहीं है। इसका रूप होना चाहिए-'यदि आप आज्ञा दें तो अंत में मैं इतना और निवेदन करूँगा कि...' इसी प्रकार 'आप कुछ दिनों तक और दिल्ली में रहेंगे' न कहकर 'आप और कुछ दिनों तक दिल्ली में रहेंगे' कहना चाहिए। और 'यह बात हृदय में संभव है, वे न मानें' से 'संभव है, वे यह बात हृदय से न मानें' कहना कहीं अच्छा है।

'वहाँ उसे निपुणिका नाम की रानी की दूसरी सखी मिली' का आशय यह होगा कि रानियाँ कई थीं; और उनमें से निपुणिका नाम की रानी की दूसरी सखी उसे मिली। पर जहाँ हमें यह वाक्य लिखा हुआ मिला था, वहाँ यह आशय ठीक नहीं बैठता था। वास्तव में दूसरी सखी का नाम निपुणिका था। इसलिए होना चाहिए था-'वहाँ उसे रानी की निपुणिका नाम की दूसरी सखी मिली'।

'मुझे दुख है कि आज मैं एक बरात में जा रहा हूँ, इसलिए आपसे न मिल सकूँगा' का अर्थ यह होगा कि मुझे आपसे न मिल सकने का नहीं, बल्कि बरात में जाने का ही दुख है। इसलिए होना चाहिए–'मैं आज एक बारात में जा रहा हूँ, इसलिए दुख (बल्कि खेद) है कि आपसे न मिल सकूँगा'।

कभी–कभी कोई शब्द जरा–सा आगे–पीछे होने पर सारा वाक्य अशुद्ध हो जाता है। तुलसी–कृत रामायण की एक प्रसिद्ध चौपाई है :

अनुज–वधू भगिनी सुत–नारी
सुनु शठ कन्या ये सम चारी ।

पर रामायण के बाजारी संस्करणों में छपा रहा है :

सुनु शठ ये कन्या सम चारी ।

ऐसे पाठ देखकर लोगों को शंका होती है कि पहले तो अनुज–वधू, भगिनी और सुत–नारी तीन ही गिनाई गई हैं; फिर बाद में 'चारी' शब्द कैसे है? वास्तविक आशय है कि उक्त तीनों और कन्या (ये चार) समान हैं। अर्थ की गड़बड़ी 'ये' को 'कन्या' से पहले ला रखने के कारण होती है।

प्रायः शब्दों के स्थान–परिवर्तन के कारण वाक्यों का जोर घट या बढ़ भी जाता है, जैसे–'अपने जिन मित्रों के साथ मैं घूमता था, वे मुझे अच्छी–अच्छी बातें बतलाते थे' बिलकुल साधारण कथन है। इसमें किसी विशेष शब्द, व्यक्ति या कार्य पर कोई जोर नहीं है। पर यदि हम कहें–'मेरे वे मित्र, जिनके साथ मैं घूमता था, मुझे अच्छी–अच्छी बातें बतलाते थे', तो 'वे मित्र' पर जोर आ जाता है। यही बात 'जो पुस्तक मैंने पढ़ी थी' और 'जिस जगह मैंने उसे पाया था' सरीखे वाक्यों के संबंध में भी है। यदि इनके रूप बदलकर हम कहें–'वह पुस्तक, जो मैंने पढ़ी थी' और 'वह जगह, जहाँ मैंने उसे पाया था' तो इन वाक्यों में 'पुस्तक' और 'जगह' पर ज्यादा जोर आ जाएगा। 'आपको रुपया किस काम के लिए चाहिए ?' साधारण कथन है। पर 'आपको किस काम के लिए रुपया चाहिए ?' में 'काम' पर कुछ जोर आ जाता है और 'रुपया आपको किस काम के लिए चाहिए ?' में 'रुपया' पर जोर आ जाता है। 'सभी नए और पुराने लेखक' बिलकुल साधारण कथन है। पर 'नए और पुराने सभी लेखक' कहने से 'सभी' पर कुछ ज्यादा जोर आ जाता है।

'उसने अपना काम जल्दी खतम कर दिया' और 'अपना काम उसने

जल्दी खतम कर दिया' में से पहला वाक्य साधारण है। उसका भाव यह है कि औरों की अपेक्षा उसने अपना काम जल्दी खतम किया; पर दूसरे वाक्य का भाव यह है कि शायद उसके पास कुछ और लोगों के काम भी थे। उन सब कामों में से अपना काम तो उसने जल्दी खतम कर दिया; पर दूसरों के कामों में देर लगाई। 'सिपाही नई वर्दियों में अच्छे जान पड़ते थे' और 'नई वर्दियों में सिपाही अच्छे जान पड़ते थे' में से पहले वाक्य का आशय यह है कि सिपाही यों तो अच्छे थे ही; पर नई वर्दियों में और भी अच्छे जान पड़ते थे। पर दूसरे वाक्य का आशय यह है कि सिपाही साधारणतः अच्छे नहीं थे और पुरानी वर्दियों में भद्दे दिख़ाई दिखाई देते थे। पर जब उन्होंने नई वर्दियाँ पहन लीं, तब उन वर्दियों के कारण ही वे अच्छे जान पड़ने लगे।

प्रायः हमें किसी से कोई बात पूछनी पड़ती है–कोई प्रश्न करना होता है। जिन वाक्यों में प्रश्न का भाव होता है, उन्हें प्रश्नात्मक वाक्य कहते हैं। हिंदी में यह नियम है कि ऐसे वाक्यों में 'क्या' सदा पहले आता है, जैसे–'क्या आप वहाँ गए थे ?' 'क्या आप उनसे मिले थे ?' 'क्या आप भोजन कर चुके ?' आदि। ऐसे वाक्यों में कुछ लोग भूल से 'क्या' पहले न रखकर अंत में रख देते हैं, जैसे–'आप वहाँ गए थे क्या?', 'आप उनसे मिले थे क्या ?', 'आप भोजन कर चुके क्या ?' आदि। पर इस तरह के वाक्य ठीक नहीं समझे जाते। इसलिए ऐसे वाक्यों में 'क्या' सदा पहले ही रखना चाहिए। 'तुम कह सकोगे क्या कि वह क्यों नहीं आया ?' से 'क्या तुम कह सकते हो कि वह क्यों नहीं आया ?' कहीं अधिक सुंदर है। हाँ, यदि वाक्य हलका करना चाहें तो लिखने में ऐसे वाक्यों में से 'क्या' बिलकुल निकाला भी जा सकता है। ऐसे वाक्यों के अंत में जो प्रश्न-चिह्न होगा, वही 'क्या' का काम दे जाएगा।

पर जो बात 'क्या' के संबंध में कही गई है, वही 'क्यों' और 'कैसे' के संबंध में नहीं कही जा सकती। पहली बात तो यह है कि 'क्यों' और 'कैसे' प्रायः वाक्य के आरंभ में नहीं आते, बल्कि बीच में या और कहीं आते हैं। 'तुम वहाँ क्यों गए थे ?' और 'वह उसे अपने साथ क्यों नहीं लाया ?' ही कहना ठीक है। 'क्यों तुम वहाँ गए थे ?' और 'क्यों वह उसे अपने साथ नहीं लाया ?' सरीखे वाक्य साधारण कथन की अवस्था में ठीक नहीं होते। हाँ, यदि 'क्यों' पर ही हमें ज्यादा जोर देना हो, तो बात दूसरी है। यही बात 'आप यहाँ कैसे आए ?' और 'यह काम कैसे होगा ?' के संबंध में भी है।

6

हिंदी ढंग

हर भाषा के बोलने और लिखने का अपना एक अलग और निराला ढंग होता है। कुछ बातें तो ऐसी होती हैं, जो अनेक भाषाओं में एक ही ढंग से लिखी या बोली जाती हैं; पर कुछ बातें ऐसी भी होती हैं, जो हम हिंदीवाले एक ढंग से कहते हैं, उर्दूवाले कुछ दूसरे ढंग से और अंग्रेजीवाले किसी तीसरे ढंग से। हो सकता है कि वही बात बँगला, मराठी, गुजराती आदि भाषाओं में कुछ और ढंगों से कही जाती हो। भाषा को यह ढंग ही उसका रूप शुद्ध रखता है; और यही उसके अच्छे होने की मुख्य पहचान या कसौटी है।

यदि हम कहें–'मैं आपसे यह कहना माँगता हूँ कि...' तो हो सकता है कि हम हँस पड़ें। क्यों ? इसीलिए कि यह बोलने का अंग्रेजी या बँगला ढंग हो सकता है, पर हिंदी नहीं। 'अब तो हम हमारे घर जाएँगे' भी हिंदी ढंग नहीं है। यह बँगला या मराठी ढंग हो सकता है। 'आज हमने वहाँ जाना है' बोलने का पंजाबी ढंग है, हिंदी नहीं। 'हम आपसे कहे थे' पूर्वी हिंदी का ढंग भले ही हो, पर प्रांजल, मानक और विशुद्ध हिंदी का ढंग नहीं है। 'हम वहाँ जाने नहीं सकेंगे' बँगला ढंग का और 'यह बात जरूर होना चाहिए थी' उर्दू ढंग का वाक्य है। यदि 'शपथ लेना' कहा जाएगा, तो यह अंग्रेजी ढंग होगा; और यदि 'शपथ खाना' कहा जाएगा, तो यह उर्दू या फारसी ढंग हो जाएगा। वस्तुतः हिंदी ढंग तो 'शपथ करना' था, जिसका स्थान अब 'शपथ लेना' ने ले लिया है। 'खाना खाना' उर्दू ढंग का प्रयोग है; और 'भाषण देना' अंग्रेजी ढंग का। हिंदी ढंग के अनुसार हमें 'भोजन खाना' की जगह 'भोजन करना' और 'भाषण देना' की जगह 'भाषण करना' कहना चाहिए। परंतु अब 'भाषण देना' का ही प्रयोग होने

लगा है और 'भाषण करना' का प्रयोग 'बातचीत करना' के प्रसंग तक सीमित रह गया है। इसलिए हिंदी लिखते समय हमें सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हमारे वाक्य और भाव प्रकट करने के प्रकार हिंदी ढंग के ही हों। जिस रचना में दूसरी भाषाओं के ढंग की गंध हो, वह रचना भाषा की दृष्टि से कभी अच्छी नहीं कही जा सकती। इसलिए हमें लिखते समय सदा अपनी भाषा के ढंग और स्वरूप का ध्यान रखना चाहिए। हमारी रचना में कोई ऐसी बात नहीं आनी चाहिए, जो हमारी भाषा के ढंग, नियम या स्वरूप के विरुद्ध हो। जो बातें हमारी भाषा के ढंग नियम या स्वरूप के विरुद्ध होंगी, वे हमारी भाषा का ढंग और स्वरूप बिगाड़नेवाली ही होंगी, उसमें सुंदरता लानेवाली नहीं होंगी। यदि हम इस प्रकार की बातों का ध्यान न रखेंगे, तो हम अपनी मातृभाषा का स्वरूप दिन-पर-दिन बिगाड़ते चले जाएँगे। और हो सकता है कि इस बिगाड़ के कारण कोई ऐसा दिन भी आ जाए, जब उसका रूप इतना बिगड़ जाए कि पहचाना ही न जा सके।

बहुत-से विद्यार्थी विद्यालयों में हिंदी के साथ अंग्रेजी भी पढ़ते हैं। बल्कि यों कहना चाहिए कि बहुत-से विद्यार्थी तो विद्यालयों में अंग्रेजी ही पढ़ने जाते हैं; और वहाँ अंग्रेजी के साथ-साथ हिंदी की भी थोड़ी-बहुत शिक्षा पाते हैं। अंग्रेजी बोलने में यदि विद्यार्थियों से कोई भूल होती है, तो शिक्षक तुरंत टोककर वह भूल सुधार देते हैं। पर अपनी भाषा हिंदी की भूलों पर जल्दी किसी का ध्यान ही नहीं जाता। ऐसे विद्यार्थी अंग्रेजी बोल-चाल का ढंग तो सीख लेते हैं, पर हिंदी ढंग उनके सामने आने ही नहीं पाता। फिर हम लोग जो कुछ लिखते या बोलते हैं, वह ऐसे लोग भी पढ़ते और सुनते हैं, जो अंग्रेजी बिलकुल नहीं जानते, और अपने हिंदी ढंग से भी प्रायः अपरिचित होते हैं। इसका फल यह होता है कि वे भी, अपना ढंग ठीक तरह से न जानने के कारण, बहुत-कुछ अंग्रेजी ढंग से बोलने और लिखने लगते हैं। वे सीधी तरह से यह नहीं कहते या लिखते-'मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप यहाँ आएँ', या 'मैं आपसे कहता हूँ कि...' बल्कि कहते या लिखते हैं-'मैं आपसे प्रार्थना करूँगा कि आप यहाँ आएँ' या 'कहूँगा कि...' या 'मैं आपसे कहना चाहूँगा कि...' आदि। हमारे यहाँ के कहने के ढंग के अनुसार तो 'प्रार्थना करूँगा', 'कहूँगा' और 'कहना चाहूँगा' भविष्यत् काल के ही सूचक हो सकते हैं, वर्तमान काल के नहीं। इस प्रकार की अंग्रेजी

ढंग की बोल-चाल और लिखावटों से हमारी भाषा का स्वरूप दिन-पर-दिन बहुत-कुछ बिगड़ता जा रहा है। नए विद्यार्थियों को इस विषय में बहुत सावधान रहना चाहिए, और दूसरों की देखा-देखी अपनी भाषा का स्वरूप बिगाड़ना नहीं चाहिए।

एक उदाहरण लीजिए-उस स्त्री ने कहा कि उसका पति उसे बहुत मारता है और उसे भय है कि उसके साथ रहने में उसके प्राण न बचेंगे। इस वाक्य का ढंग हिंदी नहीं, बल्कि बिलकुल अंग्रेजी है। इस अंग्रेजी ढंग के कारण ही साधारण हिंदी जाननेवाले जल्दी इसका ठीक-ठीक अर्थ नहीं समझ पाते। तिसपर इस वाक्य में जो उसे उसका और उसकी छह-सात बार आए हैं, उनके कारण वाक्य में जो भद्दापन आ गया है, वह अलग। यही बात हिंदी ढंग से स्पष्ट रूप में और बहुत अच्छी तरह इस प्रकार कही जा सकती है-'उस स्त्री ने कहा कि मेरा पति मुझे बहुत मारता है; और मुझे भय है कि उसके साथ रहने में मेरे प्राण न बचेंगे।' अब इन दोनों वाक्यों का मिलान करके आप स्वयं समझ सकेंगे कि अंग्रेजी और हिंदी ढंग में क्या अंतर है; और दोनों में से कौन-सा ढंग अच्छा और अपनाने योग्य है।

कभी-कभी इस तरह के अंग्रेजी ढंग से लिखे हुए वाक्यों का बिलकुल उलटा अर्थ भी निकलता है। एक बार एक समाचार-पत्र में छपा था-'नेहरूजी ने बिहारियों से कहा कि मुसलमानों को छूने से पहले वे उन्हें मार डालें।' इस वाक्य में अंग्रेजी ढंग के कारण जो 'उन्हें' आया है, उसी से वाक्य का अर्थ बिलकुल उलट गया है। वास्तव में नेहरूजी का कहना था कि मुसलमानों के शरीर पर हाथ लगाने से पहले आप मुझे मार डालें। पर वाक्य का अर्थ लोग यही समझेंगे कि नेहरू जी ने मुसलमानों को ही मार डालने के लिए कहा था, जो बिलकुल गलत बात है। यदि यही बात हिंदी ढंग से कही गई होती तो कभी ऐसा उलटा अर्थ न निकलता।

प्रायः लोग लिखते हैं-'वे इस विषय में बहुत स्वार्थ लेते हैं' पर इस 'स्वार्थ लेते हैं' का क्या अर्थ है ? कुछ भी नहीं। हम यह तो कह सकते हैं- 'हमारा इस विषय में स्वार्थ है' या 'सब लोग अपने स्वार्थ का ध्यान रखते हैं' पर किसी विषय में 'स्वार्थ लेना' हमारा हिंदी ढंग नहीं है; और इसीलिए हिंदी में

इसका कुछ अर्थ भी नहीं है। यही बात 'भाग लेना' के संबंध में भी है। 'हम इस कार्य में भाग लेते हैं' सरीखा प्रयोग भी हिंदी ढंग का न होने के कारण कुछ भी अर्थ नहीं रखता। किसी संपत्ति में हमारा भाग (अंश) हो सकता है; और हम सब प्रकार से अपना वह भाग ले सकते हैं। पर 'कार्य में भाग लेना' बिलकुल अंग्रेजी ढंग का अनुकरण है। इसी प्रकार का एक और प्रयोग 'माँग करना' है। 'उन्होंने शत्रुओं से हथियारों को रख देने की माँग की' और 'हम लोग अपने अधिकारों की माँग करते हैं' ऐसे प्रयोग हैं, जिनमें सीधी-सी बात दूसरों के ढंग से कुछ घुमाव-फिराव से कही गई है। हिंदी ढंग है–'उन्होंने शत्रुओं से हथियार रख देने के लिए कहा' और 'हम लोग अपने अधिकार माँगते हैं'। 'इस दिशा में बहुत-कुछ कार्य हो चुका है' से 'इस विषय में (या इस संबंध में) बहुत-कुछ कार्य हो चुका है' लिखना कहीं अच्छा है। 'सैनिकों को इन सब बातों से ऊपर रहकर अपना काम करना चाहिए' भी कहने का अंग्रेजी ढंग है। हिंदी ढंग के अनुसार यहाँ 'ऊपर' की जगह 'अलग' होना चाहिए। 'हमें संदेह है कि आप अपना काम अच्छी तरह कर सकेंगे' कहने का ऐसा अंग्रेजी ढंग है, जिससे केवल हिंदी जाननेवाले कुछ भी अर्थ नहीं समझ सकते। हिंदीवाले तो तभी समझेंगे, जब कहा जाएगा–'आप के द्वारा अच्छी तरह यह काम कर सकने में हमें संदेह है', अथवा–'हमें संदेह है कि आप यह काम अच्छी तरह कर सकेंगे या नहीं'। पर बहुत-से लोग सीधा प्रकार और अपना ढंग छोड़कर, और टेढ़े प्रकार तथा दूसरों के ढंग से अपनी बात कहकर अपनी हँसी भी कराते हैं और अपनी भाषा का स्वरूप भी बिगाड़ते हैं। ऐसा नहीं होना चाहिए। विद्यार्थियों को आरंभ से ही इस प्रकार के भद्दे प्रयोगों से बचना चाहिए।

प्रायः लोग लिखते हैं–'न केवल यही, बल्कि वे वहाँ से चले भी आए'। यह भी हिंदी ढंग नहीं है। हिंदी ढंग है–'यही नहीं, बल्कि वे वहाँ से चले भी आए'। इसमें ध्यान रखने की एक बात और है। वह यह कि 'केवल' के साथ 'यही' भी ठीक है; पर 'केवल यही' इसलिए ठीक नहीं है कि 'यही' का अर्थ है–केवल यह। 'यह कार्य उन्हीं के हाथों पूरा होगा, ऐसी हमें आशा है' भी हिंदी ढंग नहीं है। हिंदी ढंग तो तभी होगा, जब लिखा या कहा जाएगा–'हमें आशा है कि यह कार्य उन्हीं के हाथों पूरा होगा'। 'आप कल वहाँ जाएँगे, ऐसा मैं समझता हूँ' भी हिंदी ढंग नहीं है। हिंदी ढंग से कहा जाएगा–'मैं समझता हूँ कि आप कल

वहाँ जाएँगे'। 'बंगाल के उपद्रव को लेकर महात्मा गाँधी अनशन का विचार कर रहे हैं' कहने का बँगला या मराठी ढंग है, हिंदी ढंग नहीं है। हिंदी ढंग से होगा–'बंगाल के उपद्रव के कारण (या बंगाल के उपद्रव से दुखी होकर) महात्मा गाँधी अनशन का विचार कर रहे हैं'। कहना ही ठीक होगा। 'वह समय अपना काम निकालने का होने से मैं चुप रहा' के बदले में हिंदी में इस रूप में लिखना ठीक होगा–'वह समय अपना काम निकालने का था, इसलिए मैं चुप रहा'। 'हम क्या लिखें, कैसे लिखें, यह तुरंत निश्चित हो जाए, यदि हम यह समझ लें कि हम किसके लिए लिखते हैं' के बदले में हमें लिखना चाहिए–'यदि हम यह समझ लें कि हम किसके लिए लिखते हैं, तो यह तुरंत निश्चित हो जाए कि हम क्या लिखें और कैसे लिखें'।

अब तक वाक्यों के जितने उदाहरण दिए गए हैं, वे सब प्रायः ऐसे हैं, जो अंग्रेजी ढंग से कोई बात सोचने के कारण हमारे यहाँ चल पड़े हैं। अंग्रेजी की कृपा से और भी कई तरह के प्रयोग हिंदी में चलने लगे हैं, जो वास्तव में हिंदी ढंग के नहीं हैं। हम सीधी तरह से 'जल्दी ही', 'शीघ्र ही' आदि न लिखकर लिख जाते हैं–'निकट भविष्य में ऐसा होनेवाला है'। यह बिलकुल अंग्रेजी ढंग है। 'हम उनका नाम आदर के साथ लेते हैं', 'वे धैर्य के साथ अपना काम कर रहे हैं', 'आपने यह काम योग्यता के साथ किया है' और 'उन्होंने सरलता के साथ उत्तर दिया' सरीखे वाक्यों में 'के साथ' भी उर्दू और अंग्रेजी ढंग के अनुकरण के कारण ही आया है। इनकी जगह हम अपने ढंग से सीधे-सादे 'पूर्वक' शब्द से काम चला सकते हैं; और यह कह सकते हैं–'हम उनका नाम आदरपूर्वक लेते हैं' आदि। 'यह बीमारी देश में लड़ाई के द्वारा फैली थी', 'लड़ाई के द्वारा लोगों ने खूब धन कमाया', 'दो-एक सज्जनों द्वारा यह कहा गया' सरीखे वाक्यों में 'के द्वारा' भी अंग्रेजी ढंग का अनुकरण होने के कारण बुरा तो है ही, कई कारणों से अशुद्ध भी हैं। ऐसे वाक्य हमें इस प्रकार लिखने चाहिए–'देश में यह बीमारी लड़ाई के कारण फैली थी', 'लड़ाई में लोगों ने खूब धन कमाया' और 'एक-दो सज्जनों ने यह कहा'। 'हम वहाँ नहीं नए थे, क्योंकि उन्होंने हमें नहीं बुलाया था' भी बिलकुल अंग्रेजी ढंग का वाक्य है। हिंदी ढंग से यह बात इस रूप में लिखी जानी चाहिए–'उन्होंने हमें नहीं बुलाया था, इसलिए हम वहाँ नहीं गए थे'। 'उनके विरुद्ध मुकदमा चलाया गया' भी अंग्रेजी ढंग का

वाक्य है। हिंदी ढंग का वाक्य होगा–'उन पर मुकदमा चलाया गया'।

जिस प्रकार अलग-अलग प्रांतों में कुछ ऐसे शब्द चलते हैं, जो सब जगह नहीं बोले और समझे जाते, उसी प्रकार अलग-अलग प्रांतों और वहाँ की भाषाओं में कुछ ऐसे प्रयोग भी होते हैं, जो अच्छी हिंदी में नहीं चलते। ऐसे प्रयोग 'स्थानीय' या 'स्थानिक' कहलाते हैं और इनमें से बहुतेरे हमारे हिंदी ढंग के विरुद्ध होते हैं। पंजाबवाले प्रायः बोलते और लिखते हैं–'हमने वहाँ जाना है', 'हमने अभी खाना है' आदि। अच्छी हिंदी में यही बातें इस रूप में कही जाती हैं–'हमें वहाँ जाना है' और 'हमें अभी खाना है' आदि। प्रायः बिहार के लोग लिखते और बोलते हैं–'जो सज्जन उसे पाये हों...', 'जब पंजाब के मुसलमान वहाँ प्रवेश किए थे', 'वे कोई स्कूल नहीं खोले थे' और 'तुम भगवान से अच्छा भाग्य पाए हो'। हिंदी ढंग से ये वाक्य इस प्रकार लिखे जाएँगे–'जिस सज्जन को वह मिला हो...', 'जब पंजाब के मुसलमानों ने वहाँ प्रवेश किया था', 'उन्होंने कोई स्कूल नहीं खोला था' और 'तुमने भगवान से अच्छा भाग्य पाया है'। 'ऐसा होना चाहता था' और 'आपको वहाँ जाना चाहता था' सरीखे प्रयोग भी स्थानिक हैं। इनमें 'चाहता' की जगह 'चाहिए' होना चाहिए। 'शाम' का अर्थ है–संध्या। पर पूरब वाले प्रायः लिखते हैं–'वे दोनों शाम टहलने जाते हैं'। होना चाहिए–'वे दोनों समय टहलने जाते हैं'।

उर्दूवाले लिखते हैं–'पेशतर इसके कि कोई हँसे, हम खुद हँस पड़ते हैं', 'बगैर किसी की मदद के यह नहीं हो सकता', 'बजाय इसके कि आप यहाँ आएँ, मैं ही आपके यहाँ आ जाऊँगा', 'बेहतर हो कि आप किताब दे दें' आदि। उनकी देखा-देखी हिंदी में भी कुछ लोग लिख जाते हैं – 'पूर्व इसके कि कोई हँसे, हम स्वयं हँस पड़ते हैं', 'बिना किसी की सहायता के यह काम नहीं हो सकता है', 'इसके बदले कि आप यहाँ आएँ, मैं ही आपके यहाँ आ जाऊँगा', 'अच्छा हो कि आप पुस्तक दे दें' आदि। पर ये भी हिंदी ढंग नहीं है। इनके बदले होना चाहिए–'किसी के हँसने के पहले हम स्वयं हँस पड़ते हैं', 'किसी की सहायता के बिना यह काम नहीं हो सकता', 'आपके यहाँ आने के बदले मैं ही आपके यहाँ आ जाऊँगा', 'आप पुस्तक दे दें तो अच्छा हो', 'मैं यह काम किया चाहता हूँ' और 'वे वहाँ जाया चाहते हैं' भी उर्दू बोल-चाल का ढंग है। हिंदी ढंग है–'मैं यह काम करना चाहता हूँ' और 'वे वहाँ जाना चाहते हैं'।

7

वाक्यों की बनावट

जब हम अपने मन का कोई भाव प्रकट करने के लिए कुछ शब्द अपने व्याकरण के नियमों के अनुसार किसी विशेष क्रम से लगाकर कहते या लिखते हैं, तब उन शब्दों का समूह 'वाक्य' कहलाता है। वाक्य में कोई एक पूरा भाव या विचार रहता है। यदि भाव या विचार पूरा न हो तो वाक्य भी पूरा नहीं होता–अधूरा होता है। वाक्य के संबंध में एक साधारण नियम यह है कि उसमें कम-से-कम एक कर्ता और एक क्रिया होती है। यदि हम कहें–'गौ का बच्चा' तो यह वाक्य नहीं होगा; क्योंकि इसमें कोई क्रिया नहीं है। शब्दों के ऐसे समूह को व्याकरण 'पद' बल्कि 'पदबंध' कहते हैं। इसी प्रकार 'राम का भाई', 'पुस्तक के पन्ने', और 'घर की दीवार' सरीखे शब्द-समूह भी पदबंध ही हैं; क्योंकि न तो इन शब्दों से कोई पूरा विचार प्रकट होता है, न इनमें कोई क्रिया है। इसी प्रकार 'चर रहा है', 'आया है', 'फट गए', 'गिर गई' सरीखी खाली क्रियाएँ भी 'वाक्य' नहीं कहलातीं। वाक्य तो तभी होगा, जब हम कहेंगे–'गौ का बच्चा घास चर रहा है', 'राम का भाई आया है', 'पुस्तक के पन्ने फट गए', 'घर की दीवार गिर गई' आदि। इन रूपों में एक भाव या विचार भी पूरी तरह से आ गया है और कर्ता के साथ क्रिया भी लगी है। पर यहाँ इस बात का ध्यान रहे कि यदि हम कहें–'वे लोग चलकर' तब तो यह वाक्य नहीं होगा; पर यदि हम खाली कहें–'चलो' या 'बैठो' तो यह वाक्य हो जाएगा; क्योंकि इसका आशय है–'तुम चलो' या 'तुम बैठो'। इसीलिए ऐसे शब्द या शब्दों के ऐसे समूह भी 'वाक्य' कहलाते हैं।

ये तो हैं वाक्य की सीधी-सादी आवश्यकताएँ, पर इनके सिवा वाक्य का रूप ठीक करने के लिए और भी कई बातें आवश्यक होती हैं। उनमें से पहली

आवश्यक बात है–वाक्य में शब्दों का क्रम ठीक होना। 'राम का भाई आया है' तभी वाक्य कहलाएगा, जब उसके सब शब्द इसी क्रम में रहेंगे; और उसका ठीक-ठीक अर्थ भी तभी लोगों की समझ में आएगा, जब शब्दों का यह क्रम रहेगा। यदि हम कहें–'भाई है का आया राम' या 'राम है भाई आया का' तो न तो इनकी गिनती वाक्यों में होगी, और न इनका अर्थ जल्दी किसी की समझ में आएगा। इसलिए वाक्यों में शब्दों का क्रम ठीक रखना सबसे अधिक आवश्यक होता है। जिन वाक्यों में शब्दों का क्रम ठीक नहीं होता, वे अशुद्ध भी होते हैं और भद्दे भी। इसके सिवा कुछ अवसरों पर या तो उनका कुछ अर्थ ही नहीं होता या यदि कुछ अर्थ निकले भी तो वास्तविक अर्थ से इतना अलग होता है कि समझनेवाला कुछ का कुछ समझ सकता है। हो सकता है कि कुछ अवसरों पर अशुद्ध वाक्य का बिलकुल उलटा अर्थ भी निकले।

किसी वाक्य का बिलकुल उलटा अर्थ निकलना तो बहुत ही बुरा है; पर कुछ का कुछ अर्थ निकलना भी कम बुरा नहीं है; कुछ अवसर ऐसे भी होते हैं, जिनमें साधारणतः अर्थ तो ठीक निकलता है, पर खींच-तानकर या और किसी प्रकार का प्रयत्न करके कुछ और अर्थ भी लगाया जा सकता है। जिन वाक्यों की बनावट ऐसी होती है, वे भी दूषित वाक्यों में गिने जाते हैं। इसीलिए वाक्य सदा ऐसे होने चाहिए, जिनका एक ही और ठीक अर्थ निकले। उस एक और ठीक अर्थ के सिवा और किसी तरह का अर्थ निकलने की जगह उसमें न रहे। वाक्य के ठीक होने के लिए यह बात भी कम आवश्यक नहीं है।

मान लीजिए कि हम कोई ऐसा वाक्य बनाते हैं, जिसका अर्थ तो ठीक निकलता है, पर जिसे शुद्ध और सुंदर रूप देने के लिए उसके एक-दो शब्दों में कुछ हेर-फेर करने या उनका क्रम बदलकर उन्हें आगे-पीछे करने की आवश्यकता होती है। ऐसे वाक्य शिथिल या ढीले कहलाते हैं और इनकी गिनती भी दूषित वाक्यों में होती है। इसलिए वाक्यों का रूप खूब गठा हुआ और चुस्त होना भी बहुत आवश्यक है। जो वाक्य इन सब बातों का पूरा-पूरा ध्यान रखकर बनाए जाते हैं, वही अच्छे, सुंदर और शुद्ध होते हैं।

वाक्य छोटे भी होते हैं और बड़े भी; और इन दोनों के बीच के अर्थात् मँझोले भी होते हैं। व्याकरण में छोटे वाक्य को साधारण वाक्य कहते हैं। इसमें

दो या अधिक से अधिक तीन बातें होती हैं। एक तो कोई काम करनेवाला, जिसे कर्ता कहते हैं; और दूसरा उनका कोई काम, जिसे क्रिया कहते हैं, जैसे–'वह दौड़ता है'। इसमें 'वह' कर्ता है और 'दौड़ता है' क्रिया है। पर जब हम कहते हैं– 'वह पुस्तक पढ़ता है' तब उसमें 'वह' कर्ता और 'पढ़ता है' क्रिया के बीच में तीसरी चीज 'पुस्तक' आ जाती है, जिसे कर्म कहते हैं। पर इस 'पुस्तक' कर्म का भी 'पढ़ता है' क्रिया से ही संबंध है। यहाँ यह भी ध्यान रखना चाहिए कि इस प्रकार की किसी चीज या कर्म की जरूरत सकर्मक क्रियाओं के साथ ही होती है, अकर्मक क्रियाओं के साथ उसके लिए स्थान नहीं होता।

वाक्य को दो भागों में विभाजित किया जाता है–उद्देश्य और विधेय। जिस व्यक्ति, वस्तु, कार्य आदि के सूचक शब्द के संबंध में हम कुछ कहना चाहते हैं, उसे उद्देश्य कहते हैं और उद्देश्य के संबंध में जो कुछ कहा जाता है, उसे विधेय कहते हैं। 'राम सो रहा है' – इस वाक्य में 'राम' उद्देश्य है क्योंकि हम उसी के संबंध में कुछ कहना चाहते हैं। हम राम के संबंध में क्या कहना चाहते हैं–'सो रहा है' यह 'सो रहा है' विधेय हुआ। विधेय में क्रियापद तो रहता ही है, अन्य पद भी रहते हैं। 'राम छत पर दो घंटे से पतंग उड़ा रहा है' – इस वाक्य में 'राम' उद्देश्य है और 'छत पर दो घंटे से पतंग उड़ा रहा है' विधेय है।

जब किसी वाक्य में दो या अधिक वाक्य सँजोए जाते हैं तो उसे संयुक्त वाक्य कहते हैं। 'राम सो रहा है और मोहन पढ़ रहा है' और 'सीता खेल रही थी और उसकी माता भोजन बना रही थी' संयुक्त वाक्य हैं। संयुक्त वाक्य में सँजोए गए वाक्यों को उपवाक्य कहते हैं। इन वाक्यों की विशेषता यह है कि इनके उपवाक्य भी अपने में पूर्ण वाक्य होते हैं; अर्थात् अर्थ की दृष्टि से पूर्ण होते हैं। परंतु जब एक उपवाक्य दूसरे उपवाक्य में पूर्णता लाता है तो उसे मिश्र वाक्य कहते हैं। 'राम ने कहा कि कल क्रिकेट खेलने चलेंगे' और 'जैसे वह आया, वैसे मैं चल पड़ा' – ये दोनों मिश्र वाक्य हैं। इन वाक्यों में पहले उपवाक्यों के अर्थ की पूर्णता दूसरे उपवाक्यों पर आश्रित है। न 'राम ने कहा' ही पूर्ण वाक्य है और न 'जैसे वह आया' ही पूर्ण वाक्य है। इनकी पूर्णता क्रमशः 'कि कल क्रिकेट खेलने चलेंगे' और 'वैसे मैं चल पड़ा' वाक्यों से होती है।

वाक्य जितने छोटे होते हैं, उनमें भूलों के लिए भी उतना ही कम स्थान होता है, जैसे–'संध्या को मोहन घर आया। वह थका हुआ था। आते ही चौकी पर लेट गया। उसका छोटा भाई उसे पंखा झलने लगा। थोड़ी देर में उसे नींद आ गई।' आदि। ऐसे छोटे और साधारण वाक्यों में शायद ही कभी किसी से भूल होती हो। ऐसे वाक्य लोग सहज में समझ लेते हैं और उन पर उनका प्रभाव भी अच्छा पड़ता है। पर मिश्र और संयुक्त वाक्यों में भूलों के लिए अधिक स्थान रहता है। विशेषतः मिश्र वाक्य लिखने में लोग कई प्रकार की भूलें कर जाते हैं। वे वाक्य का आरंभ किसी और प्रकार से करते हैं, उसका मध्य किसी और प्रकार का रखते हैं और अंत कुछ ऐसे ढंग से कर जाते हैं। इस प्रकार आदि, अंत और मध्य से उसका ठीक मेल नहीं बैठता; अर्थात् वाक्य बनाते समय वे उसका ठीक तरह से निर्वाह नहीं कर सकते। लोग ऐसे वाक्य पढ़ना पसंद नहीं करते। यह भी वाक्य की बनावट का दोष है और बहुत बड़ा दोष है।

हमारे सामने कई प्रकार के भाव, कई प्रकार के विचार और कई प्रकार की घटनाएँ होती हैं। वाक्य बनाते समय हमें उन सबका एक क्रम लगाना पड़ता है–उन्हें एक सिलसिले से सजाना पड़ता है। हम कहते हैं–'आज एक ऐसे सज्जन के दर्शन हुए, जो बहुत बड़े विद्वान होने के सिवा हमारे बहुत ही निकट के संबंधी भी निकले।' इस वाक्य में कई बातें एक साथ आई हैं। यदि सब बातें अलग-अलग कही जाएँ तो उनका रूप कुछ इस प्रकार होगा–'आज हमें एक सज्जन के दर्शन हुए। वे बहुत बड़े विद्वान हैं। वे हमारे निकट के संबंधी भी निकले।' हम कहते हैं–'वह ऊपर से सीढ़ियाँ उतरता हुआ और बीच में एक जगह कुछ रुकता हुआ नीचे आया।' इसमें भी कई बातें हैं। वह ऊपर से सीढ़ियों के रास्ते नीचे आने लगा; बीच में एक जगह कुछ रुका और तब वह नीचे आया। पर हम प्रायः इस प्रकार की बातें अलग-अलग न कहकर एक साथ एक ही वाक्य में विशेष क्रम से कह जाते हैं। घटनाएँ कई होती हैं, आगे-पीछे होती हैं, कुछ रुक-रुककर या बहुत देर बाद होती हैं; पर हमें इन सब बातों का विचार रखते हुए एक ही वाक्य में उन्हें प्रकट करने के लिए उनका एक क्रम लगाना पड़ता है। वाक्य में यही क्रम लगाने का काम बहुत कठिन होता है; और इसी में हमें सबसे अधिक सचेत रहना चाहिए। हमें उनकी बनावट में शुद्धता तथा निर्दोषता का भी ध्यान रखना चाहिए और सुंदरता तथा

स्पष्टता का भी। और जो बातें जिस क्रम से हुई हों, वे सब उसी क्रम से रखनी चाहिए। यह क्रम लगाने या वाक्य बनाने के समय हमें सबसे अधिक ध्यान अर्थ की स्पष्टता का रखना चाहिए। यदि आवश्यकता हो तो वाक्य में कोई शब्द दुहराने-तिहराने से भी डरना या घबराना नहीं चाहिए। पर वाक्यों में कोई शब्द व्यर्थ या बार-बार भी नहीं आना चाहिए।

ऊपर जो कुछ कहा गया है, उससे दो बातें प्रकट होती हैं। एक तो वाक्य में भावों का क्रम ठीक होना चाहिए और दूसरे, उसकी बनावट ठीक और निर्दोष होनी चाहिए। जब वाक्य में ये दोनों बातें आ जाएँगी, तब वह देखने में भी सुंदर हो जाएगा। जहाँ तक हो सके, हमें एक वाक्य में एक ही विचार और उसी विचार से संबंध रखनेवाली दूसरी बातें प्रकट करनी चाहिए। एक ही वाक्य में कई बातें एक साथ प्रकट करने का प्रयत्न करना ठीक नहीं है। यदि ऐसा प्रयत्न किया जाएगा तो वाक्य लंबे तो हो ही जाएँगे; संभव है, वे अशुद्ध और भद्दे भी हो जाएँ। इसलिए पहले छोटे वाक्य बनाने का पूरा अभ्यास करना चाहिए; और तब बड़े और लंबे वाक्य बनाने का। और जो वाक्य बनाए जाएँ, उनमें सदा इस बात का भी ध्यान रहना चाहिए कि जैसा उनका आरंभ हो, वैसा ही उनका मध्य भी हो और अंत भी।

अब हम कुछ उदाहरण देकर अपनी बातें और भी स्पष्ट करना चाहते हैं। मान लीजिए, हम कहते हैं–'इतने में दूसरी ओर से कुछ आदमी आ पहुँचे और उपद्रव करने की चेष्टा की।' यह वाक्य व्याकरण की दृष्टि से इसलिए अशुद्ध है कि आदमी कर्ता का 'आ पहुँचे' क्रियापद से तो मेल बैठता है, परंतु दूसरे क्रियापद 'की' से मेल नहीं बैठता। इस वाक्य में यदि 'और' के बाद 'उन्होंने' जोड़ दिया जाए तो वाक्य बिलकुल ठीक हो जाएगा। उस दशा में इसका रूप होगा–'इतने में दूसरी ओर से कुछ आदमी आ पहुँचे और उन्होंने उपद्रव करने की चेष्टा की'। 'थककर वासुकि के मुँह से आग निकलने लगी' का तो यही अर्थ होगा कि आग ही थककर वासुकि के मुँह से निकलने लगी। इसलिए होना चाहिए–'वासुकि थक गया और उसके मुँह से आग निकलने लगी'। 'यहाँ के मजिस्ट्रेट ने शांतिप्रिय नागरिकों पर कर्फ्यू आॅर्डर लगाकर और उनके नेताओं को पकड़कर घोर अन्याय किया गया है' में पहले तो 'मजिस्ट्रेट ने' और अंत में

'किया गया है' आया है। अब इसमें का 'गया' निकाल दीजिए और तब देखिए। जरा-सी बात से वाक्य सुंदर और शुद्ध हो गया।

बहुत-कुछ इसी प्रकार की भूल 'उसने उधर देखा और बोला' में भी है। होना चाहिए-'उसने उधर देखा और कहा' या 'उसने उधर देखकर कहा' या 'उसने उधर देखा और वह बोला'। 'हम लोगों का कर्तव्य है कि जहाँ तक हो सके, गरीबों की सहायता की जाए' भी कुछ इसी प्रकार के कारणों से अशुद्ध है। इसका शुद्ध रूप होगा-'हम लोगों का कर्तव्य है कि जहाँ तक हो सके, गरीबों की सहायता करें'। इन सब उदाहरणों में इसीलिए दोष आ गया है कि आदि से अंत तक इनकी बनावट एक-सी नहीं है-इनका ठीक तरह से निर्वाह नहीं हुआ है। 'यह बात सही भी है और नहीं भी' भी ऐसा वाक्य है, जो बनावट की दृष्टि से ठीक नहीं है। इसमें के पहले 'भी' से तो 'सही' पर जोर पहुँचता है; और दूसरे 'भी' से 'नहीं' पर। यदि हमें 'सही' पर ही जोर पहुँचाना हो, तो वाक्य का रूप रखना चाहिए-यह बात सही भी है और गलत या बेठीक भी। पर यदि हम 'है' और 'नहीं' पर जोर पहुँचाना चाहते हों, तो हमें कहना पड़ेगा-'यह बात ठीक है भी और नहीं भी'।

एक और वाक्य लीजिए-'वहाँ जंगली फल और झरने का पानी पीकर हम लोग आगे बढ़े'। इसमें 'पानी' के बाद उससे संबंध रखनेवाली पूर्वकालिक क्रिया 'पीकर' तो है, पर 'फल' के बाद उससे संबंध रखने वाली कोई क्रिया नहीं है। इस वाक्य में जिस प्रकार 'पानी' के बाद 'पीकर' है, उसी प्रकार 'फल' के बाद 'खाकर' भी होना चाहिए, नहीं तो वाक्य की बनावट से यह अर्थ निकलेगा कि जिस प्रकार हमने पानी पिया था, उसी प्रकार जंगली फल भी पिए थे।

वाक्य ऐसा होना चाहिए, जिसका एक ही और स्पष्ट अर्थ हो। ऐसा न हो कि सीधे-सादे या स्पष्ट अर्थ के सिवा उसका कुछ और अर्थ भी निकल सके और सुनने या पढ़नेवालों को कुछ भ्रम हो। 'प्रधान अध्यापक लड़के चुनेंगे' कहने से यह स्पष्ट नहीं होता कि चुनने का काम प्रधान अध्यापक करेंगे या लड़के। वाक्य का यह अर्थ भी हो सकता है कि प्रधान अध्यापक कुछ लड़कों को चुनेंगे; और यह अर्थ भी हो सकता है कि सब लड़के मिलकर प्रधान अध्यापक चुनेंगे। 'अमेरिका भारत को जर्मनी से दूना अन्न देगा' से यह स्पष्ट

नहीं होता कि अमेरिका जितना अन्न जर्मनी को देगा, उससे दूना; या जर्मनी भारत को जितना अन्न देगा, उससे दूना। दूसरे महायुद्ध के समय एक ऐसा अवसर आया था, जब युरोप में भी और एशिया में भी बहुत बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ छिड़ने के लक्षण दिखाई देते थे। उस समय एक समाचार-पत्र में छपा था-'युरोप और एशिया में बहुत बड़ा युद्ध होगा'। इस वाक्य से असल बात का तो पता चलता नहीं था; हाँ, ऐसा जान पड़ता था कि एक तरफ युरोप वाले होंगे और दूसरी तरफ एशियावाले और दोनों आपस में बहुत बड़ा युद्ध करेंगे। यदि अंत में 'बहुत बड़े युद्ध होंगे' होता तो भी अर्थ कुछ स्पष्ट हो जाता। कुछ दिन हुए, एक बार तुर्की की सीमा के पास बहुत-सी रूसी सेनाएँ इकट्ठी हुई थीं। उसका जो समाचार एक पत्र में छपा था, उसके ऊपर लिखा था-'तुर्की के पास रूसी सेनाएँ'। पर इसका यह अर्थ होता था कि तुर्की ने अपने यहाँ रूसी सेनाएँ नौकर रख ली हैं, या उसके पास (अधिकार में) रूसी सेनाएँ हैं। खटमल मारने वाली एक दवा के विज्ञापन में छपा था-'खटमल के कष्ट का अंत कीजिए'। इसका अर्थ तो यही होता है कि खटमल को कोई कष्ट हो रहा है; उसका वह कष्ट दूर कीजिए। इसलिए ऐसे वाक्यों से सावधान रहना चाहिए।

कभी-कभी वाक्य में कोई ऐसा शब्द आ जाता है, जिसके दो या अधिक अर्थ होते हैं; और शब्द के कारण ही वाक्य का कुछ का कुछ अर्थ लग जाता है। 'हल' लकड़ी के उस औजार को भी कहते हैं, जिससे खेत जोते जाते हैं और किसी प्रश्न के निपटारे (के उपाय या ढंग) को भी कहते हैं। यदि किसी बड़े प्रश्न पर विचार हो रहा हो और उसे सुलझाने के उपाय सोचे जा रहे हों, और बीच में कोई कह बैठे-'मैं हल की तलाश में हूँ' तो सुनने वाले चक्कर में पड़ सकते हैं। 'मैं हल की तलाश में हूँ' का सीधा-सादा अर्थ तो यही होगा कि 'मैं खेत जोतने का हल ढूँढ़ रहा हूँ'। इसलिए कहना चाहिए-'मैं इस प्रश्न या सवाल के हल की तलाश में हूँ'।

'उस जमाने में जब अंग्रेजों को फाँसी पर लटकाना होता था, तब न्याय का ध्यान नहीं रखा जाता था' भी कुछ इसी प्रकार का वाक्य है, जिससे भ्रम हो सकता है। इससे यह स्पष्ट नहीं होता कि यह उस समय की बात है, जब अंग्रेज लोग दूसरों को फाँसी पर लटकाना चाहते थे; या उस समय की बात है, जब

लोग अंग्रेजों को फाँसी पर लटकाना चाहते थे। जिस प्रसंग (सन् 1857 का भारतीय स्वतंत्रता-युद्ध) में यह वाक्य हमारे देखने में आया था, उससे तो यह स्पष्ट हो जाता है कि जब अंग्रेज लोग भारतवासियों को फाँसी पर चढ़ाना चाहते थे, तब वे न्याय का ध्यान नहीं रखते थे; पर वाक्य की बनावट से इसका उलटा अर्थ भी निकल सकता है; इसलिए इस वाक्य में दोष है।

अर्थ की दृष्टि से इस बात का भी विचार करना पड़ता है कि वाक्य के सब अंगों की आपस में ठीक-ठीक संगति बैठे। 'यह देखने के लिए उन्होंने पीछे की तरफ मुड़कर देखा' में आए हुए 'देखने के लिए' और 'देखा' के कारण अर्थ के विचार से वाक्य अटपटा लगता है। संगति तो तब बैठेगी, जब हम कहेंगे—'यह देखने के लिए वह पीछे की तरफ मुड़ा'। यदि हम कहें—'बार-बार यह प्रश्न होता है कि इतने दिन बीत गए, पर अभी तक कुछ नहीं हुआ' तो यह इसलिए ठीक नहीं है कि आरंभ में 'प्रश्न' शब्द आने पर भी वाक्य में कहीं प्रश्न का कोई भाव नहीं है। प्रश्न का भाव तो तभी आएगा, जब कहा जाएगा—'इतने दिन बीत जाने पर भी अब तक क्यों कुछ नहीं हुआ अथवा अब तक क्या हुआ'। यह कहना—'आज तुमने अपनी नई चालाकी का नया नमूना दिखलाया है' भी अर्थ के विचार से ठीक नहीं है। नई चीज या बात का नमूना सदा नया ही होगा; हाँ, पुरानी चीज या बात का नया नमूना भी हो सकता है। इसलिए या तो होगा—'नई चालाकी का नमूना' या 'चालाकी का नया नमूना'। 'यह चीज सपने में मिलना दुर्लभ है' कहना भी ठीक नहीं है। हम चीज की दुर्लभता सूचित करना चाहते हैं न कि उसका सपने में मिलना। या तो होना चाहिए—'यह चीज सपने में भी नहीं मिल सकती' या 'यह चीज सपने में भी दुर्लभ है'। 'उस दिन आपको यह आशा हो गई थी कि निर्मला के मन पर हमारा सिक्का जम गया' में अर्थ के विचार से 'आशा' शब्द का प्रयोग ठीक नहीं है। 'आशा' सदा ऐसी बात के लिए होती है, जो अभी होने को हो। पर वाक्य के अंत में जो 'जम गया' क्रिया है, वह भूतकाल की सूचक है। इसलिए इस वाक्य के अंत में 'जम जाएगा' होना चाहिए। 'इससे हमें आशा होती थी कि इस्लाम का भविष्य उज्ज्वल है' में 'है' की जगह 'होगा' होना चाहिए। यदि हम कहें—'यह इस बात का प्रमाण है कि आपका वहाँ जाना आवश्यक है' तो इस वाक्य के अर्थ की संगति ठीक नहीं बैठती। कारण यह है कि 'प्रमाण' सदा ऐसी बात का होता है, जो या तो हो या

जिसे कुछ लोग ठीक मान चुके हों। जो बात अभी होने को हो या आनेवाली हो, उसके संबंध में 'प्रमाण' शब्द का प्रयोग ठीक नहीं है। यह कहना अवश्य ठीक है–'यह इस बात का प्रमाण है कि आप वहाँ जानेवाले हैं' या 'आपका वहाँ जाना आवश्यक हैं'। यह ठीक है कि संस्कृत में 'प्रमाण' के बहुत-से अर्थों में से एक अर्थ लक्षण या चिह्न भी है; पर उसका मुख्य और पहला अर्थ 'सबूत' ही है और ऊपर के वाक्य में पहले उसी अर्थ पर ध्यान जाता है। इसलिए ऐसे वाक्य में 'प्रमाण' का प्रयोग ठीक नहीं है।

वाक्य ऐसा होना चाहिए, जिसमें अर्थ के विचार से दो विरोधी शब्द या बातें न हों, जैसे–'तब शायद यह काम जरूर हो जाएगा' में 'शायद' और 'जरूर' दो विरोधी शब्द हैं, 'शायद' के साथ 'जरूर' या 'जरूर' के साथ 'शायद' नहीं चल सकता। 'प्रायः ऐसे अवसर आते हैं, जिनमें लोगों को कभी-कभी अपना मत बदलना पड़ता है' में प्रायः और 'कभी-कभी' दो विरोधी बातें हैं। 'वे बिलकुल चुप हैं और कहते हैं कि हम इस झगड़े में नहीं पड़ेंगे' में 'बिलकुल चुप हैं' और 'कहते हैं' दो विरोधी बातें हैं। 'आज-कल इसका प्रचार बहुत अधिक कम हो गया है' में 'कम' से पहले 'अधिक' बिलकुल व्यर्थ है। 'मार्ग की गरम धूल से थका हुआ साँप टेढ़ा-मेढ़ा चलता हुआ फुफकार रहा है और मोर की छाया में कुण्डली मारे बैठा है' में 'चलता हुआ' और 'बैठा है' दो विरोधी बातें तो हैं ही; 'गरम धूल से थका हुआ' भी इसलिए ठीक नहीं है कि गरम धूल थकाती नहीं, बल्कि जलाती, झुलसाती या तपाती है।

कभी-कभी इस तरह की विरोधी बातों के कारण वाक्य ऐसा हो जाता है कि उसका कुछ अर्थ नहीं निकलता, जैसे–'यदि यह जाति गुलाम न होती तो अब तक कभी की स्वतंत्र हो चुकी होती' - इसका सीधा-सादा अर्थ यह है कि यह जाति गुलाम होने के कारण ही अब तक स्वतंत्र नहीं हो सकी है। लेकिन इस तरह की बात कहना भी वैसा ही है, जैसे यह कहना–'यदि हम सोए न होते तो जागते होते' या 'यदि हम खा न लेते तो भूखे रहते'। इसी तरह के, पर इनसे भी विलक्षण वाक्य वे होते हैं; जिनका वास्तव में कुछ अर्थ ही नहीं होता। एक बार एक सभा में कहा गया था–'जिन लोगों तक हमारी आवाज न पहुँचती हो, वे कृपा करके हाथ उठा दें', पर यह बात कहते समय यह नहीं सोचा गया -

यदि लोगों के कानों तक आवाज पहुँचेगी ही नहीं, तो वे कैसे जानेंगे कि हमें हाथ उठाना चाहिए? इसलिए हमें अपनी बात के संबंध में इस प्रकार के अर्थ या आशय की ओर भी ध्यान रखना चाहिए।

अब कुछ ऐसे वाक्यों के उदाहरण लीजिए, जिनमें शब्दों का क्रम ठीक नहीं होता। 'इस लाठी से जितने तेरे हिमायती हैं, उन सबके सिर तोड़ दूँगा' का ठीक रूप होगा–'तेरे जितने हिमायती हैं, उन सबके सिर इस लाठी से तोड़ दूँगा'। 'यह कहकर मैंने जितने आदमी दुकान में बैठे थे, उन सबको देखा' का ठीक रूप होगा–'यह कहकर मैंने उन सब आदमियों की ओर देखा, जो उस दुकान में बैठे थे'। 'हम उनका मुँह उन्हें सौ रुपए देकर बंद करना चाहते हैं' से 'हम उन्हें सौ रुपए देकर उनका मुँह बंद करना चाहते हैं' कहना अधिक सुंदर भी है और अधिक स्पष्ट भी। इसी प्रकार 'अगले दो दिनों में मंत्रियों से जो बातचीत चल रही है, उसका निपटारा हो जाएगा' की जगह 'मंत्रियों से जो बात–चीत चल रही है, उसका दो दिनों में निपटारा हो जाएगा' कहना कहीं अच्छा है। और 'उन लोगों ने जिस समय मैं बातें कर रहा था, शोर मचाना शुरू किया' से 'जिस समय मैं बातें कर रहा था, उस समय उन लोगों ने शोर मचाना शुरू किया' कहना अधिक अच्छा है।

कभी–कभी वाक्य में कुछ शब्दों के ठीक स्थान पर न होने के कारण ही उसका और का और अर्थ निकल सकता है, जैसे–'रास्ते में लेटर–बक्स में मैंने जो पत्र लिखा था, वह छोड़ दिया।' इसका अर्थ यह होगा कि रास्ते में मैंने लेटर–बक्स में पत्र लिखा था। इसलिए इसका ठीक रूप होगा–'मैंने जो पत्र लिखा था, वह रास्ते में लेटर–बक्स में छोड़ दिया'। 'एक रेलगाड़ी में सफर करते समय कहा जाता है कि दो यूरोपियनों ने एक देशी कप्तान को पीटा' भी ठीक इसी प्रकार का वाक्य है। इसका शुद्ध रूप होगा–'कहा जाता है कि एक रेलगाड़ी में सफर करते समय दो युरोपियनों ने...पीटा'।

वाक्य ऐसा होना चाहिए, जिसका अर्थ तुरंत समझ में आ जाए; और अर्थ के संबंध में किसी प्रकार का भ्रम न हो। 'स्वतंत्रता के साथ इस देश की गरीबी का अंत हो जाएगा' का आप क्या अर्थ समझेंगे ? यही न कि जब स्वतंत्रता का अंत हो जाएगा, तब उसके साथ इस देश की गरीबी का भी अंत हो जाएगा ? पर

इस वाक्य का यह आशय नहीं है। वास्तव में यह वाक्य लिखने वाले का आशय यह था कि ज्योंही इस देश को स्वतंत्रता मिलेगी, त्योंही इसकी गरीबी का अंत हो जाएगा। इसलिए इस वाक्य का शुद्ध रूप होगा – 'स्वतंत्रता मिलते ही इस देश की गरीबी का अंत हो जाएगा'। मूल वाक्य अधूरा भी है और भ्रम उत्पन्न करने वाला भी।

'यदि जाड़े की वर्षा न गड़बड़ाती तो इस साल उपज अच्छी होती' का पढ़ने या सुनने वाले ठीक-ठीक अर्थ न समझ सकेंगे। उनकी समझ में यह बात न आएगी कि जाड़े की वर्षा स्वयं गड़बड़ा गई, जिससे उपज अच्छी नहीं हुई या अच्छी उपज न होने का कारण यह है कि जाड़े की वर्षा ने उसे गड़बड़ा दिया। दूसरे शब्दों में हम यों कह सकते हैं कि इस वाक्य के दो प्रकार के अर्थ हो सकते हैं। एक तो यह कि इस वर्ष जाड़े की वर्षा ही कुछ ऐसी गड़बड़ा गई कि उपज अच्छी नहीं हुई। और दूसरा यह कि उपज तो अच्छी हो जाती, पर जाड़े की वर्षा ने उसे गड़बड़ा दिया। यद्यपि फल या परिणाम के विचार से दोनों बातें बहुत-कुछ एक ही हैं, फिर भी दोनों में एक अंतर है। पहले अर्थ के अनुसार जाड़े की वर्षा स्वयं गड़बड़ा जाती है; और दूसरे अर्थ में यह स्वयं नहीं गड़बड़ाती, बल्कि उपज को गड़बड़ा देती है। और अर्थ के विचार से यह अंतर बहुत बड़ा है। इस गड़बड़ी का कारण यही है कि 'गड़बड़ाना' क्रिया अकर्मक भी है और सकर्मक भी। वाक्य से यह पता नहीं चलता कि उसमें इसका प्रयोग अकर्मक रूप में हुआ है या सकर्मक रूप में।

'उन्होंने एक कांग्रेसी मुसलमान को चोट पहुँचाई और कांग्रेस से अलग हो जाने के लिए धमकाया' भी बहुत-कुछ इसी प्रकार का वाक्य है। इसके अंतिम अंश 'कांग्रेस से अलग हो जाने के लिए धमकाया' का तो यही अर्थ हो सकता है कि उन्होंने यह धमकी दी कि हम स्वयं कांग्रेस से अलग हो जाएँगे; पर वाक्य का वास्तविक आशय यह नहीं है, बल्कि यह है कि उन्होंने उस कांग्रेसी मुसलमान को ही, जिसे उन्होंने चोट पहुँचाई थी, यह धमकी दी कि यदि तुम कांग्रेस से अलग न हो जाओगे, तो हम तुम्हारे साथ और भी अधिक बुरा व्यवहार करेंगे। इसलिए वाक्य का शुद्ध रूप होगा – 'उसे धमकाया कि यदि तुम कांग्रेस से अलग न हो जाओगे तो तुम्हारे लिए अच्छा न होगा'।

'अपनी चंचल जीभ से उसके कंधे के बाल हिल रहे थे' ऐसा वाक्य है, जो बनावट, अर्थ और व्याकरण सभी दृष्टियों से अशुद्ध है। पहले तो इसमें के पहले अंश 'अपनी चंचल जीभ से' का दूसरे अंश 'उसके बाल हिल रहे थे' से कोई संबंध नहीं बैठता। यह वाक्य की बनावट का दोष है। दूसरे, 'चंचल चीभ' से 'कंधे के बाल हिल रहे थे' की संगति न बैठने के कारण कोई अर्थ नहीं होता। और तीसरे, 'अपनी' के कुछ ही बाद 'उसके' व्याकरण की दृष्टि से ठीक नहीं है। वाक्य का वास्तविक आशय यह है कि उसकी चंचल जीभ बार-बार हिल रही थी; और उस जीभ के हिलने के कारण ही उसके कंधे के बाल भी हिल रहे थे; पर वाक्य की बनावट दूषित होने के कारण उससे यह अर्थ नहीं निकलता।

'वन-स्थल खिले हुए पेड़ों के द्वारा आनंद मना रहा था' भी बहुत-कुछ भद्दा और निरर्थक-सा वाक्य है। पहली बात तो यह है कि आनंद स्वयं मनाया जाता है, किसी के द्वारा नहीं मनाया जाता। फिर, 'खिले हुए पेड़ों के द्वारा' आनंद मनाने का कुछ अर्थ नहीं होता। इसीलिए इस वाक्य का कोई ठीक अर्थ नहीं निकलता। वास्तव में वाक्य का आशय यह है कि वन में जो पेड़ खिले हुए थे, उन्हें देखने से ऐसा जान पड़ता था कि वे आनंद मना रहे हैं; पर वाक्य की बनावट से यह बात स्पष्ट नहीं होती।

'चारों ओर से चल रही हवा के झोंकों से पेड़ हिल रहे हैं' ऐसा वाक्य है जो 'चल रही' क्रिया के कारण ही व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध और भद्दा हो गया है। यदि इस 'चल रही' की जगह 'चलनेवाली' या 'चलती हुई' होता तो वाक्य शुद्ध भी हो जाता और उसमें का भद्दापन भी निकल जाता। 'इस समय उठ रहे आंदोलन से यह भय होता है कि...' और 'बाढ़-पीड़ित क्षेत्रों में किए जा रहे प्रयत्नों का कोई विशेष परिणाम नहीं हो रहा है' भी उसी प्रकार के दूषित वाक्य हैं।

कभी-कभी वाक्यों में एक ही शब्द बार-बार कई जगह आकर उसे व्यर्थ बढ़ा भी देता है और भद्दा भी कर देता है, जैसे-'इतने में कोई चमककर आकर धक्का देकर निकल गया' में तीन बार 'कर' आया है। यह वाक्य बहुत ही सीधी और अच्छी तरह से इस प्रकार लिखा जा सकता है – 'इतने में कोई चमकता हुआ आया और धक्का देकर निकल गया'। 'शहर के एक आबाद मुहल्ले के

एक बड़े चौराहे के मोड़ के सामने के मकान में...' में पाँच जगह 'के' आया है, जिससे वाक्य बहुत भद्दा हो गया है। इसका ठीक रूप होगा–'शहर के एक आबाद मुहल्ले में एक बड़ा चौराहा था। वहाँ एक मोड़ के सामनेवाले मकान में...'

इस प्रकार की और अनेक बातें हैं जो यों देखने में तो बहुत छोटी या साधारण जान पड़ती हैं, पर जिनके कारण बड़ी-बड़ी भूलें हो जाती हैं और वाक्य में बहुत भद्दापन आ जाता है। विद्यार्थी ऐसी छोटी-छोटी और साधारण बातों पर ध्यान रखकर बहुत सहज में इस प्रकार की बड़ी-बड़ी भूलों से बच सकते हैं।

8

संज्ञाएँ

'संज्ञा' का अर्थ है नाम। नाम सदा या तो किसी चीज का होता है या किसी गुण, दशा या व्यापार का। हम दाल-रोटी खाते हैं, कपड़े पहनते हैं, पुस्तकें और समाचार-पत्र पढ़ते हैं, तरह-तरह के खेल खेलते हैं, कुछ काम-धंधा करते हैं, किसी से बातचीत करते हैं, किसी से मेल और किसी से लड़ाई-झगड़ा करते हैं और इसी प्रकार के न जाने कितने दूसरे काम करते हैं। हम रास्ते में चलते हैं तो हमें कहीं मकान मिलते हैं, कहीं गलियाँ और कहीं मैदान। हमें पुरुष, स्त्रियाँ और बालक तथा गाड़ियाँ, घोड़े और दूसरी सवारियाँ दिखाई देती हैं। गाँवों में हमें खेत, पेड़, पगडंडियाँ और झोंपड़ियाँ दिखाई देती हैं। इन वाक्यों में दाल-रोटी, कपड़े, पुस्तकें, समाचार-पत्र, खेल, काम-धंधा, बातचीत, मेल, लड़ाई-झगड़ा, मकान, पेड़, गलियाँ, मैदान, स्त्रियाँ, पुरुष, गाड़ियाँ, घोड़े और सवारियाँ सभी 'चीजें' हैं। इन चीजों की पहचान के लिए हमने इनके अलग-अलग नाम रख लिए हैं। व्याकरण में यही नाम 'संज्ञा' कहलाते हैं। 'संज्ञा' और 'नाम' वास्तव में एक ही चीज हैं। अच्छाई, बचपन और लेखन क्रमशः गुण, दशा और व्यापार (या कार्य) के नाम हैं, अतः ये शब्द और इसी प्रकार के दूसरे सैकड़ों-हजारों शब्द भी संज्ञा ही हैं।

आप पूछ सकते हैं कि दाल-रोटी, मकान, सड़क, खेत आदि तो चीजें हैं, पर स्त्रियाँ, पुरुष और बालक कैसे चीजों में गिने जा सकते हैं? और यदि इन्हें भी किसी तरह 'चीज' मान लें तो भी बातचीत, मेल, लड़ाई-झगड़े और काम-धंधे को हम कैसे 'चीज' मान सकते हैं ? इसका उत्तर यह है कि चीज या वस्तु का वास्तविक अर्थ बहुत व्यापक है। जो कुछ हमें दिखाई पड़े या जिसे हम छू या पकड़ सकें, वह तो 'चीज' या 'वस्तु' है ही; पर हम अपने मन से जिसकी

कल्पना कर लें, वह भी 'चीज' या 'वस्तु' की व्याख्या में आ जाता है। भूत-प्रेत, मृत्यु आदि ऐसी चीजें हैं, जो देखी, छुई या पकड़ी नहीं जा सकती; पर हमने अपनी बुद्धि से उनकी कल्पना कर ली है। दिन, रात, संध्या और सवेरा सब देखने में तो आते हैं, पर छुए या पकड़े नहीं जा सकते। फिर भी ये मानी हुई 'चीजें' हैं और इसीलिए इनके ये नाम भी हैं। हम कहते हैं–'आखिर सच भी कोई चीज है'। 'सच' न तो हमें दिखाई देता है, न उसे छू या पकड़ सकते हैं। तब वह 'चीज' कैसे हो गया ? इसलिए कि हमने उसे एक रूप में मान लिया है। इस प्रकार मेल, लड़ाई-झगड़ा आदि भी इसी तरह की 'चीजें' हैं। इसीलिए संज्ञाओं के मुख्य दो भेद माने गए हैं–(1) वस्तुवाचक या पदार्थवाचक और (2) भाववाचक। वस्तुवाचक या पदार्थवाचक संज्ञाओं के भी दो होते हैं–व्यक्तिवाचक और जातिवाचक। राम, कृष्ण, गंगा, जमुना आदि नामवाचक या व्यक्तिवाचक संज्ञाएँ हैं; घोड़ा, गाड़ी, घर, पाठशाला आदि जातिवाचक संज्ञाएँ हैं, और सच्चाई, सफेदी, उत्तमता, भोलापन आदि भाववाचक संज्ञाएँ हैं।

'पाठशाला' शब्द सुनते ही हमारी आँखों के सामने वह जगह आ जाती है, जहाँ लड़के पढ़ते हैं। 'पानी' का नाम सुनते ही हमारे मन में उस चीज का ध्यान आ जाता है, जो हम प्यास लगने पर पीते हैं और जो हमें नदियों, तालाबों और कुओं में एकत्र या वर्षा के समय आकाश से बरसता हुआ दिखाई देता है। जब हम कहते हैं–'जाओ, अंदर से कुरता उठा लाओ' तब आप कुरता ही लाते हैं, टोपी या कोट नहीं लाते। आप जानते हैं कि एक विशेष प्रकार का पहनावा ही 'कुरता' कहलाता है और वह धोती, टोपी या कोट से बिलकुल अलग तरह का होता है। आपको कुरते के संबंध में किसी प्रकार का भ्रम नहीं होता। जब हम कहते हैं–'जाओ, गोविंद को बुला लाओ' तब आप गोविंद को ही बुलाकर लाते हैं; राम, श्याम या कृष्ण को नहीं। यह इसीलिए कि नाम और वस्तु या व्यक्ति का कुछ ऐसा संबंध होता है, जो हमें उस वस्तु या व्यक्ति का निश्चय कराता और अनेक प्रकार की भूलों से बचाता है।

यह पुस्तक व्याकरण की नहीं है, इसलिए हम यहाँ विस्तार से यह बतलाने की आवश्यकता नहीं समझते कि व्याकरण में संज्ञाएँ कितने प्रकार की होती हैं या उनकी पहचान क्या है। हम यह भी समझते हैं कि आप व्याकरण पढ़ चुके होंगे और यह जानते होंगे कि संज्ञाएँ, सर्वनाम, विशेषण आदि कितने

प्रकार के होते हैं। इस पुस्तक का उद्देश्य तो यही बतलाना है कि इन सबका प्रयोग करने में लोग कैसी-कैसी भूलें करते हैं और उन भूलों से आप किस तरह बच सकते हैं। इसलिए हम यहाँ संज्ञाओं के भेद आदि बतलाने के फेर में न पड़कर उनसे संबंध रखने वाली भूलों का ही विचार करेंगे और ऐसी बातें बतलाएँगे, जो व्याकरण के क्षेत्र के बाहर की हैं।

यदि हम आपसे पूछें कि 'महिला' (या अबला) शब्द का क्या अर्थ है, तो आप झट कह बैठेंगे—स्त्री। फिर यदि पूछें कि 'पत्नी' का क्या अर्थ है, तो भी आप कहेंगे—स्त्री। इससे सिद्ध होता है कि एक तो जिसे 'महिला' कहते हैं, उसे 'स्त्री' कहते हैं; और दूसरे, जिसे 'पत्नी' कहते हैं, उसे भी 'स्त्री' कहते हैं। पर कठिनता यह है कि जिसे हम 'महिला' कहते हैं, उसे 'पत्नी' नहीं कह सकते और जिसे 'पत्नी' कहते हैं उसे 'महिला' नहीं कह सकते। हम आपको 'महिला' का अर्थ 'पत्नी' नहीं बतला सकते। हाँ, यह बात दूसरी है कि कोई महिला भी किसी सज्जन की 'पत्नी' हों। 'महिला' शब्द भले घर की स्त्रियों के संबंध में बोला जाता है। उनमें ब्याही हुई स्त्रियाँ भी हो सकती हैं, बिना ब्याही हुई भी और विधवाएँ भी। पर 'पत्नी' सदा ब्याही हुई स्त्री को ही कहेंगे, और वह भी उसी अवस्था में, जब उसके पति का भी उसके साथ उल्लेख हो, जैसे—'ये हमारे भाई की पत्नी हैं' या 'ये हमारे एक मित्र की पत्नी हैं'। ऐसे अवसरों पर हम 'पत्नी' की जगह 'महिला' या 'अबला' आदि का प्रयोग नहीं कर सकते। अब 'स्त्री' शब्द लीजिए। हम 'महिला' को भी स्त्री कह सकते हैं और 'पत्नी' को भी। पर जब हम हर जगह 'महिला' शब्द के स्थान पर 'पत्नी' शब्द का और 'पत्नी' शब्द के स्थान पर 'महिला' शब्द का प्रयोग नहीं कर सकते, तब यह सिद्ध होता है कि 'स्त्री' शब्द के दो अर्थ हैं—एक महिला और दूसरा पत्नी। और इसीलिए हमें यह सोचने की आवश्यकता होती है कि कहाँ 'महिला' शब्द का, कहाँ 'स्त्री' शब्द का और कहाँ 'पत्नी' शब्द का प्रयोग करना चाहिए।

पहले हम कई अवसरों पर कह आए हैं कि एक शब्द के कई अर्थ होते हैं और हमें उन शब्दों का प्रयोग करते समय उनके मुख्य अर्थ का ध्यान रखना चाहिए। यहाँ हम इतना और बतला देना चाहते हैं कि कुछ शब्द ऐसे भी होते हैं, जो यों देखने में तो एक ही अर्थवाले जान पड़ते हैं, फिर भी जिनके अर्थों में थोड़ा-बहुत भेद होता है। ऊपर 'महिला' 'पत्नी' और 'स्त्री' के संबंध में जो बातें

कही गई हैं, वे अर्थों के इसी प्रकार के सूक्ष्म भेदों के आधार पर हैं। शब्दों का प्रयोग करते समय जहाँ हम इस प्रकार के सूक्ष्म भेदों का विचार नहीं करते, वहाँ हमसे भाषा-संबंधी बड़ी-बड़ी भूलें होती हैं। इसलिए जो लोग ऐसे भूलों से बचना चाहते हों, उन्हें शब्दों और उनके अर्थों के सूक्ष्म भेदों का सदा पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिए।

जिस प्रकार के सूक्ष्म भेद महिला, स्त्री और पत्नी के अर्थों में हैं, बहुत-कुछ उसी प्रकार के सूक्ष्म भेद 'खेद' और 'दुःख' सरीखे शब्दों में भी हैं। 'खेद' हमारे मन की वह अवस्था है, जिसमें उसकी प्रसन्नता कुछ कम हो जाती है और उसमें एक तरह की उदासी आ जाती है। यदि हम कहें-'मुझे खेद है कि आपने मेरे पत्र का उत्तर नहीं दिया' या 'मुझे खेद है कि आज आपसे भेंट न कर सकूँगा' तो यह 'खेद' का ठीक प्रयोग होगा। 'दुःख' में भी मन की प्रसन्नता घटती है, पर 'खेद' की अपेक्षा बहुत अधिक घटती है। 'दुःख' वास्तव में 'सुख' का बिलकुल उलटा है। 'सुख' के समय हमारे मन में जितनी प्रसन्नता होती है; 'दुःख' के समय प्रायः उतना ही कष्ट होता है। 'दुःख' में 'खेद' से बढ़कर एक बात और होती है। हम 'दुःख' से छुटकारा पाना चाहते हैं और उससे दूर भागते हैं। हम चाहते हैं कि जितनी जल्दी हो सके, हमारे दुःख का अंत हो जाए। पर 'खेद' हमारे मन में थोड़े समय के लिए आता और जल्दी ही आप-से-आप दूर हो जाता है। उससे छुटकारा पाने का भाव हमारे मन में उत्पन्न ही नहीं होने पाता। इसीलिए यह कहना तो ठीक है-'आपके पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर मुझे बहुत दुःख हुआ', पर यह कहना ठीक नहीं है – 'आपका पत्र न मिलने से मैं बहुत दुःखी हूँ'। ऐसे अवसरों पर 'दुःख' की जगह 'खेद' का प्रयोग करना चाहिए। 'दुःख' से भी बढ़कर मन की एक और बुरी अवस्था होती है, जिसे 'शोक' कहते हैं। यह 'शोक' किसी परम आत्मीय या प्रिय की मृत्यु से ही होता है। इसीलिए किसी बहुत बड़े आदमी की मृत्यु होने पर कहा जाता है-'उसकी मृत्यु से सारे नगर में शोक छा गया'। पर यदि हम कहें-'मुझे इस बात का शोक है कि आपने मेरे पत्र का उत्तर नहीं दिया' तो 'शोक' का ऐसा प्रयोग बहुत भद्दा होगा और इसे देखकर समझदार लोग हमारी हँसी ही उड़ाएँगे।

बहुत-से लोग 'उधार' और 'मँगनी' का अंतर नहीं समझते और इनमें से एक का प्रयोग दूसरे की जगह कर जाते हैं। किसी से 'कुछ रुपए उधार लेना' तो

ठीक है, पर 'पुस्तक उधार लेना' ठीक नहीं है। 'उधार' का प्रयोग केवल रुपए-पैसे के लिए और 'मँगनी' का प्रयोग चीजों या सामान के लिए होना चाहिए। हम किसी से पुस्तक या कलम तो 'मँगनी' माँग सकते हैं, पर रुपए 'मँगनी' नहीं, 'उधार' ही ले सकते हैं। कारण यह है कि जो चीज किसी से लेकर ज्यों-की-त्यों या वही लौटाई जाती हो, वही 'मँगनी' होती है। रुपए ज्यों-के-त्यों या वही नहीं लौटाए जाते, बल्कि उनके बदले दूसरे रुपए लौटाए जाते हैं।

साधारणतः लोग यह समझते हैं कि 'प्रार्थना' और 'निवेदन' में कोई अंतर नहीं है और इसीलिए वे एक की जगह दूसरे शब्द का प्रयोग कर जाते हैं। पर यदि विचारपूर्वक देखा जाए तो दोनों में बहुत अंतर है। जब हम अपने से किसी बड़े से कोई ऐसा काम कराना चाहते हैं, जो उसकी शक्ति में होता है, तब हम उस काम के लिए उससे जो कुछ कहते हैं, वह 'प्रार्थना' कहलाता है। हम अपने गुरुजी से प्रार्थना करते हैं–'आप हमें एक दिन की छुट्टी दें'। अपने बड़े भाई या पिताजी से प्रार्थना करते हैं–'आप हमें पुस्तकें या कपड़े ले दें'। अपने भाई-बन्धुओं और मित्रों से प्रार्थना करते हैं–'आप हमारे छोटे भाई के विवाह के दिन हमारे यहाँ आने की कृपा करें' और ईश्वर से प्रार्थना करते हैं–'आप हमें सब कष्टों से बचाएँ और हमें अच्छे रास्ते पर चलाएँ'। प्रार्थना करते समय हमारे मन में किसी से कोई काम कराने की इच्छा होती है। 'निवेदन' में प्रार्थनावाली और सब बातें तो होती या हो सकती हैं, पर यह 'इच्छावाली' बात नहीं होती। उसमें अपने विषय की कोई बात किसी बड़े के सामने केवल कही या रखी जाती है। इसीलिए हम कहते हैं–'मुझे जो कुछ निवेदन करना था, वह मैं कर चुका। अब आपकी जो इच्छा हो, वह करें' या 'पहले मेरा सारा निवेदन सुन लें, और तब जो कुछ करना हो, वह करें'। इन उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि 'निवेदन' में अपनी ओर से कोई काम करने के लिए नहीं कहा जाता। उस संबंध में कोई काम करने या न करने का भार उसी पर छोड़ दिया जाता है, जिससे निवेदन किया जाता है। इसीलिए यह कहना ठीक नहीं है–'प्रार्थना है कि कल हमारे यहाँ प्रीति-भोज होगा' या 'प्रार्थना है कि आज मेरे भाई का शरीर अच्छा नहीं है'। हाँ, यह कहना ठीक है–'प्रार्थना है कि मेरे भाई के लिए कुछ दवा भेज दें' अथवा–'प्रार्थना है कि घर जाने के लिए पचीस रुपए दिलवा दें'।

बहुत-से लोग भूल से यह समझते हैं कि 'आकार' और 'रूप' दोनों एक

चीज हैं; पर वास्तव में इन दोनों में बहुत अंतर है। 'आकार' में किसी चीज की केवल लंबाई, चौड़ाई, मोटाई आदि आती हैं; बल्कि हम कह सकते हैं कि कोई चीज देखने पर हमारे सामने उसकी जो बाहरी या ऊपरी रेखाएँ आती हैं, वही मिलकर 'आकार' कहलाती हैं। उनकी लम्बाई-चौड़ाई या बाहरी रेखाओं आदि के बीच जो वर्ण या उतार-चढ़ाव होते हैं, वे 'आकार' के अंतर्गत नहीं आते। पर इन सब चीजों के मेल से जो आकृति बनती है, वह 'रूप' है। रूप में लम्बाई-चौड़ाई, वर्ण या रंग, उतार-चढ़ाव और उभार सभी आ जाते हैं। इसीलिए हम कहते हैं-'उसका आकार लंबा है' या 'स्थूल है' अ..दि; और उसका रूप सुंदर (या देखने में अच्छा) है' आदि। और इसीलिए यह कहना ठीक नहीं है-'आज यह पुस्तक छपे आकार में देखकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई'। यहाँ 'आकार' की जगह 'रूप' होना चाहिए। और इसीलिए यह कहना भी ठीक नहीं है-'इस बार पुस्तक लंबे रूप में छपी है' अथवा 'इस नाले का रूप पहले से बहुत बढ़ गया है'। यहाँ 'रूप' की जगह 'आकार' होना चाहिए।

यदि विचारपूर्वक देखा जाए तो इसी प्रकार के अंतर 'खेल' और 'खिलवाड़' में, 'थाना' और 'कोतवाली' में, 'लिपि' और 'भाषा' में, 'बोली' और 'भाषा' में, 'लेख' और 'लिखावट' में, 'बाजार' और 'हाट' में, 'चीज' और 'सामान' में, 'शिक्षा' और 'अध्ययन' में, 'राजा' और 'शासक' में, 'प्रजा' और 'निवासी' में, 'नाती' और 'पोता' में, 'अंश' और 'भाग' में, 'आचरण' और 'व्यवहार' में, 'सच्चाई' और 'ईमानदारी' में, 'पाजीपन' और 'नीचता' में, 'मकान' और 'कोठी' में, 'छज्जा' और 'बरामदा' में, 'पेड़' और 'पौधा' में, 'घोड़ा' और 'टट्टू' में, 'छड़ी' और 'डंडा' में तथा इसी प्रकार के दूसरे सैकड़ों-हजारों शब्दों में हैं। यों देखने में हम भले ही समझ लें कि दो शब्द प्रायः एक-से हैं, पर विचार करने पर हमें उनमें बहुत-कुछ अंतर दिखाई देगा। हम जहाँ 'लज्जा' का प्रयोग कर सकते हैं, वहाँ 'संकोच' का प्रयोग नहीं कर सकते और जहाँ 'आकांक्षा' रख सकते हैं वहाँ 'इच्छा' नहीं रख सकते। इसलिए हमें संज्ञाओं का प्रयोग बहुत ही समझ-बूझकर और सावधानी से करना चाहिए।

मान लीजिए कि हमें दो ऐसी पुस्तकें मिलती हैं, जिनके विषय आपस में बहुत-कुछ मिलते हैं। पर उनके संबंध में हम यह नहीं कह सकते-'इन दोनों पुस्तकों में बहुत मेल है'। हमें कहना पड़ेगा-'इन पुस्तकों में बहुत-कुछ समानता है'। पर यदि दो लड़कों का आपस में बहुत मेल-जोल दिखाई दे तो

हम अवश्य कह सकते हैं–'इन दोनों लड़कों में बहुत मेल है'। 'ग्रामीणों और डाकुओं में युद्ध' कहना इस लिए ठीक नहीं है कि 'युद्ध' सेनाओं की लड़ाई को कहते हैं, साधारण आदमियों की लड़ाई को नहीं। इसलिए यहाँ 'युद्ध' की जगह 'लड़ाई' होना चाहिए। 'चुटकी बजाते ही गिलहरी पेड़ की छत पर चढ़ गई' कहने से '...पेड़ के ऊपरी भाग पर पहुँच गई' कहना ही ठीक है। 'वह लड़का डॉक्टरी परीक्षा के लिए भेजा गया है' में 'परीक्षा' की जगह 'जाँच' होना चाहिए। हाँ, 'इस वर्ष सौ लड़के परीक्षा में बैठे हैं' कहना बिलकुल ठीक है। यहाँ 'परीक्षा' की जगह 'जाँच' का प्रयोग नहीं किया जा सकता। 'इस वट वृक्ष की छाया में नगर की सारी जनसंख्या अच्छी तरह विश्राम कर सकती है' में 'जनसंख्या' का प्रयोग ठीक नहीं है। इसकी जगह 'निवासी' या इसी प्रकार का और कोई शब्द होना चाहिए। हाँ, यह अवश्य कहा जा सकता है–'दस वर्षों में हमारे नगर की जनसंख्या दूनी हो गई है'। 'इस समय हमारी आयु बीस वर्ष की है' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि आयु में जन्म से मृत्यु तक का सारा समय आ जाता है। यहाँ 'आयु' की जगह 'अवस्था'[1] शब्द होना चाहिए। हाँ, यदि कोई आदमी साठ वर्ष का होकर मरे, तो हम कह सकते हैं–'उसने साठ वर्ष की आयु पाई'। 'यदि नदी का पानी कुछ और बढ़ा तो सारे गाँव के डूब जाने का संदेह है' में 'संदेह' की जगह 'आशंका' या 'भय' होना चाहिए।

हमें संज्ञाओं के चुनाव में तो सतर्क रहना ही चाहिए, उनके प्रयोग में संगति का भी ध्यान रखना चाहिए। यह कहना ठीक नहीं है–'तभी से देश के गले में पराधीनता की बेड़ियाँ पड़ गईं' क्योंकि बेड़ियाँ पैरों में पड़ती हैं, गले में नहीं। प्रयोग की दृष्टि से 'यह बात विश्वास की जाने लगी है कि...' के बदले हमें कहना चाहिए–'इस बात का विश्वास किया जाने लगा है कि...।' और 'ऐसा करना मैंने पहले ही निश्चय कर लिया था' में या तो 'निश्चय' की जगह 'निश्चित' होना चाहिए, या वाक्य का रूप होना चाहिए–'मैंने पहले ही निश्चय कर लिया था कि ऐसा करूँगा'।

---

1. 'अवस्था' का एक और अर्थ 'हाल' या 'दशा' भी होता है, जैसे–'आजकल उनकी अवस्था ठीक नहीं है; अर्थात् वे या तो बहुत बीमार हैं या उन्हें धन का कष्ट है, ऐसी अवस्था में तो यही उचित जान पड़ता है कि हम लोग यहाँ से हट जाएँ।'

9

सर्वनाम

हिंदी व्याकरण में 'सर्वनाम' उन शब्दों को कहते हैं, जो वाक्यों में संज्ञाओं की जगह, बल्कि यों कहना चाहिए कि व्यक्तियों या पदार्थों के नामों की जगह आते हैं। सर्वनाम की आवश्यकता साधारणतः इसलिए होती है कि हमें किसी संज्ञा का बार-बार प्रयोग न करना पड़े। जैसे, हम यही कहते-'आज मैं माधव के घर गया था। माधव घर पर नहीं था। माधव अपने चाचा के यहाँ गया था, क्योंकि माधव के चाचा बीमार थे।' बल्कि हम यही कहते हैं-'आज मैं माधव के घर गया। वह घर पर नहीं था। उस समय वह अपने चाचा के यहाँ गया था, क्योंकि वे बीमार थे'। पहले कथन में चार बार 'माधव' शब्द आया है; पर दूसरे कथन में एक ही बार आया है। बाकी स्थानों में 'वह' और 'उसका' शब्द आए हैं। दूसरे कथन का जो दूसरा रूप ऊपर दिया गया है, उसमें भी दूसरी बार 'चाचा' की जगह 'वे' आया है। इसके सिवा दोनों कथनों का आरंभ जिस 'मैं' शब्द से हुआ है, वह भी सर्वनाम ही है; क्योंकि वह बोलनेवाले का सूचक है और उसके नाम की जगह आया है। हमने 'माधव' या 'चाचा' का नाम (संज्ञा) न लेकर जिन शब्दों से काम चलाया है, वे सब शब्द सर्वनाम हैं। सर्वनाम का अर्थ ही है-जो सब का नाम हो। जिस प्रकार हम अपने आपको 'हम' या 'मैं' कहते हैं, उसी प्रकार और सब लोग भी अपने आपको 'हम' या 'मैं' कहते या कह सकते हैं। नाम की जगह आनेवाले शब्दों का प्रयोग सभी लोग करते हैं। और इस प्रकार के शब्द नाम या संज्ञा की जगह आते हैं, इसलिए संस्कृत व्याकरण में 'सर्वनाम' को भी 'संज्ञा' का ही भेद या प्रकार माना जाता है।

पर हम बात-चीत करते समय या लिखते समय कभी यह नहीं कहते या लिखते-'हम अभी एक संज्ञा का प्रयोग कर चुके हैं, इसलिए अब आगे इसकी जगह हम सर्वनाम का प्रयोग करेंगे'। बिना हमारे कहे या बतलाए हुए सर्वनाम आप-से-आप हमारे वाक्यों में आते रहते हैं और सुननेवाले उनका अर्थ

समझते चलते हैं। इसके सिवा कुछ अवसरों पर हम बिना किसी संज्ञा का प्रयोग किए भी सर्वनाम का प्रयोग कर जाते हैं, जैसे–'जरा दियासलाई लाकर इसे जला दो'। ऐसे अवसरों पर सुननेवाला अवसर और प्रसंग से ही समझ लेता है कि 'इसे' से हमारा किस वस्तु से अभिप्राय है। हो सकता है कि हम दीया जलाने के लिए कहते हों! यह भी हो सकता है कि हम रद्दी कागज जलाने के लिए कहते हों या हो सकता है कि हम रसोई बनाना या दूध गरम करना चाहते हों और चूल्हा जलाने के लिए कहते हों! इससे सिद्ध होता है कि सर्वनाम सदा संज्ञाओं के स्थान पर ही नहीं आते। हाँ, वे संज्ञाओं के सूचक अवश्य होते हैं–वे किसी वस्तु या व्यक्ति की ओर संकेत करते हैं। सुनने या पढ़नेवाले अवसर और प्रसंग के अनुसार समझ लेते हैं कि हमारा मतलब किस चीज से है।

हम किसी दुकान पर जाते हैं और दुकानदार से कोई चीज माँगते हैं। वह कहता है–'वह तो मेरे पास नहीं है'। हम समझ लेते हैं कि उसका 'वह' उसी चीज का सूचक है, जो हमने उससे माँगी थी। हम आपसे कोई पुस्तक माँगते हैं। आप कहते हैं–'वह तो खो गई' या 'वह मेरे एक मित्र ले गए हैं'। हम समझ लेते हैं कि 'वह' से आपका अभिप्राय उसी पुस्तक से है जो हम आपसे लेना चाहते हैं। ऐसे अवसरों पर यह समझने में कोई कठिनता नहीं होती कि वाक्य में आया हुआ सर्वनाम किसी वस्तु या व्यक्ति का सूचक है।

पर कुछ अवसर ऐसे भी होते हैं, जिनमें सुनने या पढ़ने वालों को कुछ भ्रम हो सकता है। मान लीजिए, हम कहते हैं–'मीना जाति के लोगों के बाल बहुत लम्बे होते हैं। वे राजपूताने भर में फैले हुए हैं।' इससे आप क्या अभिप्राय समझेंगे ? यह कि मीना लोग राजपूताने भर में फैले हुए हैं या यह कि उनके बाल ? इस वाक्य की विलक्षण बनावट से यह अर्थ निकलता या निकल सकता है कि मीना जाति के लोगों के बाल ही राजपूताने भर में फैले हुए हैं। इस वाक्य का अच्छा रूप होगा–'मीना जाति के लोग राजपूताने भर में फैले हुए हैं। उनके बाल लंबे होते हैं'। यदि हम कहें–'इंद्र उन दानवों से नहीं जीते जा सकते; आप चलकर उनका नाश करें' तो अर्थ यही होगा कि कहने वाला इंद्र का ही नाश करना चाहता है। यदि वह दानवों का नाश करना चाहता हो, तो उसे कहना चाहिए–'वे दानव इंद्र से नहीं जीते जा सकते, आप चलकर उनका नाश करें'

या 'इंद्र उन दानवों को नहीं जीत सकते, आप चलकर उन दानवों का नाश करें' या 'उनका नाश करने में इंद्र की सहायता करें'।

एक और वाक्य लीजिए – 'उन्होंने चीन से शस्त्र भेजने की व्यवस्था की थी, पर वे बीच ही में पकड़ लिए गए'। नियम के अनुसार इस वाक्य का यही अर्थ होगा कि जिन्होंने शस्त्र भेजने की व्यवस्था की थी, वही बीच में पकड़े गए और शस्त्र न भेज सके। इसका यह अर्थ नहीं होगा कि उनके भेजे हुए शस्त्र बीच में पकड़े गए। फिर भी यदि बीच में शस्त्रों का जिक्र आ जाने के कारण वाक्य की बनावट से संदेह की कुछ भी जगह दिखाई दे, तो हम कह सकते हैं–'वे स्वयं बीच में पकड़े गए'। 'अपने भाई की बातों में अब उन्हें विश्वास हो गया है कि उनकी शिक्षा व्यर्थ नहीं हो रही है' कहने से स्पष्ट नहीं होता कि इसमें 'उनकी' किसके लिए आया है। इसका संबंध 'अपने भाई' के साथ है या 'उन्हें' के साथ ? साधारणतः इसका अर्थ यही होगा कि 'उनके भाई की शिक्षा व्यर्थ नहीं हो रही है'। इस वाक्य में यदि 'उनकी' जगह 'हमारी' या 'मेरी' कर दिया जाए, तो उसका संबंध 'उन्हें' के साथ हो जाएगा। यदि हम कहें–'यह नहीं कहा जा सकता कि उनके पापों के क्या फल होंगे और वे उनसे कहाँ तक बच सकेंगे' तो इससे यह स्पष्ट नहीं होता कि 'उनसे' हमारा अभिप्राय 'पापों' से है या उनके 'फल' से; अर्थात् यह नहीं कहा जा सकता कि वे अपने पापों से कहाँ तक बच सकेंगे या उनके फलों से। यह ठीक है कि 'उनसे' वास्तव में 'फल' के तुरंत बाद आया है, और इसलिए वह 'फल' की ओर ही संकेत करता है। फिर भी वाक्य को अधिक स्पष्ट करने के लिए उसके अंतिम अंश का रूप होना चाहिए–'वे उन फलों (और यदि हमारा अभिप्राय हो तो–पापों) से कहाँ तक बच सकेंगे'। यदि हम किसी वाक्य में साधारण रूप से लिख जाएँ–'आप सोचते होंगे कि कांग्रेस ने हमारा बहुत सम्मान किया है' तो इससे यह स्पष्ट नहीं होता कि इसमें का 'हमारा' स्वयं बोलनेवाले के लिए आया है, या उस आदमी के लिए, जिससे यह बात कही जा रही है। इसीलिए अंग्रेजी में जहाँ ऐसे अवसरों पर भ्रम हो सकता है, वहाँ सर्वनाम के बाद कोष्ठक में उस व्यक्ति का नाम दे दिया जाता है, जिसके लिए वह सर्वनाम आता है। इन सब उदाहरणों से यह सिद्ध होता है कि सर्वनामों का प्रयोग करते समय हमें वाक्य की बनावट पर बहुत ध्यान रखना चाहिए और उसका रूप ऐसा नहीं रखना चाहिए, जिससे

अर्थ के संबंध में किसी प्रकार का संदेह हो। यदि कुछ भी संदेह हो सकता हो तो सर्वनामों के भरोसे ही न रहकर संज्ञाओं का फिर से प्रयोग करना चाहिए। केवल सर्वनामों का प्रयोग उसी अवस्था में उसी रूप में होना चाहिए, जिसमें पढ़नेवालों को कुछ भ्रम न हो।

इसी से मिलता-जुलता एक और प्रकार है, जिसमें सर्वनामों के प्रयोग से अर्थ स्पष्ट नहीं होने पाता, जैसे-'उसने प्रार्थना की कि परमात्मा उसे इस योग्य बनाएँ' कहने से यह स्पष्ट नहीं होता कि इसमें का 'उसे' स्वयं बोलनेवाले के लिए आया है या और किसी के लिए। यदि वह और किसी के लिए आया हो, तब तो वाक्य इसी रूप में रहना चाहिए। पर यदि वह स्वयं बोलनेवाले के लिए हो तो, 'उसे' की जगह 'मुझे' होना चाहिए। यही बात-'तब आपने कहा कि आप ब्रिटिश नहीं, बल्कि अफगान नागरिक हैं' के संबंध में भी है। यदि इसमें का 'आप' किसी दूसरे आदमी के लिए हो, तब तो यह वाक्य ठीक होगा पर यदि यह स्वयं बोलने वाले के लिए हो तो इसकी जगह 'हम' होना चाहिए। वाक्यों में सर्वनाम-संबंधी इस प्रकार की भूलें इसीलिए होती हैं कि लोग अपना सीधा-सादा हिंदी ढंग छोड़कर अंग्रेजी ढंग के अप्रत्यक्ष कथन के फेर में पड़ जाते हैं। ऐसी भूलों और ऐसे कथन-प्रकार से बचना चाहिए।

सर्वनामों के संबंध में ध्यान रखने योग्य और भी कई बातें हैं। पहली बात यह है कि वाक्यों में एक ही व्यक्ति, वस्तु या घटना के सूचक सर्वनाम एक ही या एक प्रकार के हों। 'मैं' जिस प्रकार का सर्वनाम है, 'हम' उस प्रकार का सर्वनाम नहीं है और 'वह' जिस प्रकार का सर्वनाम है, 'वे' उस प्रकार का सर्वनाम नहीं है। 'मैं' और 'वह' एकवचन हैं; 'हम' और 'वे' बहुवचन। यह बात दूसरी है कि कुछ अवसरों पर 'हम' और 'वे' अनेक व्यक्तियों के सूचक न हों, बल्कि केवल अपना बड़प्पन दिखलाने या दूसरों का आदर करने के लिए उनका प्रयोग हुआ हो। ऐसे शब्द प्रायः आदरार्थक होते हैं, पर होते बहुवचन ही हैं। 'मैं सवेरे आपके यहाँ आया था, पर आप घर पर नहीं थे; इसलीए हम लौट आए' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि इसमें पहले 'मैं' आया है और बाद में 'हम'। 'यद्यपि आप यहाँ आधी रात के समय पहुँचे थे तो भी बहुत-से लोग यहाँ बैठे हुए उनकी राह देख रहे थे' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि इसमें पहले एक व्यक्ति के लिए 'आप' आया है और बाद में उसी व्यक्ति के लिए 'उनके'

आया है। इसमें 'उनकी' की जगह भी 'आपकी' ही होना चाहिए। 'यह बात इतनी स्पष्ट है कि उसको सब लोग समझ सकते हैं' में 'उसको' की जगह 'इसको' या 'इसे' होना चाहिए। 'गंगाजी और उसकी सहायक नदियाँ' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि पहले तो हम गंगा का आदर करने के लिए उसके साथ 'जी' लगाते हैं और तब 'उसके' कह जाते हैं। या तो हमें कहना चाहिए–'गंगा और उसकी सहायक नदियाँ' या 'गंगाजी और उनकी सहायक नदियाँ'। सर्वनामों का निर्वाह स्वयं उनके रूप और वचन तक ही नहीं होना चाहिए, बल्कि उनके बाद आनेवाली क्रियाओं तक भी होना चाहिए। 'हम जाऊँगा', 'तुम जाएगा' और 'वे चला गया' सरीखे वाक्य कितने भद्दे जान पड़ते हैं! यह ठीक है कि पुरानी या आरंभिक हिंदी में 'हमें आप क्या दोगे' और 'आप जो कुछ कहो, सो करूँ' सरीखे प्रयोग मिलते हैं; पर ये अच्छे या शुद्ध नहीं माने जा सकते। इन्हें प्रारंभिक काल के प्रयोग समझकर छोड़ देना चाहिए और इनका अनुकरण नहीं करना चाहिए। सदा 'हमें आप क्या देंगे' और 'आप जो कुछ कहें वह करूँ' सरीखे प्रयोग ही करने चाहिए।

प्राय: लोग सर्वनामों में वचन का ठीक तरह से निर्वाह नहीं करते और कई प्रकार की भूलें करते हैं। बहुत-से लोग एकवचन में भी और बहुवचन में भी 'यह' और 'वह' का ही प्रयोग करते हैं; पर आजकल 'यह' का बहुवचन रूप 'ये' और 'वह' का 'वे' ही अच्छा समझा जाता है। 'यह सब पुस्तकें उठा ले जाओ' से 'ये सब पुस्तकें उठा ले जाओ' और 'वह लोग आ गए' से 'वे लोग आ गए' आदि प्रयोग ही आजकल अच्छे समझे जाते हैं।

किसी वाक्य के अंतर्गत उपवाक्य रखने का ढंग इधर विकसित हुआ है। यह अंग्रेजी वाक्य-रचना का अनुकरण है। ऐसे वाक्यों में लोग भूल से व्यर्थ ही सर्वनाम का प्रयोग कर जाते हैं, जैसे–'एक घर, जो खाली पड़ा था, उसे जलाकर राख कर दिया गया'। इस वाक्य में 'उसे' व्यर्थ आया है। 'उसे' के बिना भी इसका ठीक और पूरा अर्थ निकलता है–'एक घर...जलाकर राख कर दिया गया'। वैसे हिंदी ढंग के अनुसार उक्त वाक्य इस प्रकार लिखा जाएगा– 'जो घर खाली पड़ा था, उसे जलाकर राख कर दिया गया'। इसी प्रकार – 'उनकी लिखी हुई सूचना, जिसपर मजिस्ट्रेट ने आज्ञा लिखी थी, उसको देखकर उन्होंने कहा...' भी है। इस वाक्य में 'उसको' का प्रयोग व्यर्थ है। साधारणत:

हम यही कह सकते हैं–'उनकी लिखी हुई सूचना देखकर उन्होंने कहा...' इस वाक्य के बीच में 'जिस पर मजिस्ट्रेट ने आज्ञा लिखी थी' आ जाने से कोई अंतर नहीं पड़ता। इसलिए वाक्य का रूप होना चाहिए–'उनकी लिखी हुई सूचना, जिस पर मजिस्ट्रेट ने आज्ञा लिखी थी, देखकर उन्होंने कहा...।' 'कुछ पशु खेती के काम में आने के सिवा वे धर्म की दृष्टि से भी पूज्य हैं' में 'वे' ने व्यर्थ ही बीच में आकर वाक्य भद्दा और अशुद्ध कर दिया है।

कुछ अवस्थाओं में लोग सर्वनामों के संबंध में एक और प्रकार की भूल कर जाते हैं। वाक्य में जो सर्वनाम चाहिए, वह न रखकर वे कोई और अथवा किसी और प्रकार का सर्वनाम रख जाते हैं, जैसे–'उनकी अवस्था इतनी खराब हो गई है कि उसे कुछ कहा नहीं जा सकता'। पहले तो इस वाक्य में 'उसे' होना ही नहीं चाहिए; पर यदि सर्वनाम रखना ही चाहें, तो लिखना चाहिए– 'उसके संबंध में कुछ कहा नहीं जा सकता'।

प्रायः लोग 'यह–वह', 'इसका–उसका' और 'इनके–उनके' के प्रयोग में भी कई प्रकार की भूलें करते हैं। इस संबंध में ध्यान में रखने योग्य मुख्य सिद्धांत यह है कि प्रायः पास की चीजों का उल्लेख करते समय या वर्तमान काल के वर्णनों के साथ तो 'यह', 'इसका' और 'इनका' का प्रयोग होता है और दूर की चीजों का उल्लेख करते समय या भूतकाल के वर्णनों में 'वह', 'उसका' और 'उनका' का प्रयोग होता है। उदाहरण के लिए हम कहेंगे–'मैं आपको यह पत्र जो इस रूप में लिख रहा हूँ, इसका कारण यह है कि...' और 'मैंने आपको वह पत्र जो उस रूप में लिखा था, उसका कारण वह था कि...' इस प्रकार के वाक्यों में सर्वनामों का निर्वाह आदि से अंत तक ठीक तरह से हो जाता है और उनमें किसी तरह की गड़बड़ी नहीं होने पाती।

कभी–कभी लोग ऐसे अवसरों पर भी सर्वनाम का प्रयोग नहीं करते, जहाँ उसका प्रयोग आवश्यक होता है। इससे वाक्य अशुद्ध भी हो जाता है और भद्दा भी, जैसे–'जुलूस कचहरी गया और वहाँ प्रदर्शन किया'। होना चाहिए–'जुलूस कचहरी गया और वहाँ उसने प्रदर्शन किया'। इसी प्रकार–'वह वहाँ जाकर बैठ गया और कहा...' में भी सर्वनाम न होने के कारण अशुद्ध और भद्दा वाक्य है। होना चाहिए–'वह वहाँ जाकर बैठ गया और उसने कहा...'

साधारणतः लोग 'मेरा' और 'अपना' या 'हम', 'हमारा' और 'अपना' का प्रयोग करने में भी कई तरह की भूल करते हैं, जैसे–'इस विषय में मेरे विचार मैं पहले ही प्रकट कर चुका हूँ' या 'मेरी माता की मृत्यु हो जाने पर मैं अपने पिता के पास सोता था'। इनमें से पहले वाक्य में 'मेरे' की जगह 'अपने' और दूसरे वाक्य में 'मेरी' की जगह 'अपनी' होना चाहिए।

इस संबंध में ध्यान देने की बात यह है कि अपना, अपने और अपनी सार्वनामिक विशेषणों का प्रयोग वाक्य के कर्ता का परिचायक होता है। 'लड़का अपना काम करता है', 'लड़की अपने घर जाती है' और 'हम अपनी पुस्तक पढ़ते हैं' – इन तीनों वाक्यों में जो कर्ता (लड़का, लड़की और हम) आए हैं 'अपना' (अपने या अपनी) उन्हीं को सूचित करता है; अर्थात् काम लड़के का ही है, घर लड़की का है और पुस्तक 'हम' की अर्थात् हमारी ही है। परंतु जब वाक्य में मेरा (मेरे, मेरी), तेरा (तेरे, तेरी), उसका (उसके, उसकी), इसका (इसके, इसकी), उनका (उनके, उनकी) या इनका (इनके, इनकी) का प्रयोग होता है तो यह कर्ता का बोधक नहीं होता बल्कि वक्ता या लेखक के विचार से होता है। 'लड़की मेरे (तेरे, उसके, इसके, हमारे, तुम्हारे, आपके, उनके या इनके) घर जाती है'। यहाँ 'मेरे घर' से तात्पर्य कर्ता के घर से नहीं बल्कि वक्ता के घर से है। इसी प्रकार 'तेरे घर' से अभिप्राय उस व्यक्ति के घर से है जिससे वक्ता बात कर रहा है तथा 'उसके घर' से अभिप्राय उस व्यक्ति के घर से है जिसके संबंध में वक्ता मध्यम पुरुष से बात कर रहा है। वह, यह, वे, ये, जो, कौन, कुछ आदि सर्वनाम विशेषणों की तरह भी प्रयुक्त होते हैं। 'वह घर अच्छा है या यह काम मत करो। वे लोग चले गए, ये बातें उनसे मत कहना, कौन आदमी वहाँ गया था, कुछ कर्मचारी अनुपस्थित रहे'; आदि वाक्यों में वह, यह, वे, ये, कौन और कुछ सर्वनाम विशेषणों की तरह ही प्रयुक्त हुए हैं।

सर्वनामों के संबंध में ध्यान रखनेवाली बात यह भी है कि सभी सर्वनामों के विशेषण रूप भी बनते हैं, जिन्हें सार्वनामिक विशेषण कहते हैं, जैसे–मैं से मेरा, तू से तेरा, वह से उसका, यह से इसका, जो से जिसका, कौन से किसका, कोई से किसी का, आदि। ये एकवचन रूप हैं। इसी प्रकार हम से हमारा, तुम से तुम्हारा, आप से आपका, जो से जिनका, कौन से किनका आदि सार्वनामिक

विशेषण बहुवचन हैं।

सर्वनामों के प्रयोग का साधारण नियम यह है कि वाक्य में पहले संज्ञा आती है, तब उससे संबंध रखनेवाला सर्वनाम आता है। पर कुछ लोग, अंग्रेजी ढंग पर, वाक्य में पहले ही सर्वनाम रखकर तब संज्ञा का प्रयोग करते हैं, जैसे–'उसके पास अपनी पुस्तक देखकर मैंने गोविन्द से पूछा'। ऐसा नहीं करना चाहिए। हिंदी ढंग के अनुसार वाक्य में पहले संज्ञा रखकर तब सर्वनाम रखना चाहिए और इसीलिए इस वाक्य का रूप होना चाहिए–'गोविन्द के पास अपनी पुस्तक देखकर मैंने उससे पूछा'। कभी-कभी लोग संज्ञा के बाद भी फिर वही संज्ञा ले आते हैं और विशेषण नहीं रखते, जैसे–'वाक्य और वाक्य के भेद'। ऐसा करना ठीक नहीं है। लिखना चाहिए–'वाक्य और उसके (या उनके) भेद'। पर कुछ अवस्थाएँ ऐसी भी होती हैं, जैसे–'मेरे पास जो धेला-पैसा या धेले-पैसे की संपत्ति है, वह सब मैं तुम्हें दे जाऊँगा'। इस वाक्य में पहले जो 'धेला-पैसा' आया है, वह अलग चीज है और बाद में 'धेले-पैसे की संपत्ति' पद आया है, वह अलग चीज। इसलिए इसमें 'धेला-पैसा' भी आया है और 'धेले-पैसे' भी। यह वाक्य इस रूप में लिखना ठीक नहीं होगा–'मेरे पास जो धेला-पैसा या उसकी संपत्ति है'। ऐसे वाक्य का अर्थ यह होगा कि मेरे पास जो संपत्ति है, उसका मालिक मैं नहीं हूँ बल्कि 'धेला-पैसा' है। और इसी विचार से वाक्य का शुद्ध रूप होगा–'मेरे पास जो धेला-पैसा या धेले-पैसे की संपत्ति है...'

10

विशेषण

यदि किसी चौकी पर एक ही कलम और एक ही दावात रखी हो और आपसे कहा जाए–'चौकी पर से कलम-दावात उठा लाओ' तो आप झट जाकर दोनों उठा लाएँगे; पर यदि उसी चौकी पर पाँच-सात पुस्तकें भी हों और आपसे कहा जाए–'चौकी पर से पुस्तक ले आओ' तो आप कौन-सी पुस्तक लाएँगे ? उस समय आपको पूछना पड़ेगा–'कौन-सी पुस्तक ?' जब आपसे कहा जाएगा–'छोटी या बड़ी पुस्तक ले आओ', 'लाल या काली जिल्दवाली पुस्तक ले आओ' या 'अंग्रेजी या हिंदी की पुस्तक ले आओ' तभी आप माँगी हुई पुस्तक ला सकेंगे।

चौकी पर क़लम भी एक ही थी, दावात भी एक ही; इसलिए आपके मन में कोई प्रश्न नहीं हुआ; पर पुस्तकें कई थीं, इसलिए आपके मन में प्रश्न हुआ। इससे सिद्ध होता है कि कुछ अवस्थाओं में तो संज्ञाओं से ही काम चल जाता है; पर कुछ अवस्थाओं में केवल संज्ञाएँ पूरा-पूरा काम नहीं करतीं। संज्ञाओं के साथ कुछ ऐसे शब्द या पदबंध लगाने पड़ते हैं, जो उन संज्ञाओं की विशेषता या पहचान बतलाते हैं। संज्ञाओं की इस प्रकार की विशेषता या पहचान बतलानेवाले शब्द 'विशेषण' कहलाते हैं। यदि एक शब्द से विशेषता न प्रकट हो सकती हो और कई शब्द रखने पड़ते हों, तो उन सब शब्दों के समूह को 'विशेषण पदबंध' कहते हैं। ऊपर के उदाहरणों में 'छोटी', 'बड़ी' आदि शब्द विशेषण और 'लाल जिल्दवाली' या 'काली जिल्दवाली' आदि विशेषण पदबंध हैं।

यह समझना भूल है कि किसी वाक्य में बहुत-से विशेषण रखकर ही हम

अपना भाव ठीक तरह से प्रकट कर सकते हैं। हमें सदा अवसर के अनुसार ठीक और उपयुक्त विशेषण चुनकर उन्हीं का उपयोग करना चाहिए। हमें सदा ठीक स्थान पर उचित विशेषण रखना चाहिए। बिना समझे-बूझे विशेषण पर विशेषण नहीं लादते चलना चाहिए। भाषा को सुंदर और आकर्षक बनाने के लिए भी कभी-कभी विशेषणों का प्रयोग होता है; पर उनका काम है—संज्ञाओं का ठीक-ठीक, वास्तविक और ऐसा स्वरूप बतलाना होता है, जिसमें सुननेवाले को किसी प्रकार का भ्रम न हो। इसीलिए और शब्दों की तरह विशेषणों का प्रयोग भी बहुत सोच-समझकर और उनके अर्थ का ठीक ध्यान रखते हुए करना चाहिए। ऐसे विशेषणों का प्रयोग नहीं करना चाहिए, जिनसे सुननेवाले भ्रम में पड़ जाएँ और हमारा ठीक अभिप्राय न समझ सकें। प्रायः लोग लिख या बोल जाते हैं—'उनके साथ उचित न्याय किया जाएगा'। इस वाक्य में 'न्याय' के पहले जो 'उचित' विशेषण आया है, वह इसलिए ठीक नहीं है कि उससे सूचित होता है कि 'न्याय' किसी अवस्था में 'अनुचित' भी हो सकता है। पर वास्तव में 'न्याय' सदा 'उचित' ही होता है, कभी 'अनुचित' नहीं होता। इसी प्रकार 'वह सुंदर शोभा धारण कर रहा था' में 'सुंदर' का प्रयोग ठीक नहीं है। 'शोभा' सदा सुंदर क्या, अति सुंदर होती है। उसके साथ 'सुंदर' विशेषण लगाकर मानो हम उसका महत्त्व कुछ घटाते ही हैं। ऐसे प्रयोग हमारे अज्ञान के सूचक होते हैं, इसलिए इनसे बचना चाहिए।

'अगला' और 'पिछला' बहुत सीधे और बहुत प्रचलित विशेषण हैं। हम नित्य इनका व्यवहार करते हैं। हम कहते हैं – 'अगले महीने हमारी परीक्षा होगी' या 'पिछले सप्ताह मेरे भाई यहाँ आए थे'। ये बातें सुनते ही सुननेवाले समझ लेते हैं कि 'अगले' और 'पिछले' से हमारा क्या अभिप्राय है! फिर भी कुछ अवसरों पर 'अगला' और 'पिछला' से भ्रम हो ही जाता है। जो किसी प्रकार के क्रम में आगे या सामने हो, वह 'अगला' कहलाता है और जो पीछे हो, वह 'पिछला'। आरंभ के भाग की चीज 'अगली' और अंत के भाग की 'पिछली' मानी जाती है। पर चाहे भूल से हो, चाहे किसी और कारण से, कभी-कभी 'अगला' का भी वही अर्थ हो जाता है, जो 'पिछला' का होता है। हम प्रायः कहा करते हैं—'अगले जमाने में सब चीजें बहुत सस्ती होती थीं'। ऐसे अवसरों पर 'अगले जमाने' से हमारा अभिप्राय बीते हुए दिनों से होता है। फिर, हम यह भी

कहते हैं—'अगली पीढ़ियाँ हमारी ये बातें नहीं मानेंगी'। यहाँ 'अगली' का अर्थ होता है—आनेवाली (पीढ़ियाँ)। एक ही शब्द बीते हुए समय का भी सूचक हो गया और आनेवाले समय का भी। ऊपर के उदाहरणों से भी अभिप्राय स्पष्ट हो गया। पर कुछ अवसर ऐसे भी हो सकते हैं, जिनमें 'अगला' शब्द से भ्रम हो सकता है।

'अगला' के तो हमारी भाषा में दो अर्थ प्रचलित हैं, इसलिए उससे भ्रम होना स्वाभाविक है, पर 'पिछला' के तो दो अर्थ नहीं होते। फिर भी कुछ अवसरों पर 'पिछला' शब्द से भी भ्रम होता या हो सकता है। यदि हम कहें—'पिछली बातें भूल जाओ' तो हमारा अभिप्राय समझने में आपको भ्रम न होगा। पर यदि हम कहें—'मध्य युग और उसके पिछले सौ वर्षों में हमारे यहाँ सब बातों में धर्म की ही प्रधानता थी' तो 'पिछले सौ वर्षों से आप क्या अभिप्राय समझेंगे ? मध्य युग के अंत के सौ वर्ष या उस युग के आरंभ होने से पहले के सौ वर्ष ? हमारा अभिप्राय तभी स्पष्ट होगा, जब हम कहेंगे—'मध्य युग और उसके अंत के सौ वर्षों में...' या 'मध्ययुग और उसका आरंभ होने के पहले के सौ वर्षों में...'

कभी-कभी लोग भाषा में सुंदरता लाने, अपनी बात में कुछ जोर लाने या कुछ शब्दों के प्रयोग के यों ही अभ्यस्त होने के कारण भी कुछ विशेषण लगा चलते हैं। हम कह जाते हैं—'यह पुस्तक बहुत सुंदर है', 'यह कपड़ा बहुत बढ़िया है', 'मुझे उनकी मृत्यु से बहुत दुख हुआ', 'मुझे बहुत प्यास लगी है', आदि। इस प्रकार के विशेषण यदि बिलकुल निरर्थक नहीं तो बहुत-कुछ निरर्थक अवश्य होते हैं। इनका अर्थ तो होता है पर कोई विशेष अर्थ नहीं होता। इसीलिए ऐसे विशेषणों का प्रयोग हम ऐसी बातों के संबंध में करते हैं, जिनका विशेष महत्त्व नहीं होता, अथवा ऐसे अवसरों पर कर सकते हैं, जब हम किसी बात को बहुत ही साधारण समझकर उसे विशेष रूप से विचार करने के योग्य नहीं समझते; अर्थात् केवल चलती हुई बातों के लिए या काम चलता करने के लिए हम इस प्रकार के साधारण और प्रायः निरर्थक-से विशेषणों का प्रयोग करते हैं। पर विशेष महत्त्व की बातों के लिए और अधिक महत्त्व के अवसरों पर हमें बहुत समझ-बूझकर ऐसे चुने हुए विशेषणों का ही प्रयोग करना चाहिए, जिनसे हमारा अभिप्राय स्पष्ट हो जाए और सुननेवालों को भ्रम न हो।

कभी–कभी ऐसे साधारण शब्दों के रहने या न रहने से भी वाक्य के अर्थ और भाव में बहुत अंतर हो जाता है। उदाहरण के लिए 'अधिक' शब्द लीजिए। इसका प्रयोग करते समय लोग प्राय: विशेष विचार करने की आवश्यकता नहीं समझते, पर कुछ अवस्थाओं में इसके कारण भी वाक्य में बहुत महत्त्व का अंतर हो जाता है। मान लीजिए, हम कहते हैं–'शब्दों के ये रूप अच्छे माने जाते हैं'। इसका आशय यह है कि शब्दों के जिन रूपों का हम जिक्र करते हैं, वे तो अच्छे माने जाते हैं, पर इनके सिवा जो और रूप हैं, वे अच्छे नहीं माने जाते। पर जब हम कहते हैं–'शब्दों के ये रूप अधिक अच्छे माने जाते हैं' तब इसका अर्थ यह नहीं होता कि और रूप अच्छे नहीं माने जाते, बल्कि इसका आशय यह हो जाता है कि और रूप भी अच्छे माने जाते हैं, पर 'ये रूप' उनके 'अधिक अच्छे' माने जाते हैं। यही बात इसी प्रकार के कई दूसरे साधारण विशेषणों के संबंध में भी है।

यदि हम कहें–'यह विषय बहुत गंभीर है' या 'आप जो बातें कर रहे हैं, वे बहुत गंभीर हैं', तो हम 'गंभीर' शब्द का उसके ठीक, प्रचलित और सबके माने हुए अर्थ में प्रयोग करते हैं। पर यदि हम कहें – 'रोटी की अवस्था गंभीर है' या आटे का भाव गंभीर रूप धारण कर रहा है', तो यही सूचित होगा कि हम 'गंभीर' शब्द का ठीक अर्थ और प्रयोग नहीं जानते, और केवल सुन–सुनाकर बिना समझे हुए, दूसरों की देखा–देखी या अंग्रेजी के अनुकरण पर ही उसका प्रयोग करते हैं। ऐसे अवसरों पर 'गंभीर' की जगह 'विकट' होना चाहिए।

हम 'टेढ़ा' का भी प्रयोग करते हैं, 'तिरछा' का भी, और दोनों को मिलाकर 'टेढ़ा–तिरछा' का भी। इससे हम समझ लेते हैं कि 'टेढ़ा' का भी बहुत–कुछ वही अर्थ है, जो 'तिरछा' का है। पर इन दोनों के अर्थों में जो सूक्ष्म अंतर या भेद है, उस पर जल्दी हमारा ध्यान ही नहीं जाता। पर 'टेढ़ी निगाह' और 'तिरछी निगाह' में दोनों के अर्थों के भेद स्पष्ट हो जाते हैं। 'टेढ़ी निगाह' क्रोध आदि के कारण होती है और 'तिरछी निगाह' प्रेम के कारण भी होती है, दूसरों की निगाह बचाने के लिए भी होती है और इसी तरह के कुछ दूसरे कामों के लिए भी होती है। मनुष्य किसी पद, सम्मान या पुरस्कार का तो 'अधिकारी' होता है, पर दंड आदि का वह 'भागी' ही होता है। इसलिए यह नहीं कहना चाहिए–'वह कठोर दंड का अधिकारी है'। ऐसे अवसरों पर 'भागी' का ही प्रयोग ठीक होता है। हाँ,

यह कहना अवश्य ठीक है–'बहुत-से लोग उन्हीं को राज्य का अधिकारी समझते थे'।

विशेषणों का प्रयोग करते समय उनके अर्थों का तो ध्यान रखना ही पड़ता है, उनके स्थान का भी ध्यान रखना पड़ता है। यदि अर्थ या आशय के विचार से तो विशेषण ठीक हो, पर वाक्य में अपने ठीक स्थान न हो तो वह वाक्य का अर्थ गड़बड़ा देता है। 'बड़ी गाड़ी की खिड़कियाँ' और 'गाड़ी की बड़ी खिड़कियाँ' तथा 'वे पुराने कपड़े के व्यापारी हैं' और 'वे कपड़े के पुराने व्यापारी हैं' में बहुत अंतर है। यही बात 'विदेशी सिलाई के तागे' और 'सिलाई के विदेशी तागे', 'पहले सप्ताह के खेल' और 'सप्ताह के पहले खेल' या 'नई दुनिया की कहानियाँ' और 'दुनिया की नई कहानियाँ' के संबंध में भी है। 'मनुष्यों और पशुओं की अनगिनत जानें गईं' कहने से 'अनगिनत मनुष्यों और पशुओं की जानें गईं' कहना अधिक अच्छा भी है और शुद्ध भी। इसलिए विशेषण सदा वहीं रखना चाहिए, जहाँ उसकी जगह या आवश्यकता हो और जहाँ वह अपना ठीक अर्थ दे।

विशेषणों का प्रयोग करते समय लोग एक और प्रकार से अर्थ का ध्यान छोड़ देते हैं, जैसे–'यह पुस्तक बड़ी अच्छी है' और 'वे बड़े अच्छे आदमी हैं'। इन वाक्यों में आए हुए 'बड़ी' और 'बड़े' शब्द विशेषण हैं और वाक्यों में इनका अशुद्ध प्रयोग हुआ है। होना चाहिए–'यह पुस्तक बहुत अच्छी है' और 'वे बहुत अच्छे आदमी हैं'। एक और प्रकार से लोग 'बड़ा' का अशुद्ध प्रयोग करते हैं, जैसे–'उनका लड़का उनसे बड़ा है'। इस वाक्य में 'बड़ा' का अर्थ स्पष्ट नहीं होता। यह पता नहीं चलता कि वह लंबाई में बड़ा है या अवस्था में। यह ठीक है कि लड़का कभी बाप से अवस्था में बड़ा नहीं हो सकता, फिर भी वाक्य का ऐसा अर्थ तो हो ही सकता है; इसलिए ऐसे स्थानों पर 'बड़ा' की जगह 'लंबा' होना चाहिए। 'यह बड़ी छोटी बात है' कहना दो कारणों से ठीक नहीं है। एक तो इसमें 'बड़ी' का प्रयोग अशुद्ध है और उसकी जगह 'बहुत' होना चाहिए और दूसरे, 'बड़ी' और 'छोटी' का एकसाथ प्रयोग बहुत भद्दा होता और सुनने में बहुत खटकता है।

'बड़ा' और 'बहुत' में बहुत अंतर है और इनका प्रयोग भी बहुत समझ-

बूझकर करना चाहिए। कुछ स्थानों में केवल 'बड़ा' का प्रयोग होता है और कुछ में केवल 'बहुत' का। पर कुछ स्थान ऐसे भी होते हैं, जिनमें 'बहुत' और 'बड़ा' दोनों का प्रयोग हो सकता है, पर दोनों के अर्थ में अंतर होता है। 'बहुत काम' और 'बड़ा काम'। यहाँ 'बहुत का अर्थ है–दो–चार, दस–बीस और सौ–पचास आदि और इसीलिए इसके अंत में क्रिया भी बहुवचन होती हैं, जैसे–'आजकल मेरे पास बहुत काम हैं'। यहाँ 'बहुत' का अर्थ है–बहुत–से या बहुतेरे। पर 'बड़ा' का अर्थ है–ऐसा काम, जिसे पूरा करने में अधिक समय और परिश्रम की आवश्यकता हो या जिसे सब लोग सहज में न कर सकते हों, जैसे–'आजकल आपने एक बड़ा काम हाथ में ले रखा है'। यहाँ 'बड़ा' के पहले हम 'बहुत' भी लगा सकते हैं और कह सकते हैं–'आजकल आपने बहुत बड़ा काम हाथ में ले रखा है'। इस वाक्य में 'बहुत' लगने से काम का महत्त्व और भी बढ़ गया है। इस संबंध में ध्यान रखने की मुख्य बात यह है कि 'बहुत' विशेषण भी है और क्रिया–विशेषण भी। हम यह भी कहते हैं–'इस काम में बहुत रुपये लग गए' और यह भी कहते हैं–'यह मकान बहुत अच्छा है'। पर 'बड़ा' विशेषण ही है और इसलिए उसका प्रयोग केवल संज्ञाओं से पहले होना चाहिए – विशेषण, क्रिया–विशेषण या क्रिया के पहले नहीं होना चाहिए।

'बहुत' के साथ उसकी मात्रा घटाने–बढ़ाने के लिए कुछ और शब्द लगते हैं, जैसे–बहुत अधिक, बहुत–सा, बहुत–कुछ। पर इन सबसे सूचित होनेवाले परिमाणों या मानों में बहुत अंतर होता है। 'बहुत' का अर्थ है–जितना चाहिए, उससे अधिक। 'बहुत अधिक' का अर्थ है–जितना चाहिए, उससे कहीं अधिक। 'बहुत–सा' का अर्थ भी प्रायः वही होता है, जो 'बहुत' का होता है; फिर भी 'बहुत' से जिस मान का बोध होता है, 'बहुत–सा' उससे कुछ कम या उससे मिलते–जुलते मान का सूचक है। पर जब हम कहते हैं – 'बहुत–कुछ' तो उसका आशय 'बहुत–सा' से कुछ अधिक और 'बहुत' से लगभग होता है। अर्थों के इस प्रकार के अंतरों पर विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता होती है।

और भी कई ऐसे विशेषण हैं, जिनका प्रयोग लोग प्रायः बिना समझे–बूझे और अशुद्ध रूप में कर जाते हैं, जैसे–'मुझे उस समय भारी प्यास लगी' और 'आपके व्यवहार से मुझे भारी दुख हुआ'। इन वाक्यों में 'भारी' का प्रयोग

अशुद्ध है। इसकी जगह 'बहुत' होना चाहिए। 'उनका धैर्य समाप्त हो गया' में 'समाप्त' शब्द ठीक नहीं है। 'समाप्त' तो वह चीज होती है जो अधिक मात्रा में इकट्ठी हो और धीरे-धीरे खर्च होती हुई अंत में बिलकुल न रह जाए। पुस्तक तो 'समाप्त' हो सकती है और धन भी 'समाप्त' हो सकता है; पर बुद्धि या घर 'समाप्त' नहीं होता। हाँ, जब 'घर' शब्द से हम घर में रहनेवाले सब लोगों का अर्थ लेते हैं, तब अवश्य कहते हैं–'हैजे से सारा घर समाप्त हो गया' या 'घर का घर समाप्त हो गया'। पर यदि बरसात में किसी का घर बैठ जाए तो हम यह नहीं कहते–'आज उनका घर समाप्त हो गया'। यह तो तभी कहा जाएगा, जब घर गिरने से सारी संपत्ति नष्ट हो जाए या घर के सब या अधिकतर आदमी मर जाएँ।

कुछ लोग विशेषणों के रूप बनाने में भी कई प्रकार की भूलें करते हैं। प्रायः लोग हिंदी के तद्भव शब्दों के उसी प्रकार विशेषण बना लेते हैं, जिस प्रकार संस्कृत के तत्सम शब्दों से बनाते हैं। यदि हम संस्कृत के 'पुष्प' से 'पुष्पित' या 'लेखन' से 'लिखित' बनाएँ तो ठीक ही है; पर यदि हम हिंदी के 'सुधार' से 'सुधारित', 'जड़ना' से 'जड़ित' (जैसे–रत्नजड़ित) और 'अचंभा' से 'अचंभित' बनाने लगें तो ऐसे प्रयोग अशुद्ध होंगे। इसीलिए केवल देखा-देखी ऐसे रूपों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। सोच-समझकर या बड़ों से पूछकर ही उनका प्रयोग करना चाहिए।

प्रायः लोग संस्कृत के विशेषणों के प्रयोग में भी कई प्रकार की भूलें कर जाते हैं। संस्कृत में शुद्ध रूप 'निर्दय' और 'निरपराध' हैं; पर प्रायः लोग 'निर्दयी' और 'निरपराधी' लिख जाते हैं। संस्कृत का शुद्ध रूप 'क्रुद्ध' है; पर लोग लिख जाते हैं 'क्रोधित'। बहुत-से लोग 'व्याप्त' को 'व्यापित' और 'ग्रस्त' को 'ग्रसित' लिख जाते हैं। ऐसा नहीं होना चाहिए। हम जो कुछ लिखें, उसके संबंध में हमें पहले अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि वह शुद्ध है या नहीं। और जो कुछ निश्चित रूप में हमें शुद्ध मालूम हो, वही लिखना चाहिए।

कभी-कभी लोग ऐसे अवसरों पर भी संज्ञाओं का प्रयोग कर जाते हैं, जहाँ वास्तव में विशेषण होना चाहिए, जैसे–'इस दवा से सब प्रकार के रोग नाश हो जाते हैं' कहना अशुद्ध है। इसमें 'नाश' की जगह 'नष्ट' होना चाहिए; या यदि

हम 'नाश' का प्रयोग करना चाहें तो हमें कहना होगा–'इस दवा से सब प्रकार के रोगों का नाश हो जाता है'। 'मेरे भाई ने यह पुस्तक आपको समर्पण की है' में 'समर्पण' की जगह 'समर्पित' होना चाहिए। 'इस विषय में निश्चय रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता' में 'निश्चिय' की जगह 'निश्चित' और 'पुस्तक उनको प्रदान हुई है' में 'प्रदान' की जगह 'प्रदत्त' होना चाहिए।

विशेषणों के आगे-पीछे शब्द, उपसर्ग या प्रत्यय भी बहुत समझ-बूझकर लगाने चाहिए। प्रायः लोग लिख जाते हैं–'सबसे पहली बात यह है...' ऐसे अवसरों पर, जब कि 'पहला' (या पहली) विशेषण के रूप में आया हो, 'सबसे' का प्रयोग भद्दा और अशुद्ध होता है। हाँ, जहाँ, क्रिया-विशेषण के रूप में 'पहले' आए, वहाँ उससे पहले 'सबसे' लगाया जा सकता है, जैसे–'सबसे पहले आप हमें यह बताएँ कि...' यों तो यह भाव भी केवल 'पहले आप हमें यह बतलाएँ...' कहकर प्रकट किया जा सकता है; पर ऐसे अवसरों पर 'सबसे' के प्रयोग से कुछ जोर आ जाता है। यह कहना ठीक नहीं है–'तुम सबसे अधिक सुंदरतम हो'। 'सुंदरतम' का अर्थ ही है–'सबसे सुंदर'। इसलिए या तो कहना चाहिए–'तुम सबसे सुंदर हो, या 'सुंदरतम हो'। इसी प्रकार यह कहना भी ठीक नहीं है–'दोनों में यह उत्तमतर है', क्योंकि 'उत्तम' का अर्थ ही है–सबसे अच्छा। और जो सबसे अच्छा हो, उसे किसी की तुलना में 'उत्तमतर' कहना ठीक नहीं। कहना चाहिए–'इन दोनों में यह उत्तम है'।

कुछ अवस्थाएँ ऐसी होती हैं, जिनमें विशेषण का स्थान बदलने पर भी अर्थ में विशेष अंतर नहीं आता, जैसे–'मैं पुत्रवत् उनकी आज्ञा का पालन करता हूँ' और 'मैं उनकी आज्ञा का पालन पुत्रवत् करता हूँ'। हो सकता है कि सूक्ष्म विचार करने पर इन दोनों के अर्थों में भी कुछ अंतर निकल आए, पर वह कोई बहुत बड़ा अंतर न होगा। पर यदि कहा जाए–'राजा पुत्रवत् अपनी प्रजा का पालन करता था' तो इससे आप क्या अभिप्राय समझेंगे ? राजा अपनी प्रजा का पालन उसी तरह करता था, जिस तरह लोग अपने पुत्र का पालन करते हैं ? या राजा अपनी प्रजा का उसी तरह पालन करता था, जिस तरह पुत्र अपनी प्रजा का पालन करता है ? वाक्य की बनावट से तो अंतिम अर्थ ही ठीक जान पड़ता है, पर यह अर्थ वास्तविकता से बहुत दूर है। ठीक और संगत अर्थ तो वही है, जो पहले दिया गया है; पर वह अर्थ वाक्य की बनावट से सिद्ध नहीं होता। फिर भी

बहुत-से लोग इसी तरह लिखते हुए देखे जाते हैं। पर अधिक विचारपूर्वक लिखनेवाले लोग लिखेंगे-'राजा अपनी प्रजा को पुत्रवत् समझता था' या 'राजा अपनी प्रजा का पालन उसी प्रकार करता था, जिस प्रकार पुत्र का पालन किया जाता है'। इस रूप में वाक्य का विस्तार तो कुछ अधिक हो गया है, पर अर्थ में किसी प्रकार के भ्रम के लिए स्थान नहीं रह गया। इसलिए सिद्धांत यह निकलता है कि वाक्य भले ही कुछ लंबा हो जाए, पर अर्थ के विचार से वह बिलकुल ठीक होना चाहिए और उसमें भ्रम के लिए स्थान नहीं रहना चाहिए।

11

क्रियाएँ

जिस प्रकार 'संज्ञा' का अर्थ नाम है, उसी प्रकार 'क्रिया' का अर्थ काम है। हमारे सामने बहुत-सी चीजें होती हैं और उन सब चीजों के अलग-अलग नाम होते हैं। इसी प्रकार हमारे सामने बहुत-से काम भी होते हैं और उन सब कामों के भी अलग-अलग नाम होते हैं। खाना, पीना, लिखना, उठना, चलना, बैठना, सोना, दौड़ना, घूमना, लड़ना, खेलना, माँगना, देना, मिलना, बाँधना आदि सब काम ही हैं और उन सब कामों के यही नाम हैं। हम जो काम करते हैं, उनके नाम ही व्याकरण में 'क्रिया' कहलाते हैं।

ऊपर हमने कामों के जो नाम दिए हैं, उन सबमें एक बात समान रूप से दिखाई देती है। वह यह कि सबके अंत में 'ना' लगा है। इसलिए प्रायः व्याकरणों में बतलाया गया है कि यह 'ना' प्रत्यय है, जो खा, पी, पढ़, लिख, उठ, बैठ, सो, दौड़ आदि धातुओं में लगा दिया गया है और इस प्रकार उन धातुओं से ये क्रियाएँ बना ली गई हैं। कुछ लोग इससे भी आगे बढ़कर यह कहते हैं कि स्वयं खाना, पीना, पढ़ना, लिखना, बोलना, देना आदि रूप ही धातु हैं; और बतलाते हैं कि इन्हीं रूपों में विकार होने से क्रियाएँ बनती हैं। पर यदि विचारपूर्वक देखा जाए तो ये दोनों बातें कुछ ठीक नहीं जान पड़तीं। संस्कृत में तो अवश्य धातुएँ हैं (या मान ली गई हैं ?) और उन्हीं धातुओं में उपसर्ग और प्रत्यय लगने से संस्कृत के सब शब्द बने हैं। पर हमारी हिंदी में धातुओंवाला तत्त्व है ही नहीं। हाँ, हमारी भाषा संस्कृत से कई रूप बदलने के बाद बनी है, इसीलिए संस्कृत भाषा के बहुत-से तत्त्व हमारी भाषा में आप-से-आप आ गए हैं। बस, इतना ही; इससे अधिक और कुछ नहीं।

असल बात यह है कि संस्कृत में बहुत-से ऐसे शब्द हैं, जिनके अंत में 'न' है और कुछ ऐसे शब्द भी हैं, जिनके अंत में संस्कृत व्याकरण के नियम के अनुसार 'न' के बदले 'ण' है। प्रायः वे सब शब्द व्याकरण के विचार से, भाववाचक संज्ञाओं के अंतर्गत आते हैं, जैसे-कर्तन, वर्तन, पठन, लेखन, पालन, मिलन, शयन, भाषण, घर्षण, वर्षण आदि। हमारी सम्मति में हमारे यहाँ की सब क्रियाएँ सीधी इन्हीं भाववाचक संज्ञाओं से बनी हैं। उनमें से कुछ तो ज्यों-की-त्यों रह गई हैं और कुछ के रूप बीच में होनेवाले परिवर्तनों के कारण कुछ बदल गए हैं। हमारे यहाँ कर्तन से कतरना, वर्तन से बरतना, पठन से पढ़ना, लेखन से लिखना, पालन से पालना, मिलन से मिलना, शयन से सोना, भाषण से भाखना (पुरानी हिंदी), घर्षण से घिसना, वर्षण से बरसना आदि क्रियाएँ बन गई हैं। न तो हमारे यहाँ धातु के झगड़े आए हैं, न हम उनके फेर में पड़े हैं। हमारे यहाँ बने-बनाए भाववाचक शब्द थे और उन्हीं से हमारी क्रियाएँ बनी हैं। यही कारण है कि हमारे यहाँ की भी बहुत-सी क्रियाएँ भाववाचक संज्ञाओं के रूप में चलती हैं, जैसे-'दिन-रात खेलना अच्छा नहीं', 'उस समय तुम्हारा बोलना बुरा हुआ', 'उन्हें नाचना नहीं आता' और 'तुम्हारा हमसे मिलना उन्हें अच्छा नहीं लगता'। इनमें 'खेलना', 'बोलना', 'नाचना' और 'मिलना' शब्द क्रियाओं के साधारण रूप में होने पर भी संज्ञाओं के रूप में आए हैं और इसीलिए कुछ लोग ऐसे रूपों को क्रियार्थक संज्ञा भी कहते हैं; पर हैं ये भाववाचक संज्ञाएँ ही।

हम ऊपर कह आए हैं कि 'ना' हमारे यहाँ प्रत्यय के रूप में नहीं था, बल्कि यह संस्कृत की कुछ क्रियार्थक अथवा भाववाचक संज्ञाओं के साथ आया था। परंतु आगे चलकर कुछ ऐसी बातें हो गईं, जिनसे उसने बहुत-कुछ प्रत्यय का रूप धारण कर लिया। धीरे-धीरे लोग अपने सुभीते के विचार से और काम चलाने के लिए कुछ विशेषणों और संज्ञाओं से भी क्रियाएँ बनाने लगे, जैसे-साठ से सठियाना, छेद से छेदना, धिक्कार से धिक्कारना, आदि। जब प्राचीन हिंदी कविता का विशेष प्रचार होने लगा, तब कवियों ने छंदों के विचार से इसी प्रकार की और भी बहुत-सी क्रियाएँ बनाईं, जैसे-उद्धार से उद्धारना, अनुराग से अनुरागना, आदि। फिर जब मुसलमान इस देश में आए, तब उनके प्रभाव से हमारी भाषा का रूप भी कुछ-कुछ बदलने लगा। अरबी का तो

संस्कृत से कोई मेल नहीं मिलता, पर फारसी और संस्कृत की बहुत-सी बातें आपस में मिलती-जुलती हैं; यहाँ तक कि दोनों के सैकड़ों-हजारों शब्द भी बहुत-कुछ एक-से हैं। संस्कृत में घोड़े को 'अश्व' कहते हैं, फारसी में 'अस्प'। संस्कृत में जिसे 'गौ' कहते हैं, फारसी में वह 'गाव' है। नाम, दाम, काम आदि कुछ शब्द तो फारसी और संस्कृत में एक-से ही हैं। इसका कारण यह है कि फारसी भी मूलतः हमारी संस्कृत से ही निकली हुई और एक शाखा के रूप में दूसरे देश में बोली जाने वाली एक भाषा है। इसीलिए जिस प्रकार हमारे यहाँ पालन, मिलन, पठन आदि सैकड़ों-हजारों नकारान्त शब्द हैं, उसी प्रकार फारसी में भी हैं, जैसे खुर्दन (खाना), नोशदीन (पीना), नविश्तन (लिखना), गुजाश्तन (छोड़ना), गुजरानीदन (बिताना), कशीदन (खींचना), फरमूदन (आज्ञा देना), आमोख्तन (पढ़ना), आदि। और फारसी में भी ये सब, हमारे यहाँ की ऐसी संज्ञाओं की तरह, क्रियार्थक या भाववाचक संज्ञाएँ भी हैं।

जब मुसलमान इस देश में बस गए; तब बहुत-सी बातों में हमारा - उनका लेन-देन होने लगा। भाषा का क्षेत्र भी इस लेन-देन से अछूता न बचा। उन्होंने हमारी भाषा को एक नए साँचे में ढालना आरंभ किया। क्रियार्थक संज्ञाओं का अंतवाला 'न' तो संस्कृत और फारसी दोनों में समान था, और हिंदी क्रियाओं में उसने 'ना' का रूप धारण कर ही रखा था; इसलिए इस 'ना' को प्रत्यय का रूप मिल गया। उन्होंने अपने यहाँ के 'फरमूदन' शब्द से फरमाना, 'गुजरानीदन' से गुजारना आदि कुछ नई क्रियाएँ बनाईं। फिर 'शर्म' से शरमाना, 'खरीद' से खरीदना, 'खर्च' से खरचना, 'बदल' से बदलना, 'दाग' से दागना, 'दफन' से दफनाना आदि और बहुत-सी क्रियाएँ उसी प्रकार बन गईं, जिस प्रकार हमारे यहाँ भी 'हाथ' से हथियाना, 'अपना' से अपनाना आदि क्रियाएँ बनी थीं। इन्हीं सब क्रियाओं के आधार पर, अरबी-फारसी शब्दों से बनी क्रियाएँ हिंदी में घुल-मिल गईं और 'ना' प्रत्यय माना जाने लगा।

इस पुस्तक के विवेचन का यह विषय नहीं है कि 'ना' प्रत्यय है या नहीं अथवा वह कैसे और कब बना। यह तो क्रियाओं के रूप के प्रसंग से एक बात आई थी; जो विद्यार्थियों की जानकारी के लिए यहाँ बतला दी गई है। हमारा मुख्य विषय तो यह बतलाना है कि भाषा में क्रियाएँ क्या और किस प्रकार का काम करती हैं और उनसे संबंध रखने वाली भूलों से किस प्रकार बचना चाहिए।

इसलिए अब हम अपने प्रकृत विषय पर आते हैं।

मान लीजिए कि मैं कुछ देर से आपके पास बैठा हुआ बातें कर रहा हूँ। अब मैं उठकर जाना चाहता हूँ। मैं आपसे कहता हूँ–मैं जाता हूँ; अथवा आप मुझसे भेंट करने के लिए आते हैं और आपको मेरे आसरे दस-पाँच मिनट बैठना पड़ता है। मैं आकर आपसे क्षमा माँगता हूँ और कहता हूँ–'मैं सोता था'। अब 'मैं जाता हूँ' और 'मैं सोता था' – दोनों इस दृष्टि से पूरे वाक्य हैं कि इनसे आपको कुछ पूछने की आवश्यकता नहीं रह जाती।

'मैं जाता हूँ' या 'मैं सोता था' कहने से तो आपने पूरी बात समझ ली और आपका पूरा संतोष हो गया; पर यदि आप किसी के घर पहुँचकर उसे पुकारें और वह ऊपर से उत्तर दे–'मैं खाता हूँ' तो भी आप उसकी पूरी बात समझ लेंगे; पर आपके मन में एक जिज्ञासा हो सकती है। आप मन में सोच सकते हैं–यह क्या खाता है ? दाल-रोटी खाता है, चने खाता है या रेवड़ियाँ खाता है ? अर्थात् वह क्या चीज खाता है ? अथवा आपके पास पहुँचकर वह आपसे कहे–'मैं पढ़ता था' तो भी आपके मन में जिज्ञासा होगी कि वह क्या पढ़ता था। हिंदी पढ़ता था, अंग्रेजी पढ़ता था, पुस्तक पढ़ता था, समाचार-पत्र पढ़ता था अथवा किसी की चिट्ठी पढ़ता था ? यदि वह कहे–'मैं लिखता था' तो भी आपके मन में अनेक प्रश्न होंगे कि वह क्या लिखता था। वह किसी को पत्र लिखता था, कोई लेख लिखता था, या बही-खाता लिखता था।

अब यहाँ दो प्रकार के वाक्य आपके सामने हैं। पहले प्रकार में तो 'मैं जाता हूँ' और 'मैं सोता था' हैं और दूसरे प्रकार में 'मैं खाता था' और 'मैं पढ़ता था' हैं। पहले प्रकार के वाक्य सुनते ही आपका समाधान हो जाता है और आपको कुछ पूछने की आवश्यकता नहीं रह जाती; पर दूसरे प्रकार के वाक्यों से आपका समाधान नहीं होता–आपके मन में कुछ जिज्ञासा होती या रह जाती है। यहीं से क्रियाओं के वे दो भेद आरंभ होते हैं, जिन्हें व्याकरण में 'अकर्मक' और 'सकर्मक' कहते हैं। अकर्मक क्रियाएँ अर्थ के विचार से तो स्वयं पूरी होती हैं और उनमें किसी प्रकार के स्पष्टीकरण या व्याख्या की अपेक्षा नहीं रहती; पर सकर्मक क्रियाएँ तब तक पूरी नहीं होतीं, जब तक उनमें वह तत्त्व न हो, जिसे व्याकरण में 'कर्म' कहते हैं और जिसके न होने या होने से ही क्रियाएँ अकर्मक

या सकर्मक होती हैं। अकर्मक और सकर्मक की पहचान के लिए अंग्रेजी व्याकरणों में बतलाया हुआ एक बहुत सीधा और सुगम उपाय है कि जिस क्रिया के संबंध में प्रश्न हो सके–क्या ? (क्यों, कैसे, कहाँ आदि नहीं) और साथ ही उस 'क्या' का कुछ उत्तर भी हो सके, वही सकर्मक क्रिया है। यदि क्रिया के संबंध में यह 'क्या' वाला प्रश्न या इसका कोई उत्तर न हो सके, तो वह अकर्मक होगी।

अकर्मक और सकर्मक का यह विवेचन तो हुआ, फिर भी कुछ बातें ऐसी हैं, जिन्हें यहाँ स्पष्ट किए बिना यह विवेचन अधूरा ही रह जाएगा। जिस परिस्थिति में हमने ऊपर 'मैं जाता हूँ' वाला उदाहरण दिया है, उस परिस्थिति के सिवा कुछ और ऐसी परिस्थितियाँ भी हो सकती हैं, जिनमें 'मैं जाता हूँ' वाक्य भी अधूरा हो सकता है और इसके संबंध में भी आपके मन में जानने की कोई बात रह सकती है। मान लीजिए कि आप कहीं बाहर से आ रहे हैं और मैं कहीं बाहर जा रहा हूँ। स्टेशन पर हम लोगों की भेंट हो जाती है। उस समय यदि मैं आपसे पूछने पर केवल कह दूँ–'मैं जाता हूँ' तो आपके मन में अवश्य यह जानने की इच्छा होगी कि मैं कहाँ जाता हूँ। उस समय मुझे कहना पड़ेगा–'मैं प्रयाग (कोलकाता या मुंबई) जाता हूँ'। 'जाना' है तो अकर्मक क्रिया फिर भी ऐसे अवसरों पर उसके साथ किसी स्थान के नाम की आवश्यकता रह जाती है। व्याकरण के नियम के अनुसार स्थान का वह नाम 'कर्म' तो नहीं हो सकता; इसलिए ऐसे अवसरों पर आने वाली कुछ क्रियाएँ अकर्मक तो रहती हैं, पर अपूर्ण अकर्मक कहलाती हैं और जिन संज्ञाओं–विशेषणों से उनकी पूर्ति होती है, उन्हें 'पूर्ति' कहते हैं। 'मैं प्रयाग जाता हूँ' में 'प्रयाग' पूर्ति है और 'वे विद्वान हैं' में 'विद्वान' पूर्ति है। सकर्मक क्रियाओंवाले वाक्यों में इस प्रकार की पूर्ति उनमें आए हुए कर्म से ही हो जाती है; पर उनमें ऐसी संज्ञाओं और विशेषणों को 'पूर्ति' नहीं, बल्कि 'पूरक' कहते हैं।

आगे बढ़ने से पहले यहाँ एक और बात बतला देना आवश्यक जान पड़ता है। वह यह कि 'मैं जाता हूँ', 'मैं खाता हूँ', 'मैं सोता था' और 'मैं पढ़ता था' से आपको पूरी या अधूरी बात तो मालूम हो जाती है; इनमें के 'हूँ' और 'था' से आपको काल का भी निश्चित ज्ञान हो जाता है। 'हूँ' कहने से आप समझ लेते हैं कि यह बात वर्तमान काल की है और 'था' कहने से यह समझ लेते हैं कि यह

बात बीते हुए समय या भूतकाल की है। और यदि कहा जाए–'मैं जाऊँगा (या सोऊँगा)' तो क्रिया के इस रूप से ही आप यह भी समझ लेंगे कि यह क्रिया भविष्यत् काल की है; अर्थात् वाक्यों में क्रियाओं के रूप ही काल के सूचक भी होते हैं। यही नहीं, क्रियाओं के रूप कर्ता के लिंग, पुरुष और वचन के भी सूचक होते हैं, जैसे–'मैं आता हूँ' और 'वे जाती हैं' की क्रियाएँ कर्ता के लिंग और वचन का भी ज्ञान कराती हैं। कभी-कभी क्रिया के रूप स्वयं कर्ता के भी सूचक होते हैं। यदि हम कहें–जो कहूँ, वह तुम करो; अर्थात् वाक्य में 'मैं' और 'तुम' न रहने पर भी क्रिया के रूपों से ही उनका बोध हो जाता है। फिर एक बात और है। यदि हम कहें–'वह जहाँ हो, वहाँ जाओ' तो इसका आशय यह होगा कि हम यह नहीं जानते कि वहा कहाँ है; अर्थात् वाक्यों की क्रियाओं से ही उनके संबंध की बहुत-सी बातें जानी जाती हैं। भाषा में क्रियाओं का इतना महत्त्व है।

इस संबंध में ध्यान रखने योग्य दूसरी बात यह है कि कुछ ऐसी क्रियाएँ भी हैं, जो कभी अकर्मक होती हैं और कभी सकर्मक। 'मेरा हाथ खुजला रहा है' में 'खुजलाना' अकर्मक क्रिया के रूप में आया है और 'मैं अपना हाथ खुजला रहा हूँ' में वही 'खुजलाना' सकर्मक क्रिया हो गया है। इसी प्रकार 'लड़की स्कूल में पढ़ रही है' में पढ़ना क्रिया अकर्मक है और 'लड़की पत्रिका पढ़ रही है' में पढ़ना क्रिया सकर्मक है। इसी प्रसंग में यह बतला देना भी आवश्यक जान पड़ता है कि कभी-कभी कुछ अकर्मक क्रियाओं से भी सकर्मक क्रियाएँ बनती हैं। 'मैं चलता हूँ' में 'चलना' अकर्मक क्रिया है; और 'गाड़ी चलाता हूँ' में 'चलाना' सकर्मक क्रिया है, जो अकर्मक क्रिया 'चलना' से बनाई गई है। पर इन सब बातों का यह अर्थ नहीं है कि हम जब चाहें, तब किसी अकर्मक क्रिया से सकर्मक क्रिया और किसी सकर्मक क्रिया से अकर्मक क्रिया बना लें। 'बोलना' ऐसी क्रिया है जो सकर्मक और अकर्मक दोनों रूपों में प्रयुक्त होती है। 'वह एक शब्द नहीं बोला' में बोलना सकर्मक है और 'वह मुझसे बोला तक नहीं' में बोलना अकर्मक है। यहाँ 'मुझसे' करणकारक है, कर्मकारक नहीं। परंतु 'बोलना' को सकर्मक समझकर कुछ लोग उसके आधार पर 'बुलना' अकर्मक क्रिया बना लेते हैं और इस प्रकार के वाक्य लिखते भी हैं–'उनके मुँह से सदा शुद्ध किताब बुलती है'। ऐसा नहीं करना चाहिए। अकर्मक और सकर्मक क्रियाओं के प्रयोग के कारण मुहावरों के अर्थ भी बिलकुल बदल जाते हैं, जैसे–'अब जाकर उनकी

मेहनत ठिकाने लगी है'; अर्थात् सफल हुई है। और 'उन्होंने कई सिपाहियों को ठिकाने लगाया'; अर्थात् मार डाला। इसके सिवा प्रायः सकर्मक क्रियाओं से प्रेरणार्थक रूप भी बनते हैं, जैसे–ढूँढ़ना से ढुँढ़वाना और पढ़ना से पढ़वाना, आदि। पर अकर्मक क्रियाओं के प्रेरणार्थक रूप नहीं होते। अतः हमें निश्चित रूप से जान लेना चाहिए कि कौन-सी क्रियाएँ सदा अकर्मक रहती हैं और कौन-सी सदा सकर्मक; कौन-सी क्रियाएँ अकर्मक और सकर्मक दोनों होती हैं और किन अकर्मक क्रियाओं से सकर्मक क्रियाएँ अथवा किन सकर्मक क्रियाओं से अकर्मक क्रियाएँ बनती हैं। यदि ये सब बातें जाने बिना हम लिखने लगेंगे–'यदि तुम यहाँ से नहीं जाओगे, तो मैं तुम्हें अब जवाऊँगा' या 'वह वहाँ से हँसती-खुशती चलवाई गई', तो लोग हँसेंगे ही।

क्रियाओं के संबंध में ध्यान रखने की मुख्य बात यह है कि उनका उपयोग बहुत समझ-बूझकर किया जाना चाहिए। 'करना' और 'होना' ऐसी क्रियाएँ हैं, जिनका उपयोग बहुत अधिक अवसरों पर होता या हो सकता है। कुछ ही ऐसे शब्द हैं, जिनके साथ इनका उपयोग नहीं होता, कुछ दूसरी क्रियाएँ लगती हैं। पर कुछ क्रियाएँ ऐसी हैं, जो ऊपर से देखने पर तो बहुत-कुछ एक-सा अर्थ प्रकट करनेवाली जान पड़ती हैं; पर यदि ध्यानपूर्वक देखा जाए तो उनके अर्थों में बहुत-कुछ अंतर होता है। उदाहरण के लिए 'टूटना' और 'फूटना' या 'तोड़ना' और 'फोड़ना' लीजिए। हम कहते हैं–'उसका हाथ टूट गया' और 'उसकी आँखें फूट गईं'। हम यह नहीं कह सकते–'उसका हाथ फूट गया' और 'उसकी आँखें टूट गईं'। क्यों ? इसीलिए कि 'टूटना' और बात है, 'फूटना' और बात। दूसरा उदाहरण लीजिए–खींचना और तानना। हम कहते हैं–'तंबू ताना गया' और 'कान खींचा गया'। इन वाक्यों में 'खींचना' की जगह 'तानना' और 'तानना' की जगह 'खींचना' रखने से काम नहीं चल सकता। इसी प्रकार गाड़ी 'खींची' जाती है और लाठी 'तानी' जाती है। क्यों ? इसीलिए कि 'खींचना' में समतल पर किसी चीज अपनी ओर बलपूर्वक लाने का भाव है और 'तानना' में पहले कुछ ऊपर की ओर ले जाने और तब अपनी ओर लाने का भाव है। कुछ इसी तरह की बता 'लड़का दौड़ा हुआ घर गया' और 'लड़का मारे डर के भाग गया' के संबंध में भी है। 'दौड़ना' अपनी इच्छा से होता है। किसी के कहने या विवश करने पर भी कोई दौड़ सकता है। 'भागना' किसी के डर से या अपने

आप को किसी बात से बचाने के लिए ही होता है। इसीलिए कहते हैं–'वह पढ़ने से भागता है'; यह नहीं कहते–'वह पढ़ने से दौड़ता है'। कोई काम जल्दी कराना होता है तो कहा जाता है–'नौकर को दौड़ा दो'। पर यदि नौकर को किसी प्रकार हटाना होता है, तो कहा जाता है–'नौकर को भगा दो'। इसीलिए 'भागकर घर से पुस्तक ले आओ' सरीखे वाक्य अशुद्ध होते हैं। दूध 'उबाला' जाता है, और खीर 'पकाई' जाती है। कोई यह नहीं कहता–'मैं दूध पकाता हूँ और खीर उबालता हूँ'। कारण यही है कि दोनों क्रियाओं के कार्य अलग-अलग प्रकार के हैं। पुस्तक या लेख की 'नकल की जाती है' और किसी को चिढ़ाने के लिए उसकी 'नकल उतारी जाती है'। हम दुकानदार से कहते हैं–'यह धोती कटी है, दूसरी दो।' और धोबी से कहते हैं–'तुम नया कुरता फाड़ लाए।' यहाँ 'कटना' और 'फटना' (या फाड़ना) का अंतर स्पष्ट हो जाता है। हम किसी को थप्पड़ 'मारते' हैं, छड़ी से 'पीटते' हैं और बेंत 'लगाते' हैं। लकड़ी आग में 'जलती' है और आग की लपट से शरीर 'झुलसता' है। हम दीवार में कील 'ठोकते' हैं और अँगूठी में नगीना 'जड़ते' हैं। इसी प्रकार के अंतर 'घुमाना' और 'मोड़ना', 'चखना' और 'खाना', 'उठना' और 'उभरना', 'गिरना' और 'पड़ना' आदि से भी हैं।

साधारणत: 'त्यागना' या 'त्याग देना' का भी वही अर्थ है, जो 'छोड़ना' या 'छोड़ देना' का है। फिर भी हम यह तो कह सकते हैं–'पुलिस ने चोर को छोड़ दिया'; पर यह नहीं कह सकते–'चोर को त्याग दिया'। तात्पर्य यह कि 'छोड़ना' कुछ और प्रकार की क्रिया है, 'त्यागना' कुछ और प्रकार की। इसीलिए 'दुखियों का भय हटानेवाले राजा तुझे बचाएँगे' में हटाने का प्रयोग ठीक नहीं है। यहाँ 'हटाने वाले' की जगह 'दूर करनेवाले' होना चाहिए। 'राजा ने धनुष खींच लिया' भी इसी प्रकार का भद्दा और अशुद्ध वाक्य है। धनुष 'खींचा' नहीं, बल्कि 'उठाया' या 'चढ़ाया' जाता है। खींची तो (म्यान से) तलवार जाती है। 'ये मुकदमे देखने के लिए नए मजिस्ट्रेट आए हैं' में 'देखने' की जगह 'सुनने' होना चाहिए और 'अध्यापकों ने हड़ताल मनाई' में तो 'मनाई' का कुछ अर्थ ही नहीं है। हड़ताल तो केवल की जाती है या होती है। यदि थोड़ा ध्यान दिया जाए, तो ये अंतर स्पष्ट हो जाते हैं। और जब अंतरों का ध्यान रखकर क्रियाओं का प्रयोग किया जाता है, तभी भाषा ठीक और मुहावरेदार होती है।

कुछ इसी प्रकार की भूल उस समय भी होती है, जब वाक्य में संज्ञाएँ तो कई अथवा कई प्रकार ही होती हैं और उनके अंत में क्रिया एक ही रखी जाती है। 'वहाँ पहुँचकर उन लोगों ने पुस्तकें और चित्र तोड़-फोड़ डाले' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि चित्र तो तोड़े-फोड़े जाते हैं, पर पुस्तकें तोड़ी-फोड़ी नहीं, बल्कि फाड़ी जाती हैं। और चित्र भी उसी दशा में तोड़े-फोड़े जाते हैं, जब वे चौखटों में जड़े हों या उन पर शीशे मढ़े हों। नहीं तो खाली चित्र भी, यदि वे कागज पर छपे या कपड़े पर बने हों तो, पुस्तकों की तरह फाड़े ही जाते हैं, तोड़े या फोड़े नहीं जाते। 'सरकार भूख और रोग दूर करेगी' का तो यह अर्थ होगा कि सरकार 'भूख' को ही न रहने देगी अर्थात् लोगों को भूख लगने ही न देगी। इसलिए कहना चाहिए-'सरकार अन्न की कमी और रोग दूर करेगी'। अथवा-'सरकार भूखों के पेट भरेगी और रोगियों के रोग दूर करेगी'। 'वह सीना-पिरोना, संगीत, कसीदा और हिंदी पढ़ती है' में की अंतिम 'पढ़ती है' क्रिया की संगति 'हिंदी' के साथ बैठती है, पर 'सीना-पिरोना, संगीत और कसीदा से नहीं। वाक्य का अच्छा रूप होगा-'वह सीना-पिरोना, कसीदा काढ़ना और संगीत जानती है और हिंदी पढ़ती है'। 'दरजी हमारे कपड़े और कुम्हार हमारे खिलौने गढ़ता है' भी ऐसा ही वाक्य है। इसे ठीक करने के लिए हमें 'कपड़े' के बाद 'सीता' शब्द रखना पड़ेगा; क्योंकि 'खिलौने' तो गढ़े जाते हैं, पर कपड़े 'सिए' जाते हैं।

हमें इस बात का तो ध्यान रखना ही पड़ता है कि कहाँ किस क्रिया का प्रयोग उचित है। इस बात का भी ध्यान रखना पड़ता है कि कहाँ अकर्मक क्रिया का प्रयोग होना चाहिए और कहाँ सकर्मक क्रिया का; पर कभी-कभी लोग भूल से एक ही वाक्य के आरंभ में एक प्रकार की और अंत में दूसरे प्रकार की क्रिया रख देते हैं, जिससे वाक्य भद्दा और अशुद्ध हो जाता है, जैसे-'वह नागरी लिपि में होना चाहिए और साथ में उसका हिंदी अनुवाद भी देना चाहिए'। इसके पहले अंश में 'होना' अकर्मक क्रिया और पिछले अंश में 'देना' सकर्मक क्रिया है; इसलिए यह वाक्य ठीक नहीं है। यदि इसमें 'देना' की जगह 'रहना' हो तो वाक्य ठीक हो जाए। 'वह बदन अकड़कर लेट गया' में 'अकड़ना' अकर्मक क्रिया इसलिए ठीक नहीं है कि उसके पहले 'बदन' (कर्म) आ चुका है। इस वाक्य में 'अकड़कर' की जगह 'अकड़ाकर' होना चाहिए और वाक्य का स्वरूप होना चहिए-'वह बदन को अकड़ाकर लेट गया'। 'स्वतंत्रता लड़कर

मिलेगी' में 'लड़कर' पूर्वकालिक क्रिया ठीक नहीं है। इसका अर्थ तो यह होगा कि स्वतंत्रता पहले लड़ लेगी तब मिलेगी। होना चाहिए–'स्वतंत्रता लड़ने से (या पर) मिलेगी'। 'आँसू-गैस छोड़कर उपद्रवी पकड़े गए' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि आँसू-गैस छोड़ने वाले कोई और थे, पकड़े जानेवाले कोई और। और इसीलिए वाक्य के पहले अंश की पिछले अंश के साथ संगति नहीं बैठती। या तो होना चाहिए–'आँसू-गैस छोड़कर उपद्रवियों को पकड़ा गया' या 'आँसू-गैस की सहायता से उपद्रवी पकड़े गए'। यही बात 'गाड़ी के नीचे दबकर लड़के की मृत्यु हो गई' के संबंध में है। इसमें 'दबकर' की जगह 'दबने से' होना चाहिए।

यदि अकर्मक और सकर्मक का प्रश्न न भी हो तो भी वाक्य में आदि से अंत तक एक ही रूप की क्रियाएँ होनी चाहिए। 'यदि आप ऐसा आदमी भेज देते तो मैं उसे रख लूँगा' इसलिए ठीक नहीं है कि इसमें 'रख लूँगा' का 'भेज देते' के साथ मेल नहीं बैठता। 'भेज देते' से तो 'रख लेता' का ही मेल बैठता है। यदि इस वाक्य में 'भेज देते' की जगह 'भेज दें' हो तो अंत में 'रख लूँ' होना चाहिए। और यदि उसकी जगह 'भेज देंगे' हो तो 'रख लूँगा' से मेल बैठेगा। 'जहाँ मैं चूकता हूँ वहाँ पैर टूटे' भी इसी प्रकार का वाक्य है। इसमें या तो अंत में 'टूटे' की जगह 'टूटते हैं' होना चाहिए या बीच में 'चूकता हूँ' की जगह 'चूका' होना चाहिए। 'सरकार के पास प्रांत भर से जो समाचार मिले हैं' में 'मिले हैं' की जगह इसलिए 'आए हैं' या 'पहुँचे हैं' होना चाहिए क्योंकि आरंभ में 'सरकार के पास' है। यदि हम अंत में 'मिले हैं' ही रखना चाहें तो हमें वाक्य के आरंभ में 'सरकार के पास' की जगह 'सरकार को' रखना पड़ेगा। 'ईश्वर करे, वे पुराने दिन फिर लौट आएँ, जिनमें हिंदुओं और मुसलमानों में एकता हो' में 'हो' की जगह 'थी' होना चाहिए, क्योंकि चर्चा उन पुराने दिनों की है, जिनमें एकता थी।

इन्हीं से मिलती-जुलती और भी ऐसी अनेक अवस्थाएँ हैं, जिनमें क्रियाओं का बहुत ध्यान रखना पड़ता है, जैसे–'उनका विचार था कि हम ऐसा करें' और 'उनकी इच्छा थी कि हम ऐसा करेंगे'। इनमें से पहले वाक्य में 'करें' की जगह 'करेंगे' और दूसरे वाक्य में 'करेंगे' की जगह 'करें' होगा। यह अंतर इन वाक्यों में आए हुए 'विचार' और 'इच्छा' शब्दों के कारण पड़ता है। 'विचार' कुछ-कुछ निश्चय तक पहुँचता हुआ और इच्छा से बहुत आगे बढ़ा हुआ होता है। हमारी

'इच्छा' होती है कि हम कोई काम करें। इसमें कोई काम करने को जी भर चाहता है, उसमें निश्चय का कोई भाव नहीं होता। पर जब हम कहते हैं–'हमारा विचार है (या था)' तब मानो हम कोरी 'इच्छा' से बहुत-कुछ आगे बढ़कर 'निश्चय' के पास तक पहुँच जाते हैं; अर्थात् हम कुछ सोच-समझकर पूरा निश्चय तो नहीं, पर बहुत-कुछ निश्चय-सा कर लेते हैं और इसी लिए पहले वाक्य में 'करें' की जगह 'करेंगे' होना चाहिए।

कभी-कभी क्रियाओं का ठीक प्रयोग न होने के कारण वाक्य तो भद्दा हो ही जाता है, उसका ठीक अर्थ समझने में बहुत भूल हो सकती है। यदि हम कहें–'उस मकान में गोली चलाई गई और उसे खाकर एक आदमी जमीन पर गिर पड़ा' तो इसमें के 'खाकर' का कुछ और अर्थ हो सकता है। यह समझा जा सकता है कि जिस प्रकार दवा की गोली खाई जाती है, उसी प्रकार वह गोली खाकर एक आदमी जमीन पर गिर पड़ा। इसलिए ऐसे अवसर पर 'उसे खाकर' की जगह 'उसके लगने से' होना चाहिए।

कुछ अवसरों पर वाक्य में एक क्रिया के तुरंत बाद दूसरी क्रिया आती है। कभी-कभी एक ही क्रिया हमारा पूरा विचार या उसका काल ठीक तरह से प्रकट नहीं करती; इसलिए हमें उसके साथ कोई और क्रिया रखनी पड़ती है। ऐसी क्रिया संयुक्त क्रिया कहलाती है। 'मैं जाता था' और 'मैं जा रहा था' में बहुत अंतर है। यह अंतर इन दो वाक्यों से स्पष्ट हो जाता है– (1) 'जब मैं आता था, तो वह मुझे देखकर खड़ा हो जाता था' और (2) 'जब मैं जा रहा था, तब वह मुझे रास्ते में मिला'। इस प्रकार की क्रियाओं के भेद अपने व्याकरण में पढ़े ही होंगे। अतः यहाँ इनके विवेचन का अधिक विस्तार अपेक्षित नहीं। इनके संबंध में ध्यान रखने की मुख्य बात यह है कि इनके प्रयोग में भूल करने से कभी-कभी वाक्य का अर्थ बिलकुल बदल जाता है। एक बार एक सज्जन उदयपुर गए थे। वहाँ की यात्रा का जो वर्णन उन्होंने किया था, उसमें उन्होंने लिखा था– 'मैंने वह गुफा भी देखी, जहाँ राणा प्रताप छिपे हुए थे।' इनमें संयुक्त क्रिया 'हुए' बहुत ही भ्रम उत्पन्न करनेवाली है। इससे वाक्य का आशय यह हो जाता है कि लेखक ने जिस समय वह गुफा देखी थी, उस समय राणा प्रताप उसमें छिपे हुए थे। पर लेखक वहाँ गए थे राणा प्रताप के मरने के सैकड़ों वर्ष बाद। इसलिए वाक्य में 'छिपे हुए थे' की जगह केवल 'छिपे थे' होना चाहिए था। एक बार

एक सज्जन ने अपने व्याख्यान में कहा था–'हमें ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि हम अपनी स्वतंत्रता खो न सकें' पर इस वाक्य में 'खो न सकें' की जगह 'खो न दें' या 'खो न बैठें' होना चाहिए था। 'सकना' का प्रयोग तो उसी अवस्था में होना चाहिए, जब हम कोई काम अपनी इच्छा से पूरी करना चाहें; पर अपनी स्वतंत्रता खोने का कभी कोई अपनी इच्छा से प्रयत्न नहीं करता; हाँ, उसे बचाने का प्रयत्न अवश्य करता या कर सकता है। 'कोई चिंता उन्हें सता नहीं सकती थीं' कहना तो बहुत-कुछ ठीक हो सकता है; पर 'कोई चिंता उन्हें सता नहीं पाती थीं' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि इसका आशय यह हो जाएगा कि 'चिंता' उन्हें सताने का प्रयत्न तो करती थी, पर सफल नहीं होती थी। 'तुम तो उनसे मिले हो' और 'तुम तो उनसे मिले हुए हो' में अर्थ के विचार से बहुत अंतर है। पहले वाक्य का अर्थ यह है कि उनसे तुम्हारी भेंट हो चुकी है; पर दूसरे वाक्य का अर्थ है–तुम उनके पक्ष या गुट में हो। अब यदि हम इन दोनों वाक्यों की जगह कहें–'तुम तो उनसे मिल चुके हो' तो इसका आशय दूसरे वाक्य से बिलकुल अलग होगा ही, पहले वाक्य से भी कुछ अलग होगा। 'तुम तो उनसे मिले हो' में उतना निश्चय या जोर नहीं है, जितना 'तुम तो उनसे मिल चुके हो' में है। 'रात-भर वे लोग वहाँ धरना देते रहे' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि 'धरना' कोई बार-बार दी जाने वाली चीज नहीं है। जब से आदमी किसी जगह अड़कर बैठता है, तब से उस समय तक का उसका बैठा रहना 'धरना' कहलाता है, जब तक वह वहाँ से उठ नहीं जाता। 'धरना देते रहे' का अर्थ यह हो जाएगा कि वे एक बार कुछ देर तक धरना देने के बाद वहाँ से उठ जाते थे और बार-बार ऐसा ही करते थे। पर 'धरना' में यह बात नहीं होती। हाँ, 'रात भर वे लोग वहाँ पहरा देते रहे' कहना इसलिए ठीक है कि पहरा बार-बार इधर से उधर घूम-घूमकर दिया जाता है।

कभी-कभी लोग संयुक्त क्रियाओं का बिलकुल व्यर्थ प्रयोग भी कर जाते हैं, जैसे–'रूस की जिद के आगे ब्रिटेन को झुक जाना ही पड़ा'। इस वाक्य में संयुक्त क्रिया 'जाना' बिलकुल व्यर्थ है; 'झुक जाना' की जगह 'झुकना' होना चाहिए। कुछ लोग व्यर्थ ही एक साथ कई क्रियाओं का प्रयोग करके वाक्य बहुत भद्दा और जटिल कर देते हैं, जैसे–'जब तुम बड़े हो गए होगे'। यही बात सीधी तरह से यों कही जा सकती है–'जब तुम बड़े होगे' या 'जब तुम बड़े हो

जाओगे'। इसी प्रकार 'खड़े रह गए हुए साइस को उसने पुकारा' की जगह 'रुके हुए (या रुक जानेवाले) साइस को उसने पुकारा' कहना कहीं अधिक अच्छा और हलका है और 'पलक गिरा लेकर उसने कहा' से 'पलक गिराकर उसने कहा' कहना अधिक सुंदर है। 'इतना कह डालकर वहाँ से चलता हुआ' कितना भद्दा है और 'इतना कहकर वह वहाँ से चलता हुआ' कितना अच्छा है! 'बुलावा आ पहुँच सकता है' कितना टेढ़ा और 'बुलावा आ सकता है' कितना सीधा है! यह 'काम जल्दी ही हो जा सकता है' में 'जा' बिलकुल व्यर्थ है। या तो 'हो जाएगा' होना चाहिए या 'हो सकता है' रहना चाहिए। 'वह आपका काम करा दे सकता है' में 'दे' बिलकुल व्यर्थ है और 'वहाँ काम की कोई चीज मिल जा सकती है' में 'जा' की कोई आवश्यकता नहीं है।

12

वचन

यों तो हम किसी की कही हुई बात को भी 'वचन' कहते हैं, जैसे–'यह व्यासजी का वचन है'; और किसी के किए हुए वादे को भी 'वचन' कहते हैं; जैसे–'उन्होंने यह काम करने का वचन दिया है'; पर व्याकरणों में यही कहा जाता है कि संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया या विशेषण के जिस रूप से संख्या का ज्ञान होता है, उसे वचन कहते हैं; पर इतने से विद्यार्थियों को संतोष नहीं हो सकता; इसलिए हम यह बात कुछ अधिक स्पष्ट रूप से बतलाते हैं।

मान लीजिए कि आप किसी दुकान पर लिखने के लिए कापी लेने जाते हैं। वहाँ जाकर आप कहते हैं–'हमें कापी चाहिए।' दुकानदार पूछेगा–'कितनी कापियाँ ?' आप कहेंगे–एक या दो या चार या दस या जितनी आपको चाहिए। जब आपको एक कॉपी की आवश्यकता होगी, तब आप कहेंगे–'एक कापी दो।' पर यदि आपको एक से अधिक कापियों की आवश्यकता होगी, तो आप कहेंगे–'दो कापियाँ, चार कापियाँ', आदि। आप यह भी कह सकते हैं–एक दर्जन या एक कोड़ी कापियाँ; अथवा यदि कापियाँ रुपए के हिसाब से बिकती हों तो आप यह कह सकते हैं–एक रुपए की या दो रुपए की। पर सभी अवस्थाओं में एक कापी के लिए आपको कहना पड़ेगा–कॉपी; और एक से अधिक के लिए कहना पड़ेगा–कापियाँ। यदि आपने किसी बारात में दस घोड़े देखे होंगे तो आप यह नहीं कहेंगे–'हमने बारात में दस घोड़ा देखा था'। क्यों ? इसलिए कि यह वचन के विचार से अशुद्ध है। आपका वाक्य तभी शुद्ध होगा, जब आप कहेंगे–'हमने बारात में दस घोड़े देखे थे'। आप यह भी नहीं कह सकते–हमने बारात में दस घोड़े देखा था; बल्कि आपको कहना पड़ेगा–

'देखे थे'। इससे सिद्ध होता है कि एक हो तो 'घोड़ा' और एक से अधिक हों तो 'घोड़े' और एक हो तो 'देखा था' और एक से अधिक हों तो 'देखे थे' कहना ही शुद्ध होगा। हम कहते हैं–'हम मोटे कपड़े पहनते हैं' और 'हम इतने मोटे कपड़े पहनते हैं, जितने और लोग नहीं पहनते'। इन वाक्यों में 'वचन' के कारण ही 'मोटा' (विशेषण) तो 'मोटे' हो गया और 'इतना' (विशेषण) 'इतने' हो गया। इससे सिद्ध होता है कि 'वचन' संख्या का बोध कराने वाला वह तत्त्व है, जिसके कारण संज्ञा, क्रिया और विशेषण के रूप बदल जाते हैं। व्याकरण में इस प्रकार के रूप-परिवर्तन को 'विकार' कहते हैं और जिन शब्दों के रूप में इस प्रकार परिवर्तन होता है, वे 'विकारी' कहलाते हैं। यहाँ हम एक और बात बतला देना आवश्यक समझते हैं। वह यह कि वचन का संबंध वस्तु की संख्या से होता है, उसकी मात्रा या परिमाण से नहीं। हम सदा यही कहेंगे–'सेर भर आलू से काम न चलेगा' पर यह नहीं कहेंगे–'सेर भर आलुओं से काम न चलेगा'। कारण यही है कि व्याकरण की दृष्टि से हमें 'सेर भर' का ही ध्यान रखना पड़ेगा, 'आलू' का नहीं। हाँ, जब उस 'सेर भर' के साथ भी कोई संख्या लगेगी, तब वाक्य पर उसका अवश्य प्रभाव पड़ेगा, जैसे–'तुमने सेर भर की जगह दो सेर आलू भेज दिए'। यही बात 'एक बोरा मैदा आया है', 'चार बोरे मैदा आया है' के संबंध में भी है।

इसके सिवा वचन के कारण सर्वनाम के रूपों में भी परिवर्तन होता है। 'वह' का बहुवचन 'वे' और 'यह' का बहुवचन 'ये' होता है। 'किस' का बहुवचन 'किन' और 'उस' का बहुवचन 'उन' होता है। लिंग के कारण क्रियाओं के जो रूप बदलते हैं, उन पर भी वचन का प्रभाव पड़ता है, जैसे–'वह जाता था' और 'वे जाते थे', 'वह जाती थी' और 'वे जाती थीं'। इस प्रकार वचन का प्रभाव प्रायः सारे वाक्य पर पड़ता है।

संस्कृत में तीन वचन होते हैं–एक वचन, द्विवचन और बहुवचन। मराठी में भी इसी प्रकार तीन वचन होते हैं; पर हिंदी में तथा बहुत-सी दूसरी भाषाओं में दो ही वचन होते हैं–एकवचन और बहुवचन। जहाँ हमारा अभिप्राय किसी एक चीज से होता है, वहाँ हम एकवचन का प्रयोग करते हैं और जहाँ एक से अधिक चीजों से अभिप्राय होता है, वहाँ बहुवचन का। तीसरा वचन जो द्विवचन कहलाता है और जो केवल दो चीजों का बोधक होता है, हिंदी में नहीं है।

अब हम बतलाना चाहते हैं कि वचन के संबंध में लोग किस प्रकार की भूलें करते हैं। प्रायः लोग लिख और बोल जाते हैं–'दोनों की दशा एक-सी है।' वास्तव में होना चाहिए–'दोनों की दशाएँ एक-सी हैं।' कारण यह है कि 'सी' इस बात का सूचक है कि दोनों की दशाएँ हैं तो वास्तव में अलग-अलग, पर प्रायः एक समान हैं। यदि हम कहें–'दोनों की दशा एक है', तो इसमें कुछ भी भूल न होगी; क्योंकि हम जानते या मान लेते हैं कि उनमें कुछ अंतर नहीं है। पर जब हम 'सा' का प्रयोग करते हैं, तब मानो हम निश्चित रूप से मानते हैं कि दोनों दशाएँ अलग-अलग हैं, पर हैं दोनों एक तरह की। इसीलिए दोनों की दशाएँ एक-सी कहना ही ठीक है। 'राजा साहब बजरों पर सवार होकर मेला देखने जाते थे' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि राजा साहब तो जब सवार होते होंगे, तब एक ही बजरे पर होते होंगे। एक आदमी एक साथ कई बजरों पर सवार नहीं हो सकता। हाँ; उसके साथ कई बजरे हो सकते हैं। इसी प्रकार यह कहना भी ठीक नहीं है–'वृक्षों पर कोयल कूक रही थी।' वृक्ष तो हुए कई और कोयल हुई एक। एक कोयल कई वृक्षों पर कैसे कूक सकती है ? इसलिए होना चाहिए–'वृक्षों पर कोयलें कूक रही थीं' या 'वृक्ष पर कोयल कूक रही थी'। 'घुटने तक लंबी भुजाओंवाले' रूप अशुद्ध है। शुद्ध रूप होगा–'घुटनों तक लंबी भुजाओंवाले', क्योंकि भुजाओं की तरह घुटने भी दो होते हैं। इसी प्रकार 'कोमल और तीव्र स्वभाववाले मनुष्य के विचारों में जो अंतर होता है...' में 'मनुष्य' की जगह 'मनुष्यों' होना चाहिए। हाँ, उग्र और क्रोधी स्वभाववाला मनुष्य' ठीक है। 'स्थान-स्थान पर तिरंगा झंडा' नहीं बल्कि 'तिरंगे झंडे' होना चाहिए। 'मुझे आपके पत्र से प्रसन्नता और दुख दोनों हुआ है' में 'हुआ है' की जगह 'हुए हैं' होना चाहिए। 'मैं आपको इसका गुण-दोष बतलाऊँगा' में 'इसका' की जगह 'इसके' होना चाहिए; क्योंकि गुण और दोष दो चीजें हैं, एक नहीं। 'उन लोगों को रस्सियों में बाँधकर कुत्ते की तरह घसीटा गया' भी ठीक नहीं है। होना चाहिए–'कुत्तों की तरह...' 'उन्होंने गोले और तोपों से आक्रमण किया' में 'गोले' की जगह 'गोलों' होना चाहिए। 'वहाँ मुझसे और उससे क्रमशः निम्नलिखित बात हुई' भी इसलिए ठीक नहीं कि 'क्रमशः' से जान पड़ता है कि क्रम से कई बातें हुईं। इसलिए इस वाक्य में 'बात हुई' की जगह 'बातें हुईं' होना चाहिए। यदि अधिक वर्षा के कारण किसी नगर की सड़कों पर पानी इकट्ठा हो जाए, तो

'सड़कें नहर बन गईं' की जगह 'सड़कें नहरें बन गईं' कहना ही ठीक होगा। पहला वाक्य तो उसी अवस्था में ठीक हो सकता है, जब सब सड़कों पर के पानी ने मिलकर एक नहर का रूप धारण कर लिया हो; पर ऊपर बतलाई हुई अवस्था में 'नहर' न कहकर 'नहरें' ही कहना ठीक होगा।

'मनुष्य में ऐसे बहुत-से गुण हैं, जो उनके पूर्वजों में नहीं थे' में या तो 'मनुष्य' की जगह 'मनुष्यों' होना चाहिए या 'उनके' की जगह 'उसके'। 'वह मैं ही हूँ, जिन्होंने आपको बचाया था' में 'जिन्होंने' की जगह 'जिसने' होना चाहिए। 'सभी श्रेणी के लोग वहाँ आए थे' में 'श्रेणी' जगह 'श्रेणियों' होना चाहिए। 'सुनते-सुनते कान पक गया' की जगह 'सुनते-सुनते कान पक गए' होना चाहिए; क्योंकि मनुष्य दोनों कान से सुनता है, न कि एक कान से। इसीलिए सुनाई पड़ने वाली बातों का प्रभाव भी दोनों कानों पर पड़ेगा, किसी एक कान पर नहीं। 'यह नाना प्रकार का रूप धारण करता है' की जगह 'यह नाना प्रकार के रूप धारण करता है' होना चाहिए। सब सदस्यों के पास निमंत्रण भेजा गया' कहना इसलिए ठीक है कि यहाँ 'निमंत्रण' शब्द में सब लोगों को बुलाने का भाव एक साथ आ गया है। पर 'सब सदस्यों के पास निमंत्रण-पत्र भेजा गया' उसी अवस्था में कहना ठीक होगा, जब उसके पास एक ही (संख्या के विचार से एक, न कि एक ही प्रकार का) निमंत्रण-पत्र भेजा गया हो। नहीं तो 'सब सदस्यों के पास निमंत्रण-पत्र भेजे गए' कहना ही ठीक होगा। 'इसमें से हर एक इसके लिए प्रयत्न कर सकते हैं' इसलिए ठीक नहीं है कि 'हर एक' केवल एक का सूचक है; इसलिए 'प्रयत्न कर सकते हैं' की जगह 'प्रयत्न कर सकता है' होना चाहिए। 'इन दोनों स्थानों पर भी एक-एक घटनाएँ हुईं' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि 'एक-एक' के बाद संज्ञा और क्रिया एक वचन में होनी चाहिए, बहुवचन में नहीं। इसलिए 'घटनाएँ हुईं' की जगह 'घटना हुई' रखना ही ठीक होगा। 'इन दोनों स्थानो पर भी दो घटनाएँ हुईं' कहना अवश्य ठीक है। 'नित्य कोई-न-कोई ऐसी बातें होती रहती हैं' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि 'कोई-न-कोई' सदा 'एक' का सूचक होता है, 'अनेक' का नहीं। इसलिए कहना चाहिए-'नित्य कोई-न-कोई ऐसी बात होती रहती है'। 'इस मतभेद के कारण हर आदमी अपने-अपने विचारों के अनुसार काम कर सकता है' कहना इसलिए ठीक नहीं कि 'हर' तो एकवचन का सूचक है और 'अपने-अपने'

बहुवचन का, इसलिए यदि हम वाक्य में 'हर' रखें तो हमें 'अपने-अपने' की जगह केवल 'अपने' लिखना होगा; या यदि हम 'अपने-अपने' ही रखना चाहें तो हमें 'हर आदमी' की जगह 'सब लोग' रखना पड़ेगा और इसी के अनुसार अंत में क्रम से या तो 'काम कर सकता है' होगा या 'काम कर सकते हैं'। फिर 'विचार' और 'विचारों' का प्रयोग भी अलग-अलग अवस्थाओं में ठीक हो सकता है। जहाँ कोई अपने एक विचार के अनुसार कार्य करे, वहाँ 'विचार' और जहाँ एक से अधिक विचारों के अनुसार कार्य करे, वहाँ 'विचारों' रखना होगा। 'मेरे बहुत-से विचारों को लोग व्यर्थ का समझते हैं' भी ठीक नहीं है; क्योंकि यहाँ 'विचार' तो 'बहुत-से' हैं पर 'का' एक वचन है; इसलिए 'व्यर्थ का' की जगह 'व्यर्थ के' होना चाहिए। यों देखने में वाक्य का इस प्रकार का रूप भले ही खटकता हो, पर व्याकरण की दृष्टि से है शुद्ध।

पर हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि 'सब लोग अपनी सम्मति दें' और 'सब लोग अपनी-अपनी सम्मति दें' में अर्थ के विचार से बहुत अंतर है। यदि हमारा अभिप्राय यह हो कि सब लोग आपस में मिलकर एक निश्चय कर लें और तब उस निश्चय के अनुसार सब लोग मिलकर एक ही सम्मति दें, तब तो 'सब लोग अपनी सम्मति दें' कहना ही ठीक होगा। पर यदि हमारा अभिप्राय यह हो कि सब लोग अलग-अलग सम्मति दें, तब 'सब लोग अपनी-अपनी सम्मति दें' कहना ही ठीक होगा।

यदि वाक्य में कई संज्ञाएँ एक साथ आएँ और अर्थ के विचार से सब संज्ञाएँ एक तरह की हों, तब उन संज्ञाओं के रूप भी एक-से होने चाहिए। यह कहना ठीक नहीं है-'उन्होंने बैल, घोड़े और हाथियों के व्यापार से बहुत धन कमाया था'; क्योंकि व्यापार के लिए जिस प्रकार बहुत-से हाथी आवश्यक हैं, उसी प्रकार बहुत-से बैल और घोड़े भी। इसलिए वाक्य का ठीक रूप होगा- 'उन्होंने बैलों, घोड़ों और हाथियों के व्यापार से बहुत धन कमाया था'। 'ग्रामीण और डाकुओं में लड़ाई' कहना तभी ठीक होगा, जब ग्रामीण एक ही हो और डाकू कई हों। यदि ग्रामीण भी कई हों तो हमें 'ग्रामीणों और डाकुओं में लड़ाई' कहना पड़ेगा। 'अनेक स्थानों से ऐसा समाचार आता रहता है...' की जगह 'अनेक स्थानों से ऐसे समाचार आते रहते हैं...' कहना ठीक है क्योंकि अनेक स्थानों से आनेवाले समाचार भी अनेक ही होंगे। यदि सब स्थानों से एक ही

समाचार आता हो, तो भी हमें 'ऐसे समाचार' रखना पड़ेगा क्योंकि वाक्य के अंत में हम कहते हैं–'आते रहते हैं' इससे यह सूचित होता है कि आज एक स्थान से समाचार आया, कल दूसरे से और परसों तीसरे से, और इसलिए समाचार एक-से होने पर भी संख्या में एक से अधिक होंगे। इसी सिद्धांत के अनुसार 'इस दो वर्षों की अवधि में...' कहना भी ठीक नहीं। होना चाहिए–'इन दो वर्षों की अवधि में...' या 'दो वर्षों की इस अवधि में...।'

इसी के साथ यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जब कई चीजों के नामों में से अंतवाले नाम के पहले 'और' होता है, तब अंत में उनके संबंध की क्रिया बहुवचन में होती है। पर जब कई चीजों के नामों में से अंत वाले नाम के पहले 'या' होता है, तब अंत में उनके संबंध की क्रिया एकवचन में होती है, जैसे– (क) बँगला, मराठी और गुजराती भाषाएँ कई प्रांतों में बोली जाती हैं। (ख) बँगला, मराठी या गुजराती भाषा कई प्रांतों में बोली जाती है। पर कभी-कभी ऐसा भी होता है कि एक वाक्य में कई ऐसी संज्ञाएँ आती हैं, जिनमें से कुछ बहुवचन और कुछ एकवचन होती हैं। ऐसी अवस्थाओं में कुछ लोग अंतिम क्रिया का स्वरूप स्थिर करने में गड़बड़ा जाते हैं। वस्तुतः अंतिम क्रिया का वचन भी वही होना चाहिए जो उससे ठीक पहले आई हुई संज्ञा का हो, जैसे– 'उसके पास दो गौएँ और एक घोड़ा हैं' अथवा 'उसके पास एक घोड़ा और दो गौएँ हैं।'

उक्त नियम में अब थोड़े से परिवर्तन की आवश्यकता दिखाई पड़ रही है। जब 'और' विभिन्न लिंगी व्यक्तिवाचक संज्ञाओं, या तत्संबंधी सर्वनामों को जोड़ता है तो क्रिया का स्वरूप पुल्लिग बहुवचन संज्ञा के अनुरूप रखा जाने लगा है, जैसे :

राम और सीता आए।

मैं और वह वहाँ गए।

राजीव और सोनिया वहाँ उपस्थित थे।

पति और पत्नी खा रहे हैं।

अब हम आपको वचन के संबंध में एक और प्रकार का अंतर बतलाना चाहते हैं। हम कहते हैं–'चार हाथवाले विष्णु की मूर्ति हमारे सामने थी।' क्यों?

इसीलिए कि विष्णु की उस मूर्ति के चार हाथ थे; पर हम बाजार में जाकर 'चार हाथ (या आठ हाथ या दस हाथ) वाली धोती' नहीं माँगते। क्यों ? इसीलिए कि धोती के चार (या आठ या दस) हाथ नहीं होते, बल्कि 'चार (या आठ या दस) हाथ' धोती की केवल लंबाई का सूचक है। इस सिद्धांत के अनुसार यही कहना ठीक है–'उसे सौ रुपए जुर्माना हुआ'। 'उसे सौ रुपया जुर्माना हुआ' या 'उसे सौ रुपए जुर्माने हुए' कहना ठीक नहीं है। इसी प्रकार जब हम कहते हैं–'उसकी हत्या छुरे से हुई थी' तब हम इस बात का विचार नहीं करते कि उसके शरीर पर छुरे के दो घाव लगे थे या चार या दस। हम तो यही सूचित करना चाहते हैं कि जिस शस्त्र से उसकी हत्या हुई थी, वह छुरा था, तलवार या कटार नहीं। पर 'झुंडों के झुंड देहाती वहाँ आ पहुँचे' कहना इसलिए ठीक नहीं है कि 'झुंड के झुंड' एक ऐसा मुहावरा है, जिसके रूप में किसी प्रकार का परिवर्तन या विकार नहीं हो सकता। एक दूसरे उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाएगी। जब किसी ओर से बहुत-से घोड़े आते हुए दिखाई देंगे, तब हम कहेंगे–'उधर से घोड़े पर घोड़े चले आ रहे हैं'; क्योंकि मुहावरे के अनुसार ऐसा कहना ही ठीक होगा। यदि हम कहें–'उधर से घोड़ों पर घोड़े चले आ रहे थे' तो इसका अर्थ यह हो जाएगा कि बहुत-से घोड़ों पर लदे हुए बहुत-से घोड़े आ रहे थे। ये सब बातें सूचित करती हैं कि वचन ठीक रखने के लिए हमें बहुत-सी बातों का विचार करना पड़ता है, और जहाँ हम इस प्रकार का विचार नहीं करते, वहाँ और का और अर्थ हो जाता है।

कुछ अवसरों पर वचन का ठीक ध्यान न रखने के कारण अर्थ में बहुत गड़बड़ी हो जाती है। एक प्रसिद्ध मुहावरा है–पैर (या पाँव) न उठना। कभी-कभी ऐसा होता है कि थकावट, भय, शोक आदि के कारण हमसे चला या आगे बढ़ा नहीं जाता। उस समय हम कहते हैं–'मैं तो बहुत प्रयत्न करता था, पर मेरा पैर ही नहीं उठता था।' कुछ लोग इसकी जगह भूल से कभी-कभी कह जाते हैं–'मेरे पैर ही नहीं उठते थे'। पर ऐसा कहना उसी अवस्था में ठीक होगा, जब हम रोग आदि से पीड़ित होने के कारण पड़े-पड़े अपने दोनों पैर एकसाथ उठाने का प्रयत्न करें, पर उठा न सकें। पर चलने या आगे बढ़ने में हम कभी दोनों पैर एकसाथ नहीं उठाते, बल्कि जब पहले एक पैर उठाकर आगे रख देते हैं, तब दूसरा पैर उठाते हैं। इसीलिए चलने के संबंध में 'मेरा पैरा नहीं उठता

था' कहना ही ठीक है। इसी प्रकार यह कहना भी ठीक नहीं है–'ज्योंही हमने घर से पैर निकाले, त्योंही पानी बरसने लगा।' वास्तव में होना चाहिए–'ज्यों ही हमने घर से पैर निकाला...' 'पैर निकाले' का प्रयोग तो उसी समय ठीक हो सकता है, जब हम कभी बैठे हों और अपने दोनों पैरा उठाकर खिड़की या दरवाजे में से बाहर की ओर निकालें। इस प्रकार के प्रयोग व्याकरण की दृष्टि से ठीक न होने के सिवा मुहावरे और प्रयोग की दृष्टि से भी ठीक नहीं होते। मुहावरे तो तभी ठीक होंगे, जब वे व्याकरण की दृष्टि से भी ठीक हों और अपने बँधे हुए शब्दों में भी हों। इसी सिद्धांत के अनुसार यह कहना भी ठीक नहीं है–'हमने उन्हें हाथ जोड़ा'; क्योंकि हाथ जोड़ने की क्रिया एक हाथ से नहीं, बल्कि दोनों हाथों से होती है। इसलिए सदा 'हाथ जोड़े' कहना चाहिए। 'कै बजा' कहना ठीक हो सकता है; पर 'दो बजा', 'चार बजा' या 'दस बजा' कहना ठीक नहीं है। एक से अधिक के लिए सदा 'बजे' कहना चाहिए।

वचन के संबंध में ध्यान रखने की कुछ और बातें भी हैं। हिंदी में कुछ शब्द ऐसे हैं जो सदा बहुवचन में ही आते हैं, पर जिन्हें लोग प्रायः भूल से एकवचन में लिख जाते हैं, जैसे–दर्शन, प्राण, हस्ताक्षर, आँसू, आदि। 'मैं कल आपका दर्शन करूँगा', 'उसका प्राण निकल गया', 'उसने पत्र पर हस्ताक्षर नहीं किया' और 'उसकी आँखों से आँसू बह रहा था' सरीखे प्रयोग अशुद्ध होते हैं। इन वाक्यों के शुद्ध रूप होंगे–'मैं कल आपके दर्शन करूँगा', 'उसके प्राण निकल गए', 'उसने पत्र पर हस्ताक्षर नहीं किए' और 'उसकी आँखों से आँसू बह रहे थे'। प्रायः लोग लिखते हैं–'वहाँ अनेकों आदमी इकट्ठे हो गए' और 'मैंने उन्हें अनेकों बार समझाया'। पर यहाँ 'अनेकों' रूप इसलिए ठीक नहीं है कि हिंदी में विशेषणों के बहुवचन रूप में संज्ञाओं की तरह 'ओं' प्रत्यय नहीं आता। इसलिए होना चाहिए–'वहाँ अनेक आदमी इकट्ठे हो गए' और 'मैंने उन्हें अनेक बार समझाया'। पर हाँ, यदि हम 'अनेक' का प्रयोग विशेषण के रूप में न करके संज्ञा के रूप में करें, तो बात दूसरी है। उस दशा में हम कह सकते हैं–'अनेकों का यह मत है'। इसी प्रकार 'इस बात में सबों ने उसका साथ दिया' और 'ऋषि, मुनि आदियों का यही मत है' कहना भी ठीक नहीं है। 'सब' का रूप सदा 'सब' और 'आदि' का रूप सदा 'आदि' ही रहता है। इन्हें 'सबों' और 'आदियों' रूप देना ठीक नहीं है। 'सामग्री' है तो अनेक प्रकार की और अनेक

चीजों के समूह का नाम, फिर भी इसका प्रयोग सदा एकवचन में होता है। इसीलिए यह कहना ठीक नहीं है–'हमने सब सामग्रियाँ इकट्ठी कर ली हैं'। इस जगह 'सब सामग्री' कहना ही ठीक है।

'रुपया' और 'पैसा' ऐसी संज्ञाएँ हैं जिनका यथावसर एकवचन या बहुवचन में प्रयोग होता है। परंतु जब इनका प्रयोग 'धनराशि' के रूप में होता है तो इनका प्रयोग एकवचन में ही करते हैं, जैसे–'तुम्हें कितना रुपया मिला ? तुमने कितना पैसा उससे लिया ?' फारसी 'दाम' का प्रयोग सिक्के के अर्थ में न करके अब मूल्य के अर्थ में करते हैं। 'दाम' का प्रयोग पहले बहुवचन में होता था, जैसे–'इस कंप्यूटर के दाम क्या हैं'? परंतु अब मूल्य का पर्याय मान लिया जाने के कारण इसका एकवचन में होता है, जैसे–'इस कंप्यूटर का दाम क्या है' ?

इसी प्रकार के कुछ और शब्द हैं, जो होते तो दो वस्तुओं के सूचक हैं, पर जिनका प्रयोग एकवचन में ही होता है, जैसे–जूता, जोड़, जोड़ा, मोज़ा आदि। दोनों पैरों के लिए जूते भी दो अलग-अलग होते हैं और 'जोड़' या 'जोड़ा' में भी कोई दो चीजें होती हैं। पर या तो उनका व्यवहार एक साथ होता है या वे आपस में एक दूसरे से मिली रहती हैं और इसीलिए उनके सूचक शब्दों का प्रयोग भी एकवचन में होता है। हम कहते हैं–'हमारा जूता खो गया' या 'आज हमने एक जोड़ा धोती खरीदी है'। हम यह नहीं कहते–'हमारे जूते खो गए' या 'हमने एक जोड़ा धोतियाँ खरीदी हैं'। पर यदि हम कई आदमी एक साथ अपने-अपने लिए जूते या धोती-जोड़े खरीदें, तो हम कहेंगे–'आज हम लोगों ने जूते या धोती-जोड़े खरीदे हैं'।

एक बात और है। कभी-कभी कुछ लोग विदेशी भाषाओं के कुछ शब्दों के बहुवचन रूपों का प्रयोग करते हैं, जैसे–'वहाँ पाँच फीट लंबा साँप निकला था'। इस संबंध में ध्यान रखने की बात यह है कि 'फुट' शब्द का बहुवचन 'फीट' अंग्रेजी में ही होता है। हम अंग्रेजी से 'फुट' शब्द लेते या ले सकते हैं; पर यदि हमें उसका बहुवचन बनाना हो तो हम अपने ही व्याकरण के अनुसार उसका रूप रखेंगे, अंग्रेजी व्याकरण के अनुसार नहीं। और हमारे व्याकरण में कोई ऐसा नियम नहीं है, जिससे 'फुट' का बहुवचन 'फीट' बनता हो। इसलिए

हमें कहना होगा–'वहाँ पाँच फुट लंबा साँप निकला था'। इसी प्रकार यह कहना भी ठीक नहीं है–'उन्होंने सब कागजात हमें दिखाए' क्योंकि हम 'कागज' शब्द ही लेते या ले सकते हैं, उसका बहुवचन रूप 'कागजात' नहीं। इसलिए हमें कहना चाहिए–'उन्होंने सब कागज हमें दिखलाए'। इसी प्रकार 'हमने अजमेर के महलात देखे' और 'उसने अफसरान से मुलाकात की' की जगह कहना चाहिए–'हमने अजमेर के महल देखे' और 'उसने अफसरों से मुलाकात की'। इसके विपरीत 'देहात' और 'औकात' सरीखे कुछ ऐसे शब्द भी हैं जो वास्तव में हैं तो बहुवचन ही, पर हिंदी में जिनका प्रयोग सदा एकवचन में होता है। फारसी में 'देह' का अर्थ है–'गाँव' और 'देहात' उसी का बहुवचन रूप है; पर हिंदी में कहते हैं–'यह शहर है, देहात नहीं है' और 'अनाज देहातों में पैदा होता है, शहरों में नहीं'। इसी प्रकार 'औकात' भी वक्त का बहुवचन है। पर हमारे यहाँ न तो वह इस अर्थ में चलता है, न बहुवचन में माना जाता है। यों, 'वक्त' के बहुवचन 'औकात' का प्रयोग भी पुल्लिंग में ही होना चाहिए, क्योंकि 'वक्त' पुल्लिंग है; पर हम उसका प्रयोग पुल्लिंग में नहीं, बल्कि स्त्रीलिंग में करते हैं; अर्थात् हमने उसका लिंग, वचन और अर्थ सभी बदल दिए हैं। हम उसका प्रयोग 'सामर्थ्य' और 'आर्थिक योग्यता' या 'वैभव' के अर्थ में करते हैं, जैसे–'तुम्हारी क्या औकात है जो तुम हमारे मुँह लगो' और 'अब तो उनकी औकात लाखों की हो गई है', आदि।

बहुवचन दो प्रकार के होते हैं। पहला प्रकार तो वही साधारण बहुवचन का है, जो एक से अधिक चीजों का सूचक होता है। दूसरा प्रकार है–आदरार्थक बहुवचन। हम कहते हैं–'पंडित जी आए', 'भइया गए', आदि। वास्तव में 'पंडित जी' या 'भइया' हैं तो एक ही; फिर भी हम उनके साथ क्रिया के बहुवचनवाले रूप का इसलिए प्रयोग करते हैं कि हम उन्हें बड़ा मानते और उनका आदर करते हैं। इसीलिए हम ऐसे बहुवचन को आदरार्थक बहुवचन कहते हैं। जहाँ किसी बड़े या आदरणीय का जिक्र हो, वहाँ उसके साथ विशेषण, क्रिया आदि के रूप भी बहुवचन में ही होने चाहिए। इस दृष्टि से यह कहना ठीक नहीं है–'श्री नारायणदास कहता है' या 'बा. महेशप्रसाद आया', क्योंकि इन वाक्यों में हम 'श्री' और 'बा.' का प्रयोग करके उन लोगों के प्रति आदर प्रकट करते हैं। यदि इन वाक्यों में 'श्री' या 'बा.' न भी होते, तो भी आदर

के विचार से हमें सर्वनाम, विशेषण और क्रियाएँ बहुवचन में ही रखनी पड़ती हैं। 'उसकी माता जी उससे बहुत प्रेम करती थी' में 'थी' की जगह 'थीं' होना चाहिए; क्योंकि इसमें का 'जी' सम्मान के लिए आया है और जहाँ किसी के आदर का भाव होता है वहाँ बहुवचन का प्रयोग होता है। हाँ, यदि ऊपरवाले वाक्य में 'जी' न हो तो 'थी' का प्रयोग ही ठीक होगा।

13

लिंग

व्याकरण में लिंग वह तत्त्व है, जिससे यह जाना जाता है कि हम जिसके विषय में कोई बात कहते हैं, वह पुरुष–जाति का है या स्त्री–जाति का। यदि हम किसी पुरुष या लड़के के संबंध में कोई बात कहेंगे, तो एक तरह से कहेंगे और किसी स्त्री या लड़की के संबंध में कहेंगे, तो कुछ दूसरी तरह से, जैसे–'राम आता है' और 'कमला जाती है'। यही बात बहुत से पशुओं आदि के संबंध में भी होती है। हम कहते हैं–'घोड़ा दौड़ता है' और 'गाय चरती है'। यह इसीलिए कि 'राम' और 'घोड़ा' पुलिंग है, 'कमला' और 'गाय' स्त्रीलिंग। यह इतनी सीधी और सहज बात है कि इसके संबंध में विशेष कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। पर कठिनता तब होती है, जब हम यह जानते ही नहीं कि जिसके बारे में हम कुछ कह रहे हैं, वह पुरुष–जाति का है या स्त्री–जाति का। पर जब व्याकरण में लिंग का तत्त्व आ जाता है, तब हमें इस प्रकार की कठिनाइयों से बचने के लिए कुछ मार्ग निकालना ही पड़ता है। कुछ पशुओं, पक्षियों आदि के संबंध में हम मान लेते हैं कि उनके नामों का प्रयोग हम केवल पुल्लिग में अथवा केवल स्त्रीलिंग में करेंगे। कौआ, खटमल, मच्छर, कछुआ आदि शब्दों को हमने पुलिंग और चील, मक्खी, चिड़िया, मैना, गिलहरी, तितली आदि को स्त्रीलिंग मान लिया है। इन जीवों में भी स्त्री और पुरुष के भेद होते तो हैं, पर हम उस भेद के फेर में नहीं पड़ते और अपना काम चलाने के लिए उन्हें किसी एक लिंग का मान लेते हैं। यों भले ही हम किसी अवसर पर 'कछुआ' का स्त्रीलिंग 'कछुई' या 'चिड़िया' का पुल्लिग 'चिड़ा' बना लें पर साधारण नियम वही है, जो अभी बतला चुके हैं।

यहाँ तक तो जैसे–तैसे काम चल जाता है। पर इससे आगे एक और ऐसा

क्षेत्र आता है, जिसमें पहुँचने पर हमारे सामने बहुत बड़ी कठिनता आती है। वह क्षेत्र है जड़ पदार्थों का; जैसे–नदी, पहाड़, जंगल, झोंपड़ी, मकान, महल, मंदिर, पत्थर, मिट्टी, सोना, कली, फूल, पेड़, पौधे, लताएँ, आदि। यदि बात यहीं तक रहे, तो भी किसी प्रकार काम चला लिया जाए, पर हमारी बात-चीत के विषय अनंत होते हैं; इसलिए उसमें भाववाचक संज्ञाएँ, अनेक प्रकार के मान और परिमाण, नाप-जोख, तरह-तरह के काम-धंधे, व्यापार आदि हजारों बातें होती हैं। जब व्याकरण में एक बार लिंग का तत्त्व आ जाता है; तब उसका विचार हमें सभी शब्दों के लिए करना पड़ता है। इसीलिए संस्कृत, अंग्रेजी, मराठी आदि भाषाओं में एक तीसरा लिंग और होता है, जिसे नपुंसक लिंग कहते हैं। इस प्रकार उन भाषाओं में यह कठिनता कुछ सहज में दूर हो जाती है, पर वचन और क्रिया के रूपों आदि के झगड़े बढ़ जाते हैं। पर जिन भाषाओं में दो ही लिंग होते हैं, उनमें झगड़े तो कुछ कम रहते हैं, पर शब्दों के लिंग-निर्णय की कठिनता बहुत बढ़ जाती है।

एक बात और है। कुछ भाषाएँ ऐसी हैं, जिनमें लिंग का विचार केवल संज्ञाओं और सर्वनामों के संबंध में होता है; जैसे–अंग्रेजी और जापानी। अंग्रेजी और जापानी में लिंग के कारण विशेषण या क्रिया आदि के रूप नहीं बदलते। बहुत कुछ यही बात हमारे यहाँ की बँगला भाषा में भी है। पर हमारी हिंदी में यह बात नहीं है। हमारें यहाँ बहुत-से विशेषणों और क्रियाओं के रूप भी लिंग के अनुसार बदलते हैं। हमें कहना पड़ता है–'मोटा आदमी' और 'मोटी औरत'। यहीं तक नहीं, हमें 'मोटी अक्ल' से 'मोटा हिसाब' भी लगाना पड़ता है और 'इतनी-सी बात' समझाने के लिए 'इतना-सा प्रयत्न' भी करना पड़ता है। हमारा 'कुरता सिलता है' तो 'कमीज सिलती है'। हमें 'सब विषय समझाने पड़ते हैं' और 'सब बातें बतलानी पड़ती हैं'। इसके सिवा हमारे यहाँ कुछ स्थानीय और प्रादेशिक विलक्षणताएँ भी हैं। जो 'गेंद' और सब जगह पुल्लिंग माना जाता है, वही ब्रज में स्त्रीलिंग माना जाता है। 'दही', 'मोती' आदि कुछ शब्द पुल्लिंग होने पर भी कुछ स्थानों में स्त्रीलिंग माने और बोले जाते हैं। 'तार' और 'गेहूँ' सरीखे कुछ शब्द हैं तो पुल्लिंग ही, पर पंजाब में स्त्रीलिंग माने और बोले जाते हैं। संस्कृत का 'धारा' शब्द है तो स्त्रीलिंग, पर केवल इसके आकारांत होने के कारण पश्चिम में कुछ लोग और विशेषतः उर्दू वाले इसे पुल्लिंग रूप में लिखते

और बोलते हैं, जैसे–'वह नदी के धारा में बह चला'। यही नहीं, हम स्वयं कुछ शब्द एक अर्थ में पुल्लिग और दूसरे अर्थ में स्त्रीलिंग बोलते और लिखते हैं और वास्तव में वे हैं भी वैसे ही। लता के अर्थ में 'बेल' स्त्रीलिंग और प्रसिद्ध फल के अर्थ में पुल्लिग है। 'हम रामायण की टीका पढ़ते हैं' पर 'माथे पर लंबा टीका लगाते हैं'। हम कहते हैं–'रात के समय चाँद निकलता है' और 'मारे खरच के चाँद गंजी हो गई'। हम लड़कियों का नाम तो 'तारा' रखते हैं, पर साथ ही कहते हैं–'आकाश में तारे छिटके हुए थे'। तिस पर जब विदेशी शब्द आकर हमारी भाषा में मिलते हैं, तब उनका लिंग निश्चित करना और भी कठिन होता है। कोई लिखता है–'ट्रक (Truck) आया' और कोई कहता है–'ट्रक आई'। 'पिक्चर' (सिनेमा या चल-चित्र) किसी के लिए पुल्लिग और किसी के लिए स्त्रीलिंग है। इन्हीं सब कारणों ने मिल-जुलकर हिंदी में लिंग की एक ऐसी समस्या खड़ी कर दी है, जिसे सुलझाना बहुत कठिन है। हिंदी भाषा और व्याकरण में जितना पेचीदा विषय लिंग का है, उतना पेचीदा और कोई विषय नहीं है।

पर मनुष्य की बुद्धिमत्ता इसी में है कि वह अपने सामने पड़ने वाली कठिनाइयाँ दूर करे। इसलिए जहाँ तक हो सकता है, कठिनाइयाँ दूर करने का प्रयत्न किया जाता है। अब यह बात दूसरी है कि उसमें हमें पूरी-पूरी सफलता न मिले। लिंग के विषय में हमें यह मानना पड़ता है कि उसके ठीक-ठीक और संतोषजनक नियम अभी तक नहीं बन सके हैं और न भविष्य में जल्दी बनने की कोई आशा दिखाई देती है। इसलिए अब तक इस विषय में जो प्रयत्न हुए हैं, उन्हीं से हमें संतोष करना पड़ता है। पर न तो वे प्रयत्न पूरे हैं और न उन प्रयत्नों से बने हुए नियम ही व्यापक हैं। इसलिए यदि लिंग-संबंधी हमारा यह विवेचन भी अधूरा रह जाए, तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं।

व्याकरण में मुख्य रूप से शब्दों का ही विचार होता है। उसमें शब्दों के द्वारा सूचित होने वाले प्राणियों या पदार्थों आदि का भी विचार होता तो है, पर उसका महत्त्व नहीं होता, जितना स्वयं शब्दों का होता है। ऊपर हमने 'कौवा', 'मक्खी' आदि के जो उदाहरण दिए हैं, वे इसी सिद्धांत के सूचक हैं। शब्दों के लिंग का निर्णय दो बातों से होता है – एक तो उनके रूप से और दूसरे उनके अर्थ से। जैसे–कपड़ा, पैसा, भीड़, लकड़ी आदि ऐसी चीजें हैं, जिनमें स्त्री या पुरुष का कोई भेद होता ही नहीं। कट्टरपन, समझौता, दिन, रात, सवेरा, संध्या

आदि भी इसी प्रकार की चीजें या बातें हैं। ऐसी चीजों के वाचक शब्दों का लिंग उनके रूप के अनुसार निश्चित होता है। जिन प्राणियों में स्त्री और पुरुष का भेद बिलकुल निश्चित या प्रत्यक्ष होता है, उनके सूचक शब्दों का लिंग उनके अर्थ के आधार पर निश्चित होता है, जैसे–लड़का–लड़की, घोड़ा–घोड़ी, आदि। एक बात और है। हमारे यहाँ के अधिकतर शब्द संस्कृत से आए हैं; इसलिए उनके लिंग का निर्णय भी बहुत–कुछ संस्कृत के आधार पर ही होता है। संस्कृत के कुछ तत्सम और हिंदी के कुछ तद्भव शब्द ऐसे भी हैं, जिनका लिंग हिंदी में बदल गया है, जैसे–अग्नि, आत्मा, देह, पवन और शपथ संस्कृत में पुल्लिग हैं, पर हिंदी में इनका प्रयोग स्त्रीलिंग में होता है। तारा, देवता और व्यक्ति शब्द संस्कृत में स्त्रीलिंग होने पर भी हिंदी में पुल्लिग माने जाते हैं। इस प्रकार का अंतर कुछ तद्भव शब्दों में भी है। संस्कृत में 'बिंदु' और 'तंतु' शब्द पुल्लिग हैं, पर हिंदी में उनसे बने हुए 'बूँद' और 'ताँत' शब्द स्त्रीलिंग हैं। सं० 'कर्तन' शब्द तो हिंदी में पुल्लिग ही है, पर उससे बना हुआ हिंदी शब्द 'कतरन' स्त्रीलिंग है। हम पहले कह चुके हैं कि संस्कृत के अधिकतर नपुंसक लिंग शब्द हिंदी में पुल्लिग होते हैं। परंतु वस्तु, पुस्तक, आयु आदि संस्कृत के कुछ ऐसे शब्द भी हैं, जो हिंदी में स्त्रीलिंग माने जाते हैं, पर ऐसे शब्द बहुत थोड़े हैं। संस्कृत में बहुत–से शब्द नपुंसक लिंग हैं; पर हिंदी में उनमें से अधिकतर पुल्लिग ही माने जाते हैं। बहुत–से शब्दों का लिंग समानता के आधार पर भी निश्चित होता है और यह समानता या तो अर्थ की होती है या रूप की। हमारे यहाँ 'गेंद' पुल्लिग है तो हम अंग्रेजी के 'बॉल' को भी पुल्लिग मान लेते हैं, 'प्रार्थना' तथा 'सूचना' स्त्रीलिंग हैं, इसलिए 'अपील' और 'रिपोर्ट' को भी स्त्रीलिंग मान लेते हैं। अतः हम इसे लिंग निश्चित करने का कोई नया या अलग प्रकार नहीं कह सकते।

ये सब तो हुईं सिद्धांत की बातें। अब प्रत्यक्ष प्रयोग की बातें लीजिए। हिंदी के तद्भव शब्दों के संबंध में पहली बात यह है कि जिन शब्दों के अंत में 'आ' होता है, वे प्रायः पुल्लिग माने जाते हैं और जिनके अंत में 'ई' होता है, वे स्त्रीलिंग। चीता, मैदा, पैसा, सोना, लोहा, गन्ना, रायता, बाजरा, चना, आटा, चमड़ा, कटोरा आदि पदार्थ और रोना, गाना, आना, जाना, उठना, बैठना आदि क्रियाएँ या क्रियार्थक संज्ञाएँ पुल्लिग हैं। हिंदी में दूसरी भाषाओं के जो शब्द आते हैं, उनमें से भी अधिकतर इसी नियम के अनुसार पुल्लिग होते हैं। तमाशा,

हैजा, पाजामा, सोडा, कोटा, कमरा आदि पुल्लिंग हैं। स्त्रीलिंग शब्दों में थाली, गाली, मोरी, होली, सीटी, पीठी, रोटी, मिट्टी, सवारी, कमेटी, चिमनी आदि हैं। यही बात गर्मी, सर्दी, गरीबी, अमीरी, उदासी, तैयारी आदि भाववाचक संज्ञाओं के संबंध में भी है। इसी सिद्धांत के अनुसार उर्दूवाले 'चर्चा' को भूल से पुल्लिंग मानते हैं और पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा बिहार वाले 'बिच्छू' का स्त्रीलिंग रूप 'बिच्छी' बना लेते हैं।

पर संस्कृत के तत्सम शब्दों में कुछ और बात है। उनमें जिन शब्दों के अंत में 'आ' होता है, वे प्राय: स्त्रीलिंग होते हैं, जैसे – दया, माया, लज्जा, सभा, कृपा, क्षमा, दशा, भाषा, आशा आदि। संस्कृत की जिन भाववाचक अथवा दूसरी संज्ञाओं के अंत में 'ना' या 'ता' होता है, वे भी स्त्रीलिंग होती हैं, जैसे – प्रार्थना, वंदना, रचना, घटना, याचना, घोषणा, धारणा, उदारता, सुंदरता, नम्रता, गंभीरता, सज्जनता, आदि। इस सिद्धांत के अनुसार संस्कृत का 'देवता' शब्द भी वास्तव में स्त्रीलिंग ही है। पर हिंदी में वह आकारांत होने के कारण पुल्लिंग माना जाता है। अरबी–फारसी के शब्दों में कुछ आकारांत शब्द स्त्रीलिंग हैं और कुछ पुल्लिंग, जैसे–हवा, दवा, बला आदि स्त्रीलिंग हैं और मजा, रोजा, तकाजा आदि पुल्लिंग। हिंदी के तद्भव शब्दों में जो डिबिया, पुड़िया, गुड़िया, बछिया आदि स्त्रीलिंग संज्ञाएँ हैं, वे दूसरे शब्दों से बनी हुई हैं। वे वास्तव में आकारांत हैं भी नहीं, बल्कि उनके अंत में 'इया' है। ऐसे रूपों को अल्पार्थक स्त्रीलिंग रूप कहते हैं। इसी आधार पर 'खड़िया' सरीखे कुछ स्वतंत्र शब्द भी स्त्रीलिंग माने जाते हैं, पर, 'जड़िया' और 'फड़िया' सरीखे शब्द पुरुषवाचक होने के कारण पुल्लिंग ही होते हैं। 'भड़भड़िया', 'बढ़िया' आदि शब्द विशेषण इकारांत होने के कारण दोनों लिंगों में इसी रूप में रहते हैं।

इन सब बातों का सारांश यही है कि जिन शब्दों में किसी प्रकार कोमलता या अर्थ के विचार से लघुता होती है, वे प्राय: स्त्रीलिंग के वर्ग में चले जाते हैं, शेष शब्द प्राय: पुल्लिंग के वर्ग में रहते हैं। संस्कृत और हिंदी के कुछ प्रत्यय भी ऐसे हैं, जिसके लगने पर शब्द स्त्रीलिंग या पुल्लिंग हो जाते हैं। हम पहले बतला चुके हैं कि संस्कृत की जिन भाववाचक संज्ञाओं के अंत में 'ता' प्रत्यय लगा होता है, वे सब स्त्रीलिंग होती हैं, जैसे – मधुरता, उत्तमता, सरलता, आदि। पर संस्कृत व्याकरण के नियम के अनुसार भाववाचक संज्ञाओं के अंत में

इसका दूसरा रूप 'त्व' भी होता है और जिन शब्दों के अंत में यह 'त्व' होता है, वे सब पुल्लिग होते हैं, जैसे – बंधुत्व, प्रभुत्व, आदि। इसी प्रकार हिंदी के जिन शब्दों के अंत में 'वट' या 'आहट' प्रत्यय होता है, वे सब स्त्रीलिंग होते हैं, जैसे – थकावट, जमावट, सजावट, मुस्कुराहट, सुगबुगाहट, आदि और जिन शब्दों के अंत में 'पन' प्रत्यय होता है, वे सब पुल्लिग होते हैं, जैसे – कट्टरपन, बड़प्पन, छुटपन, आदि। ऐसे सभी अवसरों पर शब्दों के रूप के अनुसार, बल्कि यह कहना चाहिए कि उनमें लगे हुए प्रत्यय के अनुसार उनके लिंग का निर्णय होता है।

हम पहले बतला चुके हैं कि हिंदी के जिन तद्‌भव शब्दों के अंत में 'आ' होता है, वे प्रायः पुल्लिग होते और जिनके अंत में 'ई' होती है, वे प्रायः स्त्रीलिंग होते हैं। प्रायः शब्दों के पुल्लिग रूपों से स्त्रीलिंग और स्त्रीलिंग रूपों से पुल्लिग भी इसी सिद्धांत के अनुसार बनते हैं, जैसे – बकरा से बकरी, घोड़ा से घोड़ी, गगरा से गगरी, आदि। इसी सिद्धांत के अनुसार हम आवश्यकता पड़ने पर 'चिट्ठी' से 'चिट्ठा', 'भट्ठी' से 'भट्ठा' और 'पट्टी' से 'पट्टा' सरीखे शब्द भी बना लेते हैं। पर कुछ शब्द ऐसे होते हैं, जिनमें भेद तो केवल 'आ' और 'ई' का होता है; जिनमें स्त्री और पुरुषवाला अंतर नहीं होता और जिनके अर्थ भी एक दूसरे से बहुत भिन्न होते हैं, जैसे – कोठा और कोठी, अँगूठा और अँगूठी, कोड़ा और कोड़ी, सट्टा और सट्टी, आदि। कोठा और चीज है, कोठी और चीज। अँगूठा और चीज है, अँगूठी और चीज। दोनों में कोई संबंध नहीं है। यही बात इस प्रकार के और शब्दों के विषय में भी है। इनमें आपस में पुल्लिग और स्त्रीलिंग वाला भेद नहीं है और अर्थ भी बिलकुल अलग प्रकार के हैं। इस प्रकार के कुछ ऐसे शब्द भी हैं, जिनमें एक अवस्था में तो स्त्रीलिंग और पुल्लिग का भेद होता है और दूसरी अवस्था में नहीं होता, जैसे – कुबड़ा और कुबड़ी। जब तक ये विशेषण

---

1. 'दादा' शब्द के संबंध में एक विलक्षण बात और है। जब इसका प्रयोग 'प्रपिता' या 'पिता के पिता' के अर्थ में होता है, तब तो इसका स्त्रीलिंग रूप 'दादी' होता है; पर जब इसका प्रयोग 'बड़े भाई' के लिए होता है, तब इसका स्त्रीलिंग रूप 'दीदी' हो जाता है, 'दादी' नहीं रहता। इस अर्थ में इसका एक स्थानिक रूप 'दादू' भी होता है।

हैं, तब तक दोनों एक-दूसरे के स्त्रीलिंग या पुल्लिंग हैं; पर जब हम 'कुबड़ी' शब्द का संज्ञा के रूप में और छोटी टेढ़ी-मेढ़ी छड़ी के अर्थ में प्रयोग करते हैं, तब 'कुबड़ा' से उसका वह संबंध नहीं रह जाता, जो विशेषण होने की दशा में होता है। इसी प्रकार 'बिल्ला' और 'बिल्ली' जब तक विशेष प्रकार से प्रसिद्ध जंतु के अर्थ में आते हैं, तब तक तो वे एक दूसरे के स्त्रीलिंग और पुल्लिंग रूप होते हैं; पर जब हम 'बिल्ला' शब्द का प्रयोग कपड़े के उस टुकड़े के रूप में करते हैं, जो लोगों के किसी दल आदि में होने का सूचक चिह्न होता है, तब 'बिल्ली' के साथ उसका कोई संबंध नहीं रह जाता। और जब 'बिल्ली' का प्रयोग एक प्रकार की सिटकिनी के अर्थ में करते हैं, तब 'बिल्ला' के साथ उसका कोई संबंध नहीं रह जाता। सती, सौत, गर्भवती, सधवा और धाय या दाई सरीखे कुछ ऐसे शब्द भी हैं, जो वस्तुतः स्त्रियों के लिए ही हैं और जिनका पुल्लिंग रूप नहीं होता।

हम पहले कह चुके हैं कि रिश्ते-नाते या संबंध के सूचक शब्दों में लिंग के नियम कुछ विलक्षण ही हैं। नाना, मामा, चाचा, दादा आदि के स्त्रीलिंग रूप नानी, मामी, चाची, दादी आदि तो ठीक हैं; पर 'पिता' और 'माता' को एक-दूसरे का पूरक लिंग रूप मानना ठीक नहीं है। वास्तव में न तो 'पिता' का स्त्रीलिंग रूप होता है, न 'माता' का पुल्लिंग रूप, क्योंकि दोनों शब्द स्वतंत्र हैं। इसी प्रकार 'भाई' और 'बहन' को भी स्वतंत्र मानना चाहिए। 'भाई' का स्त्रीलिंग रूप 'भाभी' और 'बहन' का पुल्लिंग रूप 'बहनोई' मानना भी ठीक नहीं है। ये सब शब्द अलग-अलग संबंधों के सूचक हैं। यदि हम 'साला' का स्त्रीलिंग रूप 'साली' मान लें, तो व्याकरण की दृष्टि से यह ठीक तो हो सकता है; पर 'साली' का पुल्लिंग 'साढ़ू' या 'साला' का स्त्रीलिंग 'सलहज' मान लेना ठीक न होगा। तात्पर्य यह कि संबंध या रिश्ता बतलाने वाले कुछ शब्द ऐसे भी हैं, जिनका विरोधी रूप नहीं होता और जिनके लिंग का निर्णय उन व्यक्तियों के स्त्री या पुरुष होने पर आश्रित है, जिनके सूचक वे शब्द होते हैं। कुछ जीव-जंतुओं के वाचक शब्द ऐसे हैं तो पुरुष और स्त्री दोनों जातियों के लिए प्रचलित हैं। जब ऐसे शब्दों में लिंग का भेद सूचित करना होता है, तब उनके पहले 'नर' और 'मादा' या 'पुरुष' और 'स्त्री' शब्द लगाए जाते हैं, जैसे नर मच्छर और मादा मच्छर या पुरुष मछली और स्त्री मछली। हाँ, 'मछली' का एक पुल्लिंग रूप

'मच्छ' भी होता है। कुछ शब्द ऐसे हैं तो पुल्लिग और स्त्रीलिंग के अलग-अलग वाचक होते हैं और जिनके रूप भी अलग-अलग होते हैं, जैसे वर और वधू या साहब और मेम आदि। कुछ ऐसे यौगिक शब्द भी हैं जो पुल्लिग और स्त्रीलिंग शब्दों के योग से बने हैं, जैसे - दाल-भात, रसोई-घर, लड़ाई-झगड़ा आदि। इनमें दाल, रसोई और लड़ाई तो स्त्रीलिंग है और भात, घर और झगड़ा पुल्लिग। ऐसे शब्दों के लिंग अंतिम शब्द के लिंग के अनुसार माने जाते हैं; अर्थात् ये तीनों और इसी प्रकार के दूसरे ऐसे यौगिक शब्द, जिनके अंत का शब्द पुल्लिग हो, सदा पुल्लिग ही होते हैं। इसी सिद्धांत के अनुसार पाठशाला और धर्मशाला सरीखे शब्द स्त्रीलिंग होते हैं; क्योंकि इनके अंत का 'शाला' शब्द स्त्रीलिंग है। इसके सिवा प्रायः सभी पर्वतों के नाम पुल्लिग और सभी नदियों के नाम स्त्रीलिंग होते हैं। यह बात दूसरी है कि नदियों में से कुछ को उनके विशाल आकार आदि के कारण हम 'नद' मान लें और इस प्रकार वे पुल्लिग वर्ग में आ जाएँ। जैसे - भारत में सोन, ब्रह्मपुत्र और सिंधु नद हैं। इसी प्रकार अधिकतर वृक्षों के नाम पुल्लिग और अधिकतर लताओं के नाम स्त्रीलिंग होते हैं। 'पृथ्वी' को छोड़कर बाकी सब ग्रहों के नाम पुल्लिग और अधिकतर नक्षत्रों के नाम स्त्रीलिंग हैं। वारों के नाम पुल्लिग और तिथियों के नाम स्त्रीलिंग होते हैं। ये सब ऐसी मोटो बातें हैं, जिनसे लिंग का निर्णय करने में बहुत सहायता मिल सकती है।

लिंग के संबंध में हमने अब तक जितनी बातें कही हैं, वे सब प्रायः संज्ञाओं के संबंध की ही हैं। अब हम संक्षेप में कुछ बातें विशेषण शब्दों के लिंग के संबंध में भी बतला देना चाहते हैं। हिंदी में बहुत-से तद्भव विशेषण ऐसे ही हैं, जिनके पुल्लिग और स्त्रीलिंग दोनों रूप अलग-अलग होते हैं। हम कहते हैं- नया कपड़ा, नई पुस्तक, लंबा आदमी, लंबी छड़ी और नीला आकाश, नीली स्याही आदि। पर कुछ विशेषण ऐसे भी हैं जिनका रूप दोनों लिंगों में एक-सा रहता है, जैसे - बढ़िया घर और बढ़िया पुस्तक। पर जब ऐसे विशेषणों के साथ 'सा' आता है, तब उसका रूप लिंग के अनुसार बदल जाता है, जैसे - बढ़िया-सा खिलौना और बढ़िया-सी किताब। 'काला', 'पीला' और 'हरा' के तो स्त्रीलिंग रूप 'काली', 'पीली' और 'हरी' होते हैं, पर 'लाल' का रूप दोनों लिंगों में ज्यों का त्यों रहता है। संस्कृत के तत्सम विशेषणों में प्रायः सभी ऐसे हैं, जिनके रूप

स्त्रीलिंग में मधुर का मधुरा, ललाम का ललामा और नवीन का नवीना हो जाता है। पर हिंदी गद्य में प्रायः इन स्त्रीलिंग रूपों का व्यवहार नहीं होता, पुल्लिग रूपों से ही सब जगह काम चलाया जाता है। इसी प्रकार सुखी, श्रेष्ठ, उत्तम आदि विशेषण भी दोनों लिंगों में प्रायः समान रूप से काम में आते हैं। संस्कृत में पुल्लिग विशेषणों और संज्ञाओं के स्त्रीलिंग रूप बनाने के कुछ और भी नियम हैं। उसमें प्रदर्शन से प्रदर्शनी और प्रदर्शी से प्रदर्शिनी, मोहन से मोहनी और मोही से मोहिनी, सुंदर से सुंदरी और रूपी से रूपिणी बनता है। कुछ शब्दों के दोहरे स्त्रीलिंग रूप भी होते हैं, जैसे – कृशोदर का कृशोदरा और कृशोदरी, शूद्र का शूद्रा और शूद्री, आदि। पर हिंदी में प्रायः दोनों लिंगों में संस्कृत के पुल्लिग विशेषण रूपों का ही प्रयोग होता है, जैसे – सुंदर नदी, सुंदर पुस्तक, नवीन प्रासाद, नवीन अट्टालिका, आदि। हाँ, 'परीक्षा' शब्द के पहले लगने पर प्रथम, मध्यम और उत्तम का रूप प्रथमा, मध्यमा और उत्तमा हो जाता है। संस्कृत के कुछ विशेषण ऐसे भी हैं, जो विशेषण के सिवा संज्ञा भी प्रयुक्त होते हैं, जैसे – 'चंचल' विशेषण का स्त्रीलिंग रूप तो 'चंचला' है ही, पर यही 'चंचला' शब्द 'बिजली' का भी नाम (संज्ञा) है। इसी प्रकार 'सुंदरी' का अर्थ 'सुंदर स्त्री' होता है।

लिंग के संबंध में ध्यान रखने की एक और बात है कि जिन अवसरों पर लिंग का कोई स्पष्ट विचार या प्रश्न नहीं होता, उन अवसरों पर सदा पुल्लिग का ही व्यवहार होता है। उदाहरण के लिए हम कहते हैं–'हम नहीं जानते कि वह पुरुष जाति का है या स्त्री जाति का'। यदि वास्तविक दृष्टि से देखा जाए तो हमें कहना चाहिए–'हम नहीं जानते कि वह पुरुष जाति का है या स्त्री जाति की', क्योंकि 'वह' का प्रयोग पुरुष और स्त्री दोनों के लिए होता है। यदि 'वह' पुरुष हो तो हम कहते हैं–'वह पुरुष जाति का है' और 'वह' स्त्री हो तो हम कहते हैं–'वह स्त्री जाति की है'। पर जहाँ हम जानते ही नहीं कि वह पुरुष है या स्त्री, वहाँ हम इसी पुल्लिग वाली प्रवृत्ति के कारण कहेंगे–'हम नहीं जानते कि वह पुरुष जाति का है अथवा स्त्री जाति का।' ऐसे अवसरों पर 'स्त्री जाति की' कहना ठीक नहीं है। इसी प्रकार का एक और वाक्य लीजिए–'हम जिसकी कल्पना करें, वह भी इसी में आ जाता है।' वहाँ 'जिस' किसी विचार या पदार्थ का भी बोधक हो सकता है और किसी बात या वस्तु का भी; अर्थात् उसके

अंतर्गत पुल्लिग शब्द भी हो सकते हैं और स्त्रीलिंग शब्द भी। पर हम यही कहते हैं–'हम जिसकी कल्पना करें, वह भी इसी में आ जाता है।' यह नहीं कहते – 'आ जाती है'।

लिंग के संबंध में हमें सदा बहुत ही सचेत रहना चाहिए। कारण यह है कि भाषा में लिंग–संबंधी भूलें सबसे बुरी समझी जाती हैं। किसी को इस प्रकार की भूलें करते देखकर लोग प्रायः कह बैठते हैं–'उँह ! उन्हें तो स्त्रीलिंग और पुल्लिग तक का ज्ञान नहीं है'; अर्थात् हिंदी में लिंग–संबंधी भूल ही भद्दी मानी जाती है। इसलिए हमें हर शब्द के संबंध में निश्चित रूप से जान लेना चाहिए कि वह स्त्रीलिंग है या पुल्लिग। कभी–कभी हमें कुछ ऐसे शब्द मिलते हैं, जिनका प्रयोग कुछ लोग एक लिंग में करते हैं और कुछ लोग दूसरे लिंग में। ऐसे शब्दों को कोश और व्याकरण में प्रायः उभयलिंगी कहा जाता है। पर यदि विचारपूर्वक देखा जाए तो ऐसे शब्द बहुत ही थोड़े होंगे। प्रायः होता यही है कि कुछ शब्दों के लिंग के संबंध में लोग भूल करते हैं और उनके संबंध में कोश तथा व्याकरण बनाने वाले कुछ निश्चय न कर सकने के कारण ही उन्हें 'उभयलिंगी' कह देते हैं। इसलिए प्रत्येक शब्द का ठीक लिंग जानना बहुत आवश्यक है। 'उसकी लालच बढ़ती जा रही थी', 'जाड़े की मौसम में', 'गाड़ी की पहिया टूट गई' और 'तुम्हारी झूठ से तो मैं घबरा गया' सरीखे प्रयोग इसीलिए अशुद्ध और भद्दे हैं कि इनमें 'लालच', 'मौसम', 'पहिया' और 'झूठ' शब्दों का प्रयोग पुल्लिग की जगह स्त्रीलिंग में हुआ है। जब किसी संज्ञा के पहले दो या तीन विशेषण होते हैं, तब भी लोग किसी एक विशेषण के लिंग के संबंध में भूल कर जाते हैं। 'ससा और बढ़िया कुरता' कहना तो ठीक है, पर 'सस्ता और बढ़िया धोती' कहना ठीक नहीं है। इसमें 'धोती' के विचार से 'सस्ता' की जगह 'सस्ती' होना चाहिए।

हम पहले बतला चुके हैं कि लिंग के कारण विशेषणों में ही नहीं, बल्कि क्रियाओं तक में विकार होता है। इसका आशय यही है कि किसी शब्द के लिंग का प्रभाव सारे वाक्य की बनावट पर पड़ता है। इसीलिए 'उनकी संतान युरोप में जाकर बस गए' और 'उन्होंने ऐसी बात कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था' सरीखे वाक्य अशुद्ध होते हैं। इनमें 'बस गए' की जगह 'बस गई' और 'सोचा था' की जगह 'सोची थी' होना चाहिए। 'उन्होंने आँखें फेरना शुरू ही नहीं की,

बल्कि उनके मार्ग में बाधाएँ खड़ा करना भी आरंभ किया' भी इस प्रकार का वाक्य है, जो उर्दू वालों की एक शाखा की दृष्टि से शुद्ध होने पर भी हिंदी वालों की दृष्टि में अशुद्ध है। इसमें 'शुरू नहीं की' की जगह 'शुरू नहीं किया' और 'खड़ा करना' की जगह 'खड़ी करना' होना चाहिए। आप पूछ सकते हैं कि जब 'आँखें फेरना' शुद्ध है, तब 'बाधाएँ खड़ा करना' क्यों अशुद्ध है? इसका उत्तर यह है कि 'आँखें फेरना' एक पद है, जिसका अर्थ है–आँखें फेरने का काम। जैसा कि हम पहले क्रिया के प्रकरण में बतला चुके हैं, या 'फेरना' क्रिया होने पर भी क्रियार्थक संज्ञा के रूप में आया है। पर 'बाधाएँ खड़ी करना' इसलिए शुद्ध है कि 'खड़ा' विशेषण है, उसका स्त्रीलिंग रूप 'खड़ी' होना चाहिए।

इसी प्रकार 'इस काम में देर लगना स्वाभाविक थी' और 'उन्होंने उनसे भेंट करना चाही' सरीखे प्रयोग भी अशुद्ध हैं। इनमें से पहले वाक्य में 'थी' की जगह 'था' और दूसरे वाक्य में 'चाही' की जगह 'चाहा' होना चाहिए। 'अच्छे साहित्य का प्राण तो सरसता ही हो सकता है' में 'हो सकता है' की जगह 'हो सकती है' तो होना ही चाहिए; इस वाक्य में एक और भूल यह है कि 'प्राण' का प्रयोग एकवचन में हुआ है (जैसा कि हम पहले 'वचन' के प्रकरण में कह चुके हैं; 'प्राण' का प्रयोग सदा बहुवचन में होना चाहिए।); और इसीलिए वाक्य का शुद्ध रूप होगा–'अच्छे साहित्य के प्राण तो सरसता ही हो सकते हैं', क्योंकि होनेवाली चीज 'सरसता' है न कि 'प्राण'। उक्त वाक्य का उत्तम रूप होगा–'सरसता ही अच्छे साहित्य के प्राण होती है'। 'यह भारत सरकार स्वतंत्र संस्थान नहीं था' भी इसलिए अशुद्ध है कि इसमें कर्ता 'भारत सरकार' है, 'स्वतंत्र संस्थान' नहीं। इसलिए वाक्य का शुद्ध रूप होगा–'यह भारत सरकार स्वतंत्र संस्थान नहीं थी'। यद्यपि 'संस्थान' के तुरंत बाद 'थी' का प्रयोग खटकता है, पर है वही शुद्ध। हाँ, यदि हम इस वाक्य की खटक मिटाना चाहें तो कह सकते हैं–'यह भारत सरकार स्वतंत्र संस्थान के रूप में नहीं थी'।

यह तो सभी लोग जानते हैं कि हिंदी में परसर्ग का स्त्रीलिंग रूप 'की' होता है; पर कभी-कभी ऐसा होता है कि 'का' या 'के' और 'की' के अंतर के कारण ही वाक्य के अर्थ में भी बहुत अतंर आ जाता है, जैसे–'एक प्रकार की मोतियों की माला' और 'एक प्रकार के मोतियों की माला'। पहला वाक्य 'माला' के प्रकार का सूचक है और वह बतलाता है कि मोतियों की मालाएँ अनेक प्रकार

की होती हैं और हम उनमें से एक प्रकार की 'माला' का जिक्र कर रहे हैं। पर दूसरे वाक्य से प्रकट होता है कि 'मोती' कई प्रकार के होते हैं, और उनमें से एक प्रकार के 'मोतियों' की माला का हम जिक्र कर रहे हैं।

हम पहले बतला चुके हैं कि कुछ अवसरों पर वचन का ठीक ध्यान न रखने के कारण मुहावरे तक अशुद्ध हो जाते हैं। यही बात लिंग के संबंध में भी है। यदि किसी मुहावरे में हम लिंग–संबंधी कोई सामान्य–सी भी भूल कर जाएँ, तो या तो उसका अर्थ ही बदल जाएगा या मुहावरा ही अशुद्ध हो जाएगा। असल मुहावरा है–नाक में दम कर देना। हम कहते हैं–'उन्होंने हमारा नाक में दम कर दिया।' वस्तुतः यहाँ 'हमारा' विशेषण 'नाक' की नहीं, बल्कि 'दम' की विशेषता बतलाता है। इस बात को न समझने के कारण कुछ लोग लिखते हैं– 'उन्होंने हमारी नाक में दम कर दिया', जो ठीक नहीं। यह भ्रम 'नाक' स्त्रीलिंग संज्ञा के पहले 'हमारा' विशेषण के कारण हुआ है। परंतु तथ्य यह है कि मुहावरे के स्वरूप में परिवर्तन नहीं होता। अतः हमारा का प्रयोग विवशतावश नाक के पहले करना पड़ता है।

14

परसर्ग

हम कहते हैं–'राम ने कृष्ण की पुस्तक चोरी से गोपाल को दे दी। बात खुलने पर तीनों आपस में लड़ पड़े।' इन वाक्यों में जो 'ने', 'की', 'से', 'को', 'पर' और 'में' हैं, वे परसर्ग हैं। परसर्गों का काम वाक्य के एक शब्द का संबंध वाक्य के किसी दूसरे शब्द से स्थापित करना होता है। यदि वाक्य से परसर्ग हटा दिए जाएँ तो विभिन्न शब्दों में होनेवाले संबंधों को हम ठीक से जान न पाएँगे; अर्थात् परसर्गों का प्रयोग न हो तो वाक्यों का कुछ अर्थ ही न रह जाएगा। ऊपर लिखे वाक्य में से परसर्ग हटा दें तो उसका रूप होगा–'राम कृष्ण पुस्तक चोरी गोपाल दे दी।' वैसे तो इस वाक्य का कुछ अर्थ नहीं। परंतु यदि खींच-तानकर अर्थ लगाना भी चाहें तो इसके कई अर्थ हो सकेंगे। इसका यह अर्थ हो सकेगा कि राम को कृष्ण की पुस्तक चोरी करके गोपाल ने दे दी; या इसके सिवा इसी तरह का कुछ और अर्थ भी हो सकता है। वाक्य के शब्दों का पारस्परिक संबंध बतलाने और अर्थ स्पष्ट करने के लिए परसर्गों की आवश्यकता होती है। प्राय: परसर्गों के बिना वाक्य भद्दे और अशुद्ध होते हैं, जैसे–'कुछ समझ नहीं आता' और 'आप दोपहर किसी समय आएँ' सरीखे वाक्य भद्दे भी होते हैं और अशुद्ध भी। ये वाक्य तभी अच्छे और शुद्ध होंगे, जब हम कहेंगे–'कुछ समझ में नहीं आता' और 'आप दोपहर को किसी समय आएँ'। परसर्गों का अशुद्ध प्रयोग करने से भी यही बात होती है। यदि हम कहें–'हम आपको घर से पुस्तक पढ़ते हैं' तो आप कुछ भी मतलब न समझ सकेंगे। हमारी बात का मतलब तो तभी समझ में आएगा, जब हम कहेंगे–'हम आपके घर में पुस्तक पढ़ते हैं।' फिर एक बात और है, यदि हम कहें–'पुस्तक आपकी का मूल्य मैं दे चुका हूँ' तो भी वाक्य भद्दा और अशुद्ध होगा, क्योंकि इस वाक्य

में 'पुस्तक' का संबंध बतलाने वाला 'का' परसर्ग 'आपकी' के बाद आया है। वाक्य का सुंदर और शुद्ध रूप होगा–'आपकी पुस्तक का मूल्य मैं दे चुका हूँ।' इन सब बातों का अभिप्राय यही है कि वाक्यों में परसर्ग होने चाहिए और ठीक स्थानों पर होने चाहिए।

ये तो हुए परसर्ग के स्वतंत्र रूप; पर इनके सिवा इनका एक दूसरा रूप भी है, जिसे विभक्ति कहना ही ठीक होगा। वह रूप कुछ सर्वनामों के साथ गड्डमड्ड हो जाता है, जैसे–'हमारा' वास्तव में 'हमका' का वाचक है, 'तुम्हारा', 'तुमका' का, 'तुम्हें' 'तुमको' का और 'उसे' 'उसको' का। हमारा, तुम्हारा, तुम्हें, उसे आदि में इस प्रकार प्रत्यय के रूप में लगे हैं। परसर्ग का स्वतंत्र अस्तित्व रहता है, परंतु प्रत्यय शब्द में मिल जाता है। प्रत्यय रूप में प्रयुक्त परसर्ग को विभक्ति कहते हैं।

परसर्ग के संबंध में ध्यान रखने की कई बातें हैं। पहली बात तो यह है कि इनमें से 'का' को छोड़कर और किसी परसर्ग का रूप नहीं बदलता। 'में', 'ने', 'से', 'को' और 'पर' सदा अपने इन्हीं रूपों में रहते हैं। केवल 'का' का स्त्रीलिंग रूप 'की' और बहुवचन पुल्लिंग रूप 'के' हो जाता है। इनमें से 'पर' के संबंध में एक विलक्षण बात यह भी है कि इसका विरोधी भाव सूचित करनेवाला 'तले' शब्द परसर्ग नहीं है। यदि हम कहें–'चिड़िया पेड़ पर बैठी है' तो इसमें का 'पर' तो परसर्ग है; पर यदि हम कहें–'चिड़िया पेड़ तले बैठी है' तो इसमें का 'तले' परसर्ग नहीं है। ('पर' भी 'परंतु' के अर्थ में समुच्चयबोधक या योजक है।) दूसरी बात यह है कि परसर्ग कारक-चिह्न कहलाते हैं। व्याकरण में कारक का प्रकरण आप पढ़ चुके होंगे। ये सब परसर्ग अलग-अलग कारकों के चिह्न हैं और इनमें से कुछ परसर्ग एक ही नहीं, बल्कि दो-दो कारकों के चिह्न हैं; जैसे – 'को' कर्मकारक का भी चिह्न है और संप्रदानकारक का भी। इसी प्रकार 'से' करणकारक का भी चिह्न है और आपादानकारक का भी। कारकों में एक संबोधनकारक भी है और उसके चिह्न 'हे', 'हो', 'अरे', 'अजी' आदि हैं। पर इन चिह्नों की गिनती परसर्गों में नहीं होती, अवयवों में होती है। और कुछ लोग तो संबोधनकारक को अलग कारक भी नहीं मानते; उसे कर्ताकारक के ही अंतर्गत रखते हैं।

अलग–अलग परसर्ग अलग–अलग अवसरों के लिए होते हैं और अलग-अलग स्थितियों के सूचक होते हैं। किसी 'से' प्रेम किया जाता है और किसी 'पर' प्रेम प्रकट किया जाता है। दवा की सुई या इंजेक्शन शरीर 'में' लगाया जाता है और मल्हम शरीर 'पर' लगाई जाती है। हम कहते हैं–'इस पुस्तक के चौथे पृष्ठ में बहुत–सी भूलें हैं' और 'इस पत्र के दूसरे पृष्ठ पर यह लिखा है'। हम 'व्यापार से धन कमाते हैं' और 'हमें व्यापार में लाभ होता है'। हम कहते हैं–'इस बोरे में दो मन गेहूँ हैं' और 'गेहूँ का यह बोरा दो मन का है'। इसी प्रकार 'वह देखने पर ठीक जान पड़ा' और 'वह देखने में ठीक जान पड़ा' में भी बहुत अंतर है। इनमें से पहले वाक्य का आशय यह होगा कि जब हमने उसे देखा, तब वह ठीक जान पड़ा। पर दूसरे वाक्य का आशय यह है कि ऊपर से देखने पर वह ठीक जान पड़ा; चाहे उसके अंदर कुछ ऐसे दोष रहे हों, जो ऊपर से देखने पर न दिखाई दिए हों। 'वह उन लोगों से मिल गया है' और 'वह उन लोगों में मिल गया है' इसमें से पहले वाक्य का अर्थ यह है कि वह आकर उन लोगों से भेंट कर गया है और दूसरे वाक्य का अर्थ यह है कि वह उन लोगों के दल या पक्ष में सम्मिलित हो गया है। इसी प्रकार के अंतर 'किसी के नाम का', 'किसी के नाम पर' और 'किसी के नाम से' में भी है। हम अपने लाभ के लिए किसी के नाम 'का' उपयोग करते हैं और अपने नाम 'की' अँगूठी (या मोहर) बनवाते या खुदवाते हैं। हम किसी के नाम 'पर' कोई मंदिर या मकान बनवाते हैं और किसी के नाम 'से' किसी दुकानदार से कोई चीज जाकड़ या उधार लाते हैं। वाक्य में परसर्ग होने और न होने से भी कुछ ऐसे ही अंतर होते हैं। 'शत्रुओं ने नगर पर चार टन गोले बरसाए' का अर्थ यह है कि नगर पर जितने गोले बरसे थे, वह सब तौल में चार टन थे। 'शत्रुओं ने नगर पर चार टन के गोले बरसाए' का अर्थ यह है कि नगर पर जो गोले बरसे थे, उनमें से हर एक तौल में चार टन था। तात्पर्य यह कि हमें सदा इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि कहाँ किस परसर्ग का प्रयोग होना चाहिए, कहाँ परसर्ग का प्रयोग नहीं करना चाहिए और कहाँ परसर्ग का प्रयोग अवश्य करना चाहिए।

कुछ अवस्थाएँ ऐसी होती हैं, जिनमें कुछ परसर्गों का प्रयोग न करना ही अच्छा माना जाता है। हम कहते हैं–'नौकर के हाथ पुस्तक भेज दो' और 'इतना परिश्रम करने पर भी हमारे हाथ कुछ भी न आया'। यदि ध्यानपूर्वक

देखा जाए तो जान पड़ेगा कि वास्तव में 'नौकर के हाथ से पुस्तक भेज दो' और '...हमारे हाथ में कुछ भी न आया' कहना ही ठीक है। फिर भी हम ऐसे अवसरों पर 'से', 'को' और 'में' का प्रयोग नहीं करते। कारण यह है कि व्यवहार में आते-जाते ऐसे अवसरों के परसर्गों का लोप हो गया है। हम कभी यह नहीं कहते-'उसने पत्थर को फेंका' या 'उसने मकान को बनवाया' या 'उसने पुस्तक को भेजा'। ऐसे प्रयोग व्याकरण के विचार से शुद्ध होने पर भी बहुत भद्दे माने जाते हैं, और इसीलिए अच्छे लोग ऐसे प्रयोग नहीं करते। 'वह पत्र लिखने को बैठा', 'हम बड़े कष्टों को सहते हैं', 'हमने अपने स्थान को न छोड़ा' और 'वे अनुचित उपायों को काम में लाते हैं' सरीखे प्रयोग बहुत भद्दे होते हैं। इनके बदले हमें कहना चाहिए-'वह पत्र लिखने बैठा', 'हम बड़े-बड़े कष्ट सहते हैं', 'हमने अपना स्थान न छोड़ा' और 'वे अनुचित उपाय काम में लाते हैं' या 'वे अनुचित उपायों का प्रयोग करते हैं'। 'इस कारण से हमें चिंता हो रही है' की जगह 'इस कारण हमें चिंता हो रही है' कहना ही अच्छा माना जाता है। कुछ ऐसे ही कारणों से 'उसकी', 'हमको' और 'तुमको' के बदले 'उसे', 'हमें' और 'तुम्हें' रूप ही अधिक अच्छे समझे जाते हैं।

हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि कभी-कभी 'को' के बे-ठिकाने प्रयोग से वाक्य भ्रामक भी हो जाता या हो सकता है, जैसे-'गाय को पहले सानी-भूसा करके तब वह पानी पिएगा' का यह भी अर्थ हो सकता है कि वह 'गाय' को ही 'सानी-भूसा' कर (या बना) डालेगा। यदि 'को' की जगह 'का' या 'के लिए' हो तो वाक्य का ऐसा अर्थ न निकल सकेगा। पर कुछ अवस्थाएँ ऐसी भी होती हैं, जिनमें 'को' अपना विशेष अर्थ रखता है और इसीलिए यदि उसकी जगह कोई और परसर्ग रख दिया जाए तो वाक्य का अर्थ बदल जाता है, जैसे-'नई सरकार को आजाद सरकार घोषित करने की माँग' का अर्थ होगा-स्वयं नई सरकार ही आजाद सरकार बना दी जाए। पर 'नई सरकार से आजाद सरकार घोषित करने की माँग' का अर्थ होगा-नई सरकार से कहा जाता है कि वह आजाद सरकार की घोषणा करे, और 'नई सरकार की आजाद सरकार ही स्वयं अपने आपको (अथवा किसी और सरकार को) आजाद सरकार बनवाना चाहती है।

परसर्ग के संबंध में ध्यान रखने की बात यह भी है कि जब किसी

आकारांत पुल्लिंग शब्द के उपरांत कोई परसर्ग आता है, तब शब्द के अंत का 'आ' बदलकर 'ए' हो जाता है। उदाहरण के लिए 'बँगला' शब्द लीजिए। इसका एक अर्थ है–एक विशेष प्रकार का रहने का घर और इस अर्थ में यह पुल्लिंग है। इसका दूसरा अर्थ है–बंगाल में बोली जानेवाली भाषा, और इस अर्थ में यह शब्द स्त्रीलिंग है। जब हम कहते हैं 'बँगले में बहुत–सी अच्छी–अच्छी पुस्तकें हैं', तब लोग समझ लेते हैं कि 'बँगले' से हमारा अभिप्राय एक विशेष प्रकार की इमारत से है। पर जब हम कहते हैं–'बँगला में बहुत–सी अच्छी–अच्छी पुस्तकें हैं, तब लोग समझते हैं कि हमारा अभिप्राय बंगाल में प्रचलित भाषा से है। इसी दृष्टि से हम कभी यह नहीं कहते–'हम सवेरा से यहाँ बैठे हैं'; सदा 'सवेरे से' कहते हैं। पर हम 'संध्ये से' इसलिए नहीं कहते कि 'संध्या' स्त्रीलिंग है और इसीलिए 'संध्या से' ही कहना ठीक है। इस सिद्धांत का ध्यान उन यौगिक शब्दों के प्रयोग में भी रखना पड़ता है, जिनके पहले शब्द आकारांत और पुल्लिंग होते हैं, जैसे – छापाखाना, अच्छापन, गुंडाशाही, आदि। यह कहना ठीक नहीं है– 'यह पुस्तक उसी छापाखाने में छपी है' या 'इसके अच्छापन का मुझ पर बहुत प्रभाव पड़ा' या 'वह उनकी गुंडाशाही का प्रमाण था'। वाक्यों में 'छापाखाना', 'अच्छापन' और 'गुंडाशाही' की जगह क्रम से 'छापेखाने', 'अच्छेपन' और 'गुंडेशाही' होना चाहिए। ध्यान रहे कि नगरों, देशों के नाम की सूचक आकारांत पुल्लिंग संज्ञाएँ परसर्ग के आने पर एकारांत नहीं होतीं। 'मेरा मित्र कोलकाता से आया है', 'हम लोग पटना में रहते हैं', 'राजपूताना के लोग मेहनती होते हैं' आदि वाक्यों में कोलकाता, पटना, राजपूताना अपने समान रूप में ही बने रहते हैं।

इसी प्रकार के कुछ और अवसर हैं, जिनमें परसर्गों से पहले आनेवाली संज्ञाओं आदि के रूप कुछ बदल जाते हैं। 'वहाँ पाँच स्त्रियाँ और एक बालक की मृत्यु हो गई' कहना ठीक नहीं है। होना चाहिए–'वहाँ पाँच स्त्रियों और एक बालक की मृत्यु हो गई।' इसी प्रकार–'उन्हें चार घोड़े और एक बैल का दाम मिला' की जगह 'उन्हें चार घोड़ों और एक बैल का दाम मिला' होना चाहिए। नहीं तो वाक्य का अर्थ हो जाएगा–उन्हें चार घोड़े मिले और एक बैल का दाम मिला।

वाक्यों की बनावट पर और भी कई तरह से परसर्गों का प्रभाव पड़ता है।

कभी-कभी तो लोग ऐसे अवसरों पर परसर्गों का प्रयोग कर जाते हैं, जहाँ उनकी कोई आवश्यकता नहीं होती। कभी-कभी ऐसे अवसरों पर भी परसर्ग का प्रयोग नहीं करते, जहाँ उनकी आवश्यकता होती है। इन कारणों से वाक्य प्राय: अशुद्ध और भद्दे हो जाते हैं। पहले हम कुछ ऐसे प्रयोग बतलाते हैं, जिनमें लोग व्यर्थ परसर्ग लगाते हैं।

हम पहले बतला चुके हैं कि कुछ अवस्थाओं में परसर्ग वास्तव में प्रयोग होना चाहिए, पर व्यवहार में प्राय: उन अवसरों पर उनका प्रयोग नहीं होता; अर्थात् कुछ अवसरों के लिए परसर्ग का लोप हो गया है। उन्हीं से मिलते-जुलते कुछ और अवसर हैं, जिनमें परसर्ग के प्रयोग से वाक्य में भद्दापन आ जाता है। ऐसे अवसरों पर यदि वाक्य का रूप जरा-सा बदल दिया जाए, तो व्यर्थ के प.सर्ग निकल सकते हैं और वाक्य का भद्दापन दूर हो सकता है। 'हमको बहुत-सी बातों को सीखना पड़ता है' कहने से 'हमको बहुत-सी बातें सीखनी पड़ती हैं' कहना अधिक हलका और सुंदर है। इनमें से पहले वाक्य में दो 'को' आए हैं और दूसरे वाक्य में एक। इसी प्रकार 'इस कार्य को करते हुए हमको बहुत दिन हो गए' की जगह कहना चाहिए 'यह कार्य करते हुए हमें बहुत दिन हो गए' और 'इसके कहने की आवश्यकता नहीं' की जगह कहना चाहिए–'यह कहने की आवश्यकता नहीं'।

कुछ लोग एक ही वाक्य में किसी परसर्ग का कई बार प्रयोग कर जाते हैं, जिससे वाक्य भद्दा हो जाता है, जैसे–'मातृभूमि को स्वतंत्र करने को चलो' में दूसरा 'को' बिलकुल व्यर्थ है। इसी प्रकार–'उनको उस पुस्तक को भेजने को लिखा गया था' और 'मुझको इस बात को बतलाने को कहा गया था' में तीन-तीन बार 'को' आया है। ऐसे अवसरों पर, जैसा कि हम ऊपर बतला चुके हैं, यदि हम 'इसको', 'मुझको' और 'उनको' जगह 'हमें', 'इसे' और 'उन्हें' रखें तो एक 'को' अनायास निकल जाता है। दूसरी बात यह है कि 'उस पुस्तक को भेजने को लिखा गया था' और 'इस बात को बतलाने को कहा गया था' की जगह यदि हम कहें–'वह पुस्तक भेजने को लिखा गया था' और 'यह बात बतलाने को कहा गया था' तो वाक्यों में से एक और व्यर्थ का 'को' निकल जाता है; अर्थात् हम कह सकते हैं–'उन्हें वह पुस्तक भेजने को लिखा गया था' और 'मुझे यह बात बतलाने को कहा गया था'। इस प्रकार वाक्यों में से दो-दो

'को' निकल जाते हैं और वे हलके और सुंदर हो जाते हैं। 'उन लोगों को सेना हटाने को कहा गया' कितना भद्दा जान पड़ता है और 'उन लोगों से सेना हटाने के लिए कहा गया' कितना सुंदर है! 'इसके लिए आंदोलन का होना आवश्यक है' में 'का' बिलकुल व्यर्थ है।

अब ऐसे प्रयोग लीजिए, जिनमें आवश्यकता होने पर भी लोग कभी-कभी परसर्गों का प्रयोग नहीं करते। ऐसी भूलें प्रायः दो कारणों से होती हैं - एक तो कुछ स्थानिक बोलियों के प्रभाव के कारण और दूसरे कुछ विशेष प्रकार के वाक्यों की बनावट के कारण। 'आप अवश्य सुने होंगे' और 'वे हमसे कहे थे' सरीखे प्रयोग बिलकुल स्थानिक हैं और अशुद्ध समझे जाते हैं। होना चाहिए- 'आपने अवश्य सुना होगा' और 'उन्होंने हमसे कहा था'। वाक्यों की बनावट के कारण परसर्ग-संबंधी जो और भूलें होती हैं, उनके उदाहरण हैं-'वह खिल-खिलाकर हँस पड़ा और कहा' या 'वह दौड़ी हुई डाक्टर के पास गई और दवा माँगी'। होना चाहिए-'वह खिलखिलाकर हँस पड़ा और उसने कहा' और 'वह दौड़ी हुई डाक्टर के पास गई और उसने दवा माँगी'। यह ठीक है कि इस प्रकार की भूलों को हम परसर्ग की भूलें नहीं कह सकते; पर साथ ही हम इन्हें कोरी सर्वनामों की भूलें भी नहीं कह सकते। वास्तव में ये सर्वनामों के परसर्गयुक्त रूपों से संबंध रखनेवाली भूलें हैं और इसीलिए यहाँ इनका उल्लेख किया है।

प्रायः लोग जल्दी में लिख या बोल जाते हैं-'माता ने हँस दिया', 'उसने वहाँ से चल दिया', आदि। इस प्रकार की भूलें उन्हीं लोगों से होती हैं, जो यह नहीं जानते कि 'ने' का प्रयोग कहाँ होना चाहिए और कहाँ नहीं। 'ने' का प्रयोग भूतकाल में और केवल सकर्मक क्रियाओं के साथ होता है। वर्तमान या भविष्य काल में अथवा सकर्मक क्रियाओं के साथ नहीं होता। ऊपर के उदाहरणों में काल तो भूत अवश्य है, पर क्रियाएँ सकर्मक नहीं बल्कि अकर्मक हैं और इसीलिए उक्त वाक्य अशुद्ध है। होना चाहिए-'माता हँस पड़ी' और 'वह वहाँ से चल दिया'। यहाँ हम यह भी बतला देना चाहते हैं, कि 'देना' आदि क्रियाएँ सकर्मक होने पर भी जब अकर्मक संयोज्य क्रियाओं के साथ संयुक्त क्रिया के रूप में आती हैं, तब उनका मान भी अकर्मक क्रियाओं के समान होता है।

प्रायः लोग केवल असावधानता के कारण ही परसर्ग-संबंधी बड़ी-बड़ी

भूलें कर जाते हैं और कभी-कभी तो ऐसी भूलें कर जाते हैं जिनके कारण वाक्य के अर्थ या भाव में बहुत अंतर पड़ जाता या पड़ सकता है, जैसे-'वे हर साल समुद्र में सैर करने जाते थे', 'लारी पुल में गिर पड़ी' और 'वह घड़ा लेकर नदी में पानी भरने गईं'। 'समुद्र में सैर करने जाते थे' का तो यही अर्थ होगा कि 'समुद्र के जल के भीतरी भाग में सैर करने जाते थे'; पर है यह बात वास्तविकता से बहुत दूर। इसलिए वाक्य का रूप होना चाहिए - '...वे समुद्र की सैर करने जाते थे'। 'लारी पुल में गिर पड़ी' - इसका अर्थ यह होगा कि लारी ऊपर आकाश या अधर में थी और वहाँ से वह नीचे पुल में गिरी। इसलिए या तो होना चाहिए-'लारी पुल पर गिर पड़ी' या 'लारी पुल से गिर पड़ी'। इसी प्रकार 'नदी में पानी भरने जाती थी' का अर्थ यह होगा कि वह पानी किसी दूसरी जगह से लाकर नदी में भरती थी अथवा वह पानी भरने के लिए नदी के भीतरी भाग में जाती थी। इसलिए होना चाहिए-'वह घड़ा लेकर नदी का (अथवा 'से' या 'पर') पानी भरने जाती थी'। 'लोग इस फूल को माला बनाकर पहनते हैं' का तो सीधा-सादा अर्थ यही होगा कि लोग स्वयं इस फूल को माला का रूप देते हैं। इसलिए होना चाहिए-'लोग इसके फूलों की माला बनाकर पहनते हैं'।

अंत में हम परसर्ग-संबंधी एक और प्रकार की ऐसी भूल का भी उल्लेख कर देना आवश्यक समझते हैं, जो आज-कल प्राय: समाचार-पत्रों आदि में दिखाई देती है। यों बोल-चाल में हम कभी यह नहीं कहते-'भाई आपके की' या 'पुस्तक आपकी में' आदि। हम सदा 'आपके भाई की' या 'आपकी पुस्तक में' ही लिखते और बोलते हैं। इसका आशय यह है कि परसर्ग सदा संज्ञाओं और सर्वनामों के साथ ही रहते हैं, उनसे दूर नहीं रहते। फिर भी कुछ लोग लिख जाते हैं-'उसी आदमी, जो आपके पास जाएगा, को यह पुस्तक दे दीजिएगा' और 'उसी स्थान, जहाँ आप मुझे मिले थे, पर यह घटना हुई थी'। ऐसा नहीं होना चाहिए। ऐसे वाक्यों में 'आदमी' के तुरंत बाद 'को' और 'स्थान' के तुरंत बाद 'पर' होना चाहिए।

15

निबंध

साहित्य या जीवन से संबंध रखनेवाले किसी विषय पर अपने जो विचार, एक साधारण लेख के रूप में, प्रकट किए जाते हैं, उन्हें 'निबंध' कहते हैं। निबंध किसी ऊँचे दरजे के विषयों पर भी हो सकते हैं और बहुत बड़े भी हो सकते हैं; पर साधारणत: विद्यार्थियों की दृष्टि से हम यह कह सकते हैं कि सब लोगों या बहुत-से लोगों से संबंध रखने वाले किसी विषय पर सबके समझने योग्य जो बातें अपने अनुभव या जानकारी के आधार पर संक्षेप में लिखी जाती हैं, उन्हीं को 'निबंध' कहते हैं।

विद्यार्थियों को पाठशालाओं में पढ़ने के समय भी और परीक्षा के समय भी अपने मन से किसी विषय पर कुछ लिखने के लिए कहा जाता है। उन्हें कोई एक-दो विषय बतला दिए जाते हैं और उन्हीं विषयों पर उन्हें अपने विचार निबंध के रूप में लिखने पड़ते हैं। यह विषय किसी मेले, नगर या त्यौहार का वर्णन भी हो सकता है; किसी यात्रा या चढ़ाई का विवरण भी हो सकता है; किसी पशु, पक्षी या वस्तु का कथन भी हो सकता है और किसी बात की भलाई-बुराई या हानि-लाभ का विवेचन भी हो सकता है। मतलब यह कि बालकों और विद्यार्थियों के लिखने के लिए निबंध के विषय सैकड़ों और हजारों हो सकते हैं।

पाठशाला में पढ़ने के समय और परीक्षा देने के समय भी विद्यार्थियों के लिए निंबध लिखने का समय थोड़ा ही होता है। इसलिए उनसे ऐसे ही विषयों पर निबंध लिखने के लिए कहा जाता है, जिनसे उनका अच्छी तरह परिचय होता है। कभी-कभी ऐसे दो-चार विषय भी बतला दिए जाते हैं और उनमें से किसी एक विषय पर निबंध लिखने के लिए कहा जाता है। विद्यार्थियों को उतने

ही समय में सब बातें सोचनी भी पड़ती हैं और लिखनी भी। पर हाँ, जब विद्यार्थी अपने मन से किसी विषय पर निबंध लिखना चाहता है, और उसके लिए समय का कोई बंधन नहीं होता, तब उसे अपने मित्रों या बड़ों से पूछने या ग्रंथों आदि से सहायता लेने का भी समय मिल जाता है। पर परीक्षाओं में तो विद्यार्थियों को बहुत ही थोड़े समय में और बिना किसी सहायता लिए निबंध लिखना पड़ता है।

चाहे पाठशाला या परीक्षा-गृह में बैठकर थोड़े समय में निबंध लिखना पड़े, चाहे घर में बैठकर पर्याप्त समय में, पर दोनों अवस्थाओं में पहले उस विषय पर अच्छी तरह विचार कर लेना चाहिए, जिसपर निबंध लिखना हो। उस विषय से संबंध रखने वाली जितनी बातें मालूम हों, वे सब अपने सामने रखकर उनका एक अच्छा-सा सिलसिला बैठा लेना चाहिए। इससे निबंध सुंदर भी हो जाता है और उसे लिखने में समय भी कम लगता है। यदि ऐसा न किया जाएगा तो बार-बार उसमें काट-छाँट करनी पड़ेगी और वह भद्दा हो जाएगा। समय जो अधिक लगेगा, वह अलग।

निबंध लिखने के लिए पहली आवश्यकता ज्ञान की होती है। यह ज्ञान आस-पास की सब चीजों को ध्यान से देखने, सब तरह के लोगों से बातचीत करने और सब तरह की पुस्तकें पढ़ने से प्राप्त होता है। कभी-कभी कुछ विद्यार्थी किसी पुस्तक के दो-चार पन्नों में पढ़ी हुई बातें ही जैसे-तैसे लिखकर अपना निबंध तैयार कर लेते हैं। यह आदत बहुत बुरी है। इससे निबंध तो खराब होता ही है, अच्छे निबंध लिखने का अभ्यास भी नहीं हो पाता। इसलिए निबंध लिखने में सब तरह से और सब प्रकार से प्राप्त किए हुए ज्ञान का सहारा लेना चाहिए। यह ज्ञान तभी प्राप्त होता है, जब इस तरह की पढ़ी और सुनी हुई बातें अच्छी तरह मन में समझ ली जाए--सब प्रकार के विचार अपने मन में इकट्ठे कर लिए जाएँ। और तब दूसरों से सुने और किताबों में पढ़े हुए वे विचार अपने शब्दों में और अपने ढंग से लिखे जाने चाहिए। तभी निबंध अच्छा और सुंदर होता है।

जो अच्छी बातें सामने आएँ, वे सब विषयों के अनुसार अलग-अलग करके लिखते चलना चाहिए। साधारण बातें तो अपनी ही भाषा में लिखी जानी चाहिए; अधिक महत्त्व की बातें अपने मूल रूप में लिखी जानी चाहिए और उनके अंत में यह भी लिख देना चाहिए कि ये बातें किस पुस्तक की अथवा किस विद्वान की हैं। अवसर पड़ने पर इस प्रकार की बातें उद्धरण के रूप में

अपना पक्ष या मत ठीक सिद्ध करने के लिए दी जा सकती हैं। इस तरह की बातें लिखते चलने से कई लाभ होते हैं। एक तो लिखने का अभ्यास बढ़ता है। दूसरे, एक बार लिखी जाने पर वे बातें अधिक समय तक याद रहती हैं। तीसरे, इस तरह की बातें ढूँढ़ने का शौक पैदा होता है और चौथे, काम पड़ने पर ऐसी बातों से निबंध लिखने में बहुत सहायता मिलती है।

निबंध लिखने से पहले उसके विषय की मुख्य-मुख्य बातें अलग-अलग विभागों में बाँट लेनी चाहिए और उनके शीर्षक बना लेने चाहिए। इससे यह लाभ होता है कि आवश्यक बातें छूटने नहीं पातीं और यदि ध्यान रखा जाए तो व्यर्थ की बातें आने भी नहीं पातीं। इससे एक और लाभ होता है। वह यह कि विषय के सब अंगों या विभागों पर ठीक तरह से दृष्टि रहती है। यह नहीं होता कि किसी अंग या विभाग पर तो बहुत-सी बातें लिखी जाएँ और किसी अंग या विभाग पर बहुत ही थोड़ी; अथवा अनावश्यक अंग पर बहुत और आवश्यक अंग पर कम। सब बातें ठीक क्रम से और जितनी चाहिए, उतनी ही आती हैं। उन अंगों या विषयों की उपयोगिता और आवश्यकता पर ठीक और पूरा ध्यान रहता है और सहज में यह समझ में आ जाता है कि किस अंग या विभाग पर कितना लिखना चाहिए। इस प्रकार निबंध हर तरह से सुंदर, सुडौल और एकरस हो जाता है।

जिस विषय पर निबंध लिखना हो, उसके संबंध की सब बातें पहले अच्छी तरह मन में समझ और बैठा लेनी चाहिए और तब वही बातें लिखनी चाहिए, जो उस विषय से संबंध रखती हों। यदि किसी मेले का वर्णन करने को कहा जाए, तो निबंध में मेले के संबंध की ही मुख्य-मुख्य बातें होनी चाहिए। मेले में जाने या वहाँ से लौटने के समय रास्ते में जो बातें हुई हों, या तो उनका वर्णन होना ही नहीं चाहिए, या बहुत ही संक्षेप में होना चाहिए। मेले में अगर कोई लड़ाई-झगड़ा हो गया हो तो सारा निबंध उस झगड़े के वर्णन से ही भरा हुआ नहीं होना चाहिए। मुख्य ध्यान अपने विषय पर ही रहना चाहिए, इधर-उधर की बातों पर नहीं। यदि इधर-उधर की कुछ बातें लानी ही पड़ें, तो वे बहुत थोड़ी होनी चाहिए।

हर काम या चीज के तीन मुख्य अंग होते हैं–आरंभ, मध्य और अंत। निबंध में भी ये तीनों बातें होती हैं और इसका ठीक-ठीक ध्यान रखना चाहिए। निबंध के आरंभ में वे बातें होनी चाहिए, जिनसे पढ़नेवाले को उस विषय का

साधारण परिचय हो। उसे आरंभ में ही यह मालूम हो जाना चाहिए कि निबंध लिखनेवाले का उद्देश्य क्या है। उस विषय से संबंध रखनेवाली जितनी बातें मन में हों, वे सब आरंभ में ही एक दम से और एक साथ नहीं रख दी जानी चाहिए। ऐसी महत्त्व की बातें मध्य के लिए बचा रखनी चाहिए। यदि ऐसा न किया जाएगा तो मध्य और अंत दोनों भद्दे हो जाएँगे।

निबंध का मध्य भाग ही सबसे अधिक महत्त्व का होता है और मुख्य-मुख्य बातें उसी में होनी चाहिए। अच्छे-अच्छे तथ्य, उदाहरण और विचार निबंध के मध्य में ही रहने चाहिए। ये सब बातें, जहाँ तक हो सके, मनोरंजक रूप में और सहज भाषा में लिखनी चाहिए। न तो अपने विषय से दूर जाना चाहिए, न निबंध में ऐसी बातें भरनी चाहिए, जिनसे पढ़नेवाले का जी ऊब जाए। एक ही तरह की बहुत-सी बातें एक साथ कह जाने के बदले कई तरह की थोड़ी-थोड़ी बातें कहना कहीं अच्छा होता है। यदि निबंध का विषय इतिहास, भूगोल या विज्ञान आदि से संबद्ध हो तो उसमें अंकों, तिथियों आदि की भरमार नहीं होनी चाहिए। सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि निबंध कुछ खास तरह के लोगों के लिए नहीं, बल्कि सभी तरह के लोगों के लिए होते हैं।

यदि निबंध का आरंभ ठीक तरह से हो और उसके मध्य का अच्छी तरह से निर्वाह हो जाए तो उसका अंत करना विशेष कठिन नहीं होता। अंत में तो सब बातों के सारांश या निचोड़ के रूप में दो-चार बातें कह देने से ही काम चल जाता है। कभी-कभी तो एक दो वाक्यों में ही निबंध अच्छी तरह समाप्त किया जा सकता है। पर हाँ, वह अंत ऐसा होना चाहिए जो देखने में बिलकुल स्वाभाविक जान पड़े, जबरदस्ती ऊपर से लादा हुआ न हो। ऐसा नहीं होना चाहिए, जिससे यह जान पड़े कि निबंध बहुत जल्दी में पूरा किया गया है। ऐसा नहीं लगना चाहिए कि लिखने वाले के मन में इस विषय के विचारों का टोटा हो गया है या वह किसी तरह की लाचारी की हालत में पड़कर समाप्त कर रहा है; बल्कि ऐसा जान पड़ना चाहिए कि लिखने वाले ने सब बातें ठीक तरह से कह दी हैं और अब वह स्वयं इसका अंत कर रहा है।

कुछ लोग तो थोड़ा-थोड़ा लिखते हैं और बीच-बीच में उसे दोहराते भी चलते हैं और कुछ लोग सारा निबंध लिख चुकने के बाद उसे आदि से अंत तक एकसाथ दोहराते हैं। दोनों ही रास्ते ठीक हो सकते हैं। इनमें से कोई एक रास्ता अच्छा और दूसरा खराब नहीं कहा जा सकता। जो कुछ लिखा जाए, उसे

दोहराने की आवश्यकता तो होती ही है, इसलिए लिखा हुआ निबंध दोहराया भी जाता है। पर यह दोहराने का काम ऐसा नहीं होना चाहिए कि उसमें जगह-जगह काट-छाँट हो और इतनी काट-छाँट हो कि फिर से लिखना पड़े। प्रायः परीक्षाओं के अवसर पर विद्यार्थियों के पास इतना समय नहीं होता कि निबंध एक बार लिखने के बाद फिर से लिखा जा सके। इसलिए पहले लिखते समय ही खूब सोच-समझकर कलम चलानी चाहिए, जिससे बाद में अधिक काट-छाँट की नौबत न आए। बाद में तो एक बार आदि से अंत तक पढ़ जाने से और आवश्यकता हो तो कहीं-कहीं कुछ घटाने-बढ़ाने से ही काम चल जाए।

निबंधों के आदि और अंत महत्त्व के तो अवश्य होते हैं, पर उनके संबंध में कोई विशेष बात बतलाने की आवश्यकता नहीं है। निबंधों का सबसे अधिक महत्त्व का अंश बीच का ही होता है, क्योंकि विषय का सारा विवेचन उसी में रहता है। यह विवेचन कई प्रकार का हो सकता है। किसी निबंध में किसी विषय का वर्णन मात्र हो सकता है, किसी में घटना आदि के संबंध का कुछ कथन हो सकता है और किसी में तर्क के आधार पर किसी मत की पुष्टि या सिद्धि हो सकती है। इस दृष्टि से निबंध साधारणतः चार प्रकार के हो सकते हैं— वर्णनात्मक, कथात्मक, विवेचनात्मक और तार्किक। यहाँ हम इन चारों प्रकार के निबंधों के संबंध में कुछ मुख्य बातें बतलाना चाहते हैं।

हम आँखों से जो कुछ देखते या कानों से जो कुछ सुनते हैं, वह जब हम अपने शब्दों में प्रकट करते हैं, तब उसे वर्णन करना कहते हैं। इस प्रकार की बातें जिन निबंधों में हों, वे वर्णनात्मक कहलाते हैं। गौ या घोड़े का वर्णन अथवा रेलगाड़ी या बरात का वर्णन जिस निबंध में हो, वह वर्णनात्मक निबंध कहलाएगा। पर वर्णन किसी नगर का भी हो सकता है और किसी ऐसे भूमिखंड का भी जिसमें कुछ मैदान भी हों, कुछ पहाड़ भी हों, एक-दो नदियाँ या नाले भी हों, कुछ जंगल भी हों और कुछ खेत या बस्तियाँ भी हों। ऐसी चीजों का वर्णन, जिनमें कई तरह की दूसरी चीजें भी मिली हों, बहुत कठिन होता है। ऐसी अवस्था में पहले उस सारी चीज के स्वरूप का ऐसा वर्णन करना चाहिए, जिससे पढ़नेवालों को उसके आकार-प्रकार आदि का ठीक ज्ञान हो सके। फिर मुख्य-मुख्य अंगों का अलग-अलग वर्णन होना चाहिए। अगर उस वर्णन में सवेरे, संध्या या चाँदनी रात का वर्णन अथवा किसी विशेष ऋतु की शोभा का वर्णन भी मिलाया जा सके तो और भी अच्छा हो। यदि उसके रूप के साथ-

साथ रंग का भी और उसमें होनेवाले पदार्थों या जीवों का भी वर्णन हो सके तो निबंध की सुंदरता और भी बढ़ जाती है। यदि उसे देखने पर मन में उत्पन्न होनेवाले भावों या विचारों का भी कुछ उल्लेख हो सके, तो फिर कहना ही क्या है!

यदि किसी व्यक्ति या जाति का वर्णन करना हो, तो उसके रूप-रंग, शरीर की गठन, आचार-विचार, स्वभाव, रीति-रिवाज, रहन-सहन आदि का वर्णन करना चाहिए। किसी नगर का वर्णन करना हो तो उसके बाजारों, गलियों, रोजगारों, त्यौहारों और मेलों का कुछ जिक्र करना चाहिए। किसी महल का वर्णन करना हो तो उसके कमरों, आँगनों आदि के सिवा उसमें की चित्रकारी या चारों ओर लगे हुए बाग-बगीचे आदि का भी वर्णन करना चाहिए और यदि वह किसी नदी या ताल के किनारे, किसी पहाड़ी के नीचे या किसी टेकरी के ऊपर हो तो उसका भी वर्णन करना चाहिए। मतलब यह कि जिस चीज का वर्णन करना हो, उसके अंगों का तो जिक्र होना ही चाहिए, आस-पास की जिन चीजों से उसकी शोभा बढ़ती हो या जिन चीजों की उससे शोभा घटती हो, उनका भी कुछ जिक्र होना चाहिए।

जब हम कुछ घटनाओं का एक सिलसिले से जिक्र करते हैं, तब मानो हम किसी विषय का कथन मात्र करते हैं। जिन निबंधों में इस तरह की बातें होती हैं, वे निबंध कथात्मक कहे जा सकते हैं। ऐसे कथनों में मुख्यत: इस बात पर ध्यान रखना पड़ता है कि कौन-सी घटना कब हुई। जो घटना पहले हुई हो, उसका कथन पहले, जो बीच में हुई हो, उसका बीच में और जो अंत में हुई हो उसका अंत में ही कथन होना चाहिए। उदाहरण के लिए बरात के कथन में ऐसा नहीं करना चाहिए कि लड़कीवाले के घर पहुँचने का वर्णन तो पहले हो, रास्ते का वर्णन अंत में हो और लड़केवाले के चलने का वर्णन बीच में हो; या अदालत में अपराधी को मिलनेवाली सजा का वर्णन तो पहले हो, अदालत में उसके लाए जाने का वर्णन बीच में हो और उसके किए हुए अपराध या पकड़े जाने का वर्णन अंत में हो।

कभी-कभी ऐसी बातों का कथन करना पड़ता है, जिनमें दो घटनाएँ एक में मिली हुई होती हैं। ऐसी अवस्था में दोनों घटनाओं की बात, जहाँ तक हो सके, अलग-अलग बतलाई जानी चाहिए और दोनों घटनाओं का मेल ऐसी सुंदरता से दिखलाना चाहिए कि पढ़नेवाले को कहीं से खटक न मालूम हो। जिन कारणों से अथवा जिन अवस्थाओं में वे घटनाएँ हुई हों, उनका भी कुछ

उल्लेख होना चाहिए। यदि बीच में कोई ऐसी बात आ सके, जिससे उन घटनाओं का रहस्य सहज में समझा जा सके तो और भी अच्छा है। ऐसा जान पड़ना चाहिए कि सारा कथन ऐसे व्यक्ति का है, जो दूर से खड़ा होकर दर्शक की तरह देख रहा है और सब बातें अच्छी तरह समझ रहा है। यदि किसी सुनी या पढ़ी हुई घटना का वर्णन करना हो तो वह भी ऐसा होना चाहिए कि मानो सब बातें अपनी आँखों से देखी हुई हैं।

विवेचन का सीधा-सादा और पहला अर्थ है—किसी बात की छान-बीन या जाँच-पड़ताल करना। जब हम निबंध में इस बात का विचार करते हैं कि कौन-सी बात ठीक है और कौन-सी नहीं है, तब हम उस विषय का विवेचन करते हैं। इसी लिए ऐसे निबंध 'विवेचनात्मक' कहलाते हैं। प्राय: विद्यार्थियों को ऐसे निबंध भी लिखने पड़ते हैं, जिनमें किसी बात के दोष और गुण दिखलाने पड़ते हैं या किसी बात के पक्ष और विपक्ष की सब बातें बतलानी पड़ती हैं और अंत में यह निर्णय भी करना पड़ता है कि उनमें से कौन-सा पक्ष ठीक है और कौन-सा ठीक नहीं है। ऐसे अवसर पर दोनों अंगों या पक्षों का पूरा-पूरा विचार करना चाहिए और किसी प्रकार का पक्षपात नहीं करना चाहिए। जो बात ठीक जँचे, वह अच्छी युक्तियों से ठीक सिद्ध करनी चाहिए; और जो बात ठीक न जँचे, उसका भी वैसी ही युक्तियों से खंडन करना चाहिए। विवेचन ऐसा होना चाहिए, जिसे देखकर पढ़नेवाले हमारी बात मान लें।

पर विवेचन का एक और अर्थ होता है—व्याख्या। कोई विषय लेकर विस्तार से उसकी सब बातें समझाना भी विवेचन कहलाता है। ज्ञान और विज्ञान से संबंध रखनेवाले विषयों पर जो कुछ लिखा जाता है, वह इसी विवेचन में आता है। हम यह भी बतला सकते हैं कि लेख किस प्रकार लिखना चाहिए और यह भी बतला सकते हैं कि आकाश में सूर्य, चंद्रमा, पृथ्वी आदि ग्रह कैसे और कहाँ रहते और किस प्रकार चक्कर काटते हैं। हम यह भी बतला सकते हैं कि किन-किन देशों में कैसे-कैसे पेड़-पौधे उगते हैं और कैसे-कैसे जीव-जंतु रहते हैं।

इस प्रकार के विवेचनात्मक निबंध लिखने के लिए विषय के बहुत अधिक ज्ञान की भी आवश्यकता होती है और लिखने की योग्यता की भी। ऐसा विवेचन, जहाँ तक हो सके, सरल और स्पष्ट होना चाहिए और उसमें उस विषय से संबंध रखनेवाले काम की और जानने योग्य सभी बातें आ जानी

चाहिए। ऐसे विवेचनों में हम दूसरों के विचार भी रख सकते हैं और यह भी बतला सकते हैं कि वे विचार कहाँ तक ठीक हैं, या कहाँ तक ठीक नहीं हैं।

हम ऊपर कह आए हैं कि कभी-कभी हमें किसी बात के दोषों और गुणों का भी विवेचन करना पड़ता है; पर कभी-कभी हमें एक ही पक्ष ग्रहण करना पड़ता है। कभी हमें किसी बात के संबंध में सिद्ध करना पड़ता है कि वह ऐसी ही है; और किसी प्रकार की नहीं है। जिन निबंधों में कोई एक ही पक्ष लेना पड़ता है, वे तार्किक कहलाते हैं। हमसे कहा जा सकता है कि यह सिद्ध करो कि हिंदी ही भारत की राष्ट्रभाषा है; पृथ्वी सदा सूर्य की परिक्रमा करती रहती है; या सब प्रकार की उन्नति करने के लिए पहले सच्चरित्र होना चाहिए। इस प्रकार के निबंध तार्किक कहलाते हैं। तार्किक निबंध लिखना बहुत कठिन होता है। इसमें अनेक प्रकार के प्रमाणों की आवश्यकता होती है और कुछ युक्तियाँ भी देनी पड़ती हैं। हम जो कुछ कहते हैं, उसके विरोध में जो बातें कही जाती हैं, उन पर भी हमें विचार करना पड़ता है और अंत में उनका खंडन भी करना पड़ता है। ऐसे अवसरों पर विरोधियों की बातें हँसी में उड़ाने से या उन पर ध्यान न देने से काम नहीं चल सकता। इसलिए हमें अपना पक्ष ऐसे ढंग से दूसरों के सामने रखना चाहिए कि वे हमारी बात पूरी तरह से ठीक मान लें।

अच्छे निबंध लिखने के लिए पहले अच्छे निबंध पढ़ना आवश्यक होता है। निबंध लिखने का अभ्यास करने के लिए पहले कोई अच्छा निबंध पढ़ जाना चाहिए और तब उसे अपने मन से और अपने शब्दों में लिखकर उसे मूल निबंध से मिलाना चाहिए। अपने निबंध में जहाँ कमी दिखाई पड़े, वहाँ वह पूरी करनी चाहिए। और जहाँ दोष दिखाई पड़े, वहाँ उसे दूर करना चाहिए। इसके लिए पहले वे विषय लेने चाहिए, जिनसे अपना प्रत्यक्ष संबंध हो; या ऐसी घटनाएँ आदि लेनी चाहिए; जो स्वयं आँखों-देखी हों। दूसरों से सुने-सुनाए या पुस्तकों में पढ़े हुए विषयों पर कुछ लिखने की अपेक्षा अपने परिचित विषयों पर कुछ लिखना अधिक सहज होता है। ऐसे निबंध अपने मित्रों या बड़ों आदि को लिखे हुए पत्रों के रूप में भी हो सकते हैं और उनके कई खंड या विभाग भी हो सकते हैं।

निबंध लिखने का अभ्यास एक और प्रकार से किया जा सकता है। कोई अच्छी कहानी, नाटक या उपन्यास पढ़कर उसके किसी एक पात्र या घटना के संबंध की सब बातें अपनी स्मरणशक्ति के आधार पर लिखी जा सकती हैं। आगे

चलकर उसी ढंग पर अपने किसी परिचित व्यक्ति के विचार, चरित्र या व्यवहार आदि भी लिखे जा सकते हैं, अथवा किसी छोटी घटना का वर्णन सुनकर उसे विस्तार से भी लिखा जा सकता है। इससे कल्पना करने की शक्ति बढ़ती है। विशेषतः यदि इतिहास की कोई घटना लेकर और उसे कुछ बढ़ाकर कोई अच्छी खबर नए ढंग से उठाकर लिखने का प्रयत्न किया जाए तो और भी अधिक लाभ हो सकता है।

अभ्यास के लिए नए विद्यार्थी प्रायः नीचे लिखे विषयों पर निबंध लिख सकते हैं :

- नदी के किनारे का दृश्य
- सज्जनता का व्यवहार
- व्यायाम से लाभ
- त्यौहार और मेले
- महापुरुषों के कार्य
- मन के कार्य
- देहाती जीवन
- बड़ों का आदर
- लड़ाई-झगड़े से हानि
- स्वास्थ्य-रक्षा
- अनाज और फल
- समझदारी और मूर्खता
- सूर्य, चंद्रमा और तारे
- जीवन पर साहित्य का प्रभाव
- सदाचार का प्रभाव
- आज-कल की सभ्यता
- घर के पालतू पशु-पक्षी
- अपने रहने का घर
- हमारी जन्मभूमि
- नगर का सुधार
- प्रसन्न रहने के उपाय
- पुस्तकालयों से लाभ
- रोगों से बचने के उपाय
- अच्छे चरित्र का महत्त्व
- कोई धार्मिक स्थल
- मिथ्या विश्वास
- दूध देने वाले जानकर
- ऐतिहासिक कहानियाँ
- नदियों से लाभ
- किसी पुस्तक की विशेषताएँ
- अनुकरण के योग्य कार्य
- बात-चीत करने का ढंग

◆◆◆

लोकभारती प्रकाशन
इलाहाबाद नयी दिल्ली पटना
ISBN : 978-81-8031-129-1